भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत

# भारत की वैज्ञानिक विभूतियाँ

इन्द्रजीत लाल

## शोध सम्बन्धी सस्था की स्थापना

उनके जीवन के अतिम दस वर्ष लखनऊ मे वनस्पति विज्ञान की सस्था स्थापित करने मे समर्पित हुए। कई वर्षो पूर्व 1939 ई मे प्राचीन वनस्पतियो के कुछ बडे-बडे वैज्ञानिको की एक कमेटी स्थापित की गई ताकि वे इस विषय पर स्थान-स्थान पर होने वाले शोध-कार्यो मे तालमेल स्थापित कर सके और उनकी रिपोर्ट जन-सामान्य तक पहुचा सके। इसीलिए 19 मई 1946 ई को वनस्पति विज्ञान की एक सोसाइटी स्थापित की गई। एक ट्रस्ट भी बनाया गया जिसका उद्देश्य यह था कि विस्तृत और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की एक शोध-सम्बन्धी सस्था स्थापित की जाए जिसके अन्तर्गत एक म्यूजियम, एक अध्ययन कक्ष, एक प्रयोगशाला, रहने के लिए मकानो और कुछ अन्य भवनो के निर्माण का लक्ष्य रखा जाए। एक विषय पर निर्वाचन समिति सगठित की जाए जिसका मानद अध्यक्ष प्रो साहनी नियुक्त किए गये। चारों ओर से धन की वर्षा प्रारम्भ हो गई। इम्पीरियल केमिकल इन्डस्ट्रीज और बर्माशील कम्पनियो ने शोध कार्यो के लिए दो छात्रवृत्तिया जारी कीं।

वनस्पति विज्ञान की यह सस्था जिसे स्थापित करने के लिए डा साहनी ने इतनी कडी मेहनत की थी, जिदगी भर उनका मिशन बनी रही, बल्कि इस ढग की सस्था को खोलने का विचार चौथे दशक मे ही उनके मस्तिष्क मे जन्म ले चुका था। अब उन्होने इस सस्था की आधारशिला तो रख दी थी, किंतु उसे फलते-फूलते देखना उनके भाग्य मे नहीं था। इसलिए इस सस्था को मजबूत आधार पर खडा करने और इसे अतर्राष्ट्रीय स्तर की सस्था बनाने का कार्य उनकी पत्नी सावित्री साहनी के लिए छोड दिया गया। उन्होने यह प्रशसनीय कार्य किया। यह सस्था आज जिस रग-रूप मे है, वह अधिकतर उन्हीं के प्रयासो की बदौलत है जो अनेक कठिनाइयो के बावजूद अपनी कोशिशो के बलबूते पर इसे यहा तक पहुचा पाई। प्रो साहनी ने उन्हे सम्बोधित करते हुए आखिरी शब्द यू कहे थे—"सस्था की देखभाल कीजिएगा।"

बहुत कम लोगो को यह मालूम है कि प्रो साहनी कला के बहुत शौकीन थे। उन्हे साज-सगीत से भी लगाव था। वे सितार और वायलिन अच्छी तरह बजा लेते थे। उनका एक शौक ड्राइग करना और मिट्टी के मॉडल बनाना भी था। जब भी उन्हें अवकाश का समय मिलता वे शतरज की एकाध बाजी खेल लेते। खेल-कूद के वे बचपन से ही शौकीन थे और यह शौक उनके अन्तिम दिनो तक विद्यमान रहा। स्कूल और कालेजो मे वे टेनिस और हॉकी के खिलाडी भी रहे, विशेषरूप से हॉकी के मैचो में उन्होने कई बार अपनी टीम का नेतृत्व किया। कैम्ब्रिज में टेनिस के खेल मे वे भारतीय टीम के प्रतिनिधि थे और आक्सफोर्ड के विरुद्ध खेले।

प्रो साहनी बुनियादी तौर पर प्राचीन वनस्पतियों और भूमि-विज्ञान के वैज्ञानिक थे। उनका शौक बहुत व्यापक था। वे अन्य कई विषयो जैसे-प्राचीन सिक्को का अध्ययन मे भी दिलचस्पी रखते थे। उन्होने अपने जीवन में शोध कार्य इतना अधिक कर दिखाया कि उसका उल्लेख इन सीमित पृष्ठो मे नहीं किया जा सकता। उन्होंने जिस-जिस विषय पर शोध के लिए हाथ बढाया, उन्हे भरपूर सफलता मिली। उनके शोध विज्ञान की दुनिया में उनका नाम सदैव अमर कर गये।

भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत

# भारत की वैज्ञानिक विभूतियाँ

इन्द्रजीत लाल

यह पुस्तक 'हमारे साइसदान' नाम से उर्दू मे N C E R T, नई दिल्ली द्वारा पुरस्कृत है। पाठको की माग पर यह हिन्दी मे प्रस्तुत है।

ISBN 81-87236-22-1

2003

मूल्य 100 00 रुपये

प्रकाशक गणपति प्रकाशन
4/32, सुभाष गली,
विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली–110032

मुद्रक बी के ऑफसैट, शाहदरा, दिल्ली 110032

# लेखक की ओर से

यदि ब्रह्मज्ञान ने 'आत्मा' को शाश्वत करार दिया है तो विज्ञान ने तत्व को नित्य बताया है। योग ने आत्मा की गहराइयो का पता लगाया तो विज्ञान ने तत्त्व की वास्तविकता और इसके भेदो की जानकारिया उपलब्ध कराई और हमे कभी असम्भव प्रतीत होने वाली चीजो को सम्भव बनाने की क्षमता प्रदान की। इसमें तनिक भी सदेह नहीं कि पिछले कुछ दशको मे विज्ञान और तकनीक तीव्र गति से आगे बढी है और यही कारण है कि आज विज्ञान और तकनीक हमारी जिदगी मे खूब बस गई है तथा आज हम विज्ञान के बारे मे उतने अजनबी और अनभिज्ञ नहीं रहे जितना कि पहले हुआ करते थे।

स्वतत्रता के पश्चात भारत मे राष्ट्र के विकास और खुशहाली के लिए कई योजनायें बनायी गयीं। ये योजनाये सामान्यत दो प्रकार की थीं—प्रथम, कृषि सम्बन्धी शोध व अन्वेषण तथा द्वितीय उद्योगो के क्षेत्र में अन्वेषण एवम् उन्नति की योजना। राष्ट्र के विकास के लिए भारत ने तकनीक और तकनीकी अन्वेषण पर पूरा जोर दिया। इस उद्देश्य के लिए अन्वेषण के क्षेत्र मे अनेक छोटी बडी सस्थाए खोली गई। कुछ वैज्ञानिक कार्य निजी सस्थाओ मे होता रहा और कुछ सरकारी सस्थाओ मे। इस प्रकार इस क्षेत्र मे दिन-प्रतिदिन नयी-नयी सम्भावनाए पैदा होती गई। प नेहरू (जो वैज्ञानिक आवश्यकताओं और उपलब्धियो से भलीभाति अवगत थे) के शब्दो मे - 'भविष्य विज्ञान के हाथो मे है और सिर्फ उन लोगो का हो सकता है जो विज्ञान से रिश्ता जोडते है।' पिछले कुछ वर्षो मे भारत ने विज्ञान से अपने रिश्ते को मजबूत किया है और भारत मे विज्ञान के क्षेत्र मे अनुकूल दृष्टिकोण उत्पन्न करने के लिए उचित वातावरण तैयार किया गया है।

विज्ञान और तकनीक के महत्त्व पर स्वर्गीय प्रधानमत्री श्रीमती इदिरा गाधी के शब्दो मे— "कोई देश उस समय तक सही मायने मे उन्नति नहीं कर सकता जब तक कि वह टेक्नोलॉजी मे पूरी गर्मजोशी से उन्नति न करे और आत्मनिर्भर न हो।" इसी दृष्टिकोण को ध्यान मे रखते हुए हमारी शोध सम्बन्धी सस्थाओ मे आज हजारो वैज्ञानिक कार्य कर रहे है।

वस्तुत ये वैज्ञानिक हमारे समाज के नायक है क्योकि ये वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा नजरिये को फैलाने मे बहुत प्रोत्साहन देते है। आधुनिक खोजो से जनता को लाभ उठाने का तरीका बताते है। उद्योगपतियो को टेक्नोलॉजी से लाभ उठाने का राज बताते है। सरकार की राष्ट्रीय

स्तर पर योजनाये बनाने मे सहायता करते है और इस तरह विज्ञान को उन्नति, खुशहाली और कामयाबी का साधन बनाते है। इस ढग के सामाजिक कार्यकर्त्ताओ मे सर सी वी रमन का नाम और काम रहती दुनिया तक स्मरण किया जायेगा। रमन ने अन्तराष्ट्रीय नोबल पुरस्कार प्राप्त किया। अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने उनकी खोज व विवेक की बहुत प्रशसा की क्योकि रमन का शोध दूसरे वैज्ञानिको के लिए भी बहुत सहायक सिद्ध हुआ।

भारत आज परमाणु ऊर्जा उत्पन्न करके, विश्व के महान देशो की पक्ति मे सम्मिलित हो गया है। होमी जहागीर भाभा ने परमाणु भट्टी की कल्पना भारत को दी और प नेहरू के निर्देश मे एटमी कमीशन की नींव पडी। यह डॉ भाभा की ही योजना थी कि आज ट्राम्बे के केन्द्र में कई हजार व्यक्ति बहुत निष्ठा व लगन से काम कर रहे है। भाभा ने परमाणु शक्ति की कल्पना को यथार्थ मे बदल कर दिखाया और इस तरह भारत में राष्ट्र-निर्माण की जमीन तैयार की। उनके शोध और नेतृत्व के बिना न्यूक्लीय काम-काज मे सफलता नहीं मिल पाती। नि सन्देह होमी जहागीर भाभा भारत के एक सफल और प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे।

इकबाल की पक्ति 'सितारो के आगे जहा और भी है' के राज को डॉ मेघनाथ साहा ने पूरी तरह समझा। उन्होंने खगोल विज्ञान, भौतिक विज्ञान और ज्योतिष विज्ञान के क्षेत्र मे ऐसा प्रशसनीय कार्य किया कि एक अतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सर चार्ल्स एटग्टन को कहना पडा कि एक विदेशी वैज्ञानिक के बाद इस विषय पर इतना अमूल्य शोध सैंकडो वर्षो पश्चात डॉ साहा के हाथों अस्तित्व मे आया है। साहा प्रकाश के वैज्ञानिक थे, प्रकाशित मस्तिष्क वाले व्यक्ति थे और विज्ञान के प्रकाश से अशिक्षा का अधेरा दूर करना चाहते थे।

डॉ जगदीश चन्द्र बसु विज्ञान के अग्रणी लोगों मे थे। वे बहुत प्रतिभाशाली, ईमानदार तथा दृढ विचारो वाले वैज्ञानिक थे। उन्होंने विभिन्न समस्याओ का हल तलाश किया और विपरीत परिस्थितियों का डट कर सामना किया। यू कहिए कि डा बसु ने वैज्ञानिको को इस ओर आकर्षित किया कि वे देश की आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए हिम्मत व धैर्य से काम लें। एक समीक्षक के शब्दो मे—''बसु का शोध अपने समय से बहुत आगे था और यह शोध इतना प्रशसनीय था कि उसका मीमाकन सीमित शब्दो मे सम्भव नहीं।''

आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय भारतीय रसायन के पिता कहे जाते है। उन्होने रसायन विज्ञान पर बहुत विस्तृत लेख लिखे और नवयुवको को शोध व तकनीक की ओर आकर्षित किया। उनका नाम व काम सदैव स्मरण किया जायेगा। भौतिकी के विषय पर डॉ सी वी रमन के शिष्य डॉ के एस कृष्णन भारतीय विज्ञान के क्षितिज पर एक चमकता हुआ सितारा सिद्ध हुए। उन्होने क्रिस्टल और धातुओ की प्रकृति पर बहुत शोध किया जो आज भी स्वर्णिम अक्षरो मे लिखने योग्य है।

जिन यूरोपीय वैज्ञानिको ने भारतीय साहित्य और विज्ञान को प्रेम-पूर्ण नजरो से देखा है, उनमें जे बी एस हाल्डेन का नाम बहुत प्रतिष्ठित है। उन्होने भारतीय विज्ञान को अपने ज्ञान व शोध से समृद्ध किया। उन्होने अपने जीवन के अन्तिम दिनों भारतीय नागरिकता स्वीकार कर ली और वैज्ञानिक काम-काज करते रहे। प नेहरू हाल्डेन की बहुत इज्जत

करते थे। हाल्डेन नये भारत के एक राष्ट्रीय निर्माणकर्त्ता थे। उनके विज्ञान पर लिखे जानकारीपूर्ण लेख आज भी अपना एक विशेष स्थान रखते है।

हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है। हमारी अर्थव्यवस्था और रोजी-रोटी गावो और खेतो से उभरती है। ऐसे वैज्ञानिक भी हुए है जिन्होने खेती-बाडी के विषय पर विशेषरूप से शोध किया है। डा बी पी पाल ने गुलाब के पौधों की नई किस्मों की खोज की है और डा स्वामीनाथन ने हरित क्रान्ति तथा गेहू की नई बौनी किस्मो को भारत मे कामयाब कर दिखाया। ऐसे वैज्ञानिको के शोध को कभी भुलाया नहीं जा सकता, बल्कि यह कहना सही होगा कि ऐसे वैज्ञानिक सदियो के उलटफेर के बाद पैदा होते है और हमारे राष्ट्र-निर्माता सिद्ध होते है।

ऐसे वैज्ञानिको के जीवन की दास्ताने बडी लगन, मेहनत, योग्यता, और सूझबूझ की दास्ताने है, जिनका ज्ञान हमे हिम्मत और लगन प्रदान करता है। उनके शोध व अन्वेषण का हमारे औद्योगिक, कृषि और सामाजिक जीवन पर बहुत लाभदायक प्रभाव पडता है और हम विज्ञान के कई नये पहलुओ से अवगत हो पाते है, लाभ उठा पाते है, अपने जीवन मे एक नयापन, खुलापन और उजाला अनुभव करते है। विज्ञान की क्या और क्यो को समझ पाते है और साथ-साथ कुछ काम की बाते भी जान पाते है।

प्रारम्भिक पृष्ठो मे भारतीय विज्ञान की एक सामान्य समीक्षा प्रस्तुत की गई है जिसकी पृष्ठभूमि मे यह भावना निहित है कि जिस भारत ने स्थापत्य कला, शिल्पकला मूर्तिकला, पेटिंग, सगीत और नृत्य को अतर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुचाया, उसी तरह हमारे राष्ट्र के विज्ञान का भी एक गौरवपूर्ण इतिहास और विकासक्रम है। मुझे विश्वास है कि मेरी यह पुस्तक पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

–इन्द्रजीत लाल

## सूची

# विज्ञान के बारे में

विज्ञान के बारे मे विस्तृत रूप से कुछ कहने से पूर्व यह बता देना आवश्यक है कि विज्ञान है क्या? विभिन्न व्याख्याकारो ने विज्ञान की भिन्न-भिन्न परिभाषाये प्रस्तुत की है। मुख्यत समीक्षको ने विज्ञान की परिभाषा उसकी सामाजिक समीक्षाओ के आधार पर की है। अधिक बेहतर यही होगा कि विज्ञान को उसके वास्तविक अर्थ म लिया जाये।

सामान्यत ज्ञान को ही विज्ञान कहते है या एक विशेष ज्ञान या जानकारियो के क्रम को विज्ञान कहते है जो हमे अनुभव और वैज्ञानिक तरीको के माध्यम से ज्ञात होता है। इन तरीको से जो तथ्य, नई जानकारिया या नई बाते प्राप्त की जाती है विज्ञान सिफ इनका समुच्चय नहीं है, बल्कि इसके कुछ अन्य पहलू भी है। इन तरीको से प्राप्त होने वाली जानकारी उस सीमा तक वैज्ञानिक नहीं कही जा सकती जब तक उन्हे एक प्रकार की तार्किक व्यवस्था से न जोड दिया जाये या प्राप्त तथ्यो की इस प्रकार व्याख्या न की जाये कि इनके तमाम सम्बन्ध उभर कर सामने आ जाये। एक अन्य सामान्य विचार है कि नतीजे तक पहुचना और नतीजो की व्याख्या करना, इन दोनो का नाम विज्ञान है। इसी व्याख्या को बर्टेड रसल ने इन शब्दों में व्यक्त किया है—"कारण और प्रभाव, तथा कारणो के ढाचे पर आधारित विश्व मे इस बात की आवश्यकता है कि अनुभवो को आपस मे अतर्सम्बन्धित किया जाये और पुन उन्हे एक तार्किक व्यवस्था से जोड दिया जाये।"

विज्ञान की परिभाषा के पश्चात इसके उद्देश्य का प्रश्न आता है। वास्तविकता की खोज विज्ञान का प्रमुख उद्देश्य है। फिर यह भी सत्य है कि मनुष्य की बहुत सी आवश्यकताओ पर विज्ञान अपना प्रभाव डाल सकता है और विज्ञान की प्रगति को मनुष्य की आवश्यकताये प्रभावित कर सकती है। यानि, दोनो के उपयोगी पहलुओ को इतना अधिक अनुभव किया जाने लगा है कि उपयोगिता ही विज्ञान का दूसरा नाम बन गया है। वास्तव मे विज्ञान की यह परिभाषा अधिक मान्य है कि विज्ञान किरदार और व्यवहार का एक ऐसा तत्र है जिसके माध्यम से मनुष्य अपने वातावरण पर विजय प्राप्त करता है।

कई वैज्ञानिको का विचार है कि मनुष्य की बढती हुई आवश्यकताये विज्ञान के प्रारम्भिक उद्देश्यो पर प्रभावी हो रही है। फलस्वरूप, आधुनिक युग के खोज व अन्वेषण सम्बन्धी कार्यो मे विज्ञान के उपयोगी पहलुओ पर बल दिया जा रहा है। प्राचीन समय मे

विज्ञान का कुछ अन्य अथ समझा जाता था। आदिकाल मे विज्ञान ने मनुष्य के जीवन के अधिकाश पहलुओ से अपना गहरा और विस्तृत सम्बन्ध पैदा कर लिया था जो इससे पहले कभी नहीं होता था। इसलिये आज विज्ञान का प्रभाव पहले से अधिक बढ गया है।

यह अनुचित होगा कि विज्ञान की सीमाऐ निश्चित करके उसे कुछ निश्चित सिद्धान्तो व नियमो मे कैद कर दिया जाये। विज्ञान की सीमा मे हर चीज समा जाने की पूरी सम्भावना हे। यह उचित होगा यदि विज्ञान का एक मात्र लक्ष्य सच्चाई की तलाश ठहराया जाये और उसे लाभदायक खोज तथा अन्वेषणो का माध्यम बनाया जाये। वास्तव मे यह सदेहास्पद है कि विज्ञान के लाभदायक और अन्वेषी पहलू एक दूसरे से अलग हो सकते है या नहीं। विज्ञान का प्रयोग विस्तृत और विश्वव्यापी हे, तथा विज्ञान उन लोगो के कार्य को बेकार नहीं ठहराता जो विज्ञान का उपयोग मानवीय आवश्यकताओ के लिए करना चाहते हें। दूसरी तरफ, विज्ञान की व्याख्या का तात्पर्य ऐसे लोगो के खिलाफ गलत व्यवहार से बचना है जिनकी मेहनत और अध्ययन सीधे किसी उद्देश्य या नतीजे तक नहीं पहुचती है।

शोध, अन्वेषण तथा अनुभव के लिए वैज्ञानिक जो तरीका प्रयोग मे लाता है उसे वैज्ञानिक तौर-तरीका कहा जाता है और उन्हीं के द्वारा वह जानकारी प्राप्त करता है। वैज्ञानिक की जानकारी के विभिन्न स्रोत विशेषत अनुभव और अन्वेषण होते है। भौतिकी ओर रसायन विशेषज्ञो के शोध सम्बन्धी कार्यो मे विशेष सावधानी से कार्य किया जाता है। ये अनुभव अधिकाश ठीक माप-तौल पर आधारित होते है। विज्ञान के कुछ भागो (जिन्हे प्राकृतिक इतिहास कहा जाता है) यानि वनस्पतियो तथा जीवो मे अधिकाशत पर्यवेक्षण पर निर्भर किया जाता है। इन विज्ञानो की उन्नति मे अनुभव का पर्याप्त हस्तक्षेप होता है और ऐसे ढग से प्राप्त जानकारी वैज्ञानिक खोज के स्तर तक पूर्ण होनी चाहिए।

वैज्ञानिक का दायित्व है कि वह ऐसी (उपरोक्त लिखित) जानकारियो की जाच करे और विज्ञान के दूसरे अन्वेषको के द्वारा प्राप्त जानकारियो के फल का सदर्भ ही दे। दूसरे, नये साक्ष्यो के माध्यम से उसे जो भी जानकारी उपलब्ध हो उसके प्रकाश मे इससे पूर्व की जानकारियो मे वाछित सुधार के लिए उसे सदैव प्रस्तुत रहना चाहिये। उल्लेखनीय है कि विज्ञान के सभी क्षेत्रो मे कोई व्यक्ति इतना पूर्ण नहीं हो सकता कि उसके विचारो को बिना किसी हेर-फेर के स्वीकार कर लिया जाये। यदि ऐसा किया भी जाता है तो एक लम्बी अवधि के लिए नहीं।

विज्ञान के एक विद्यार्थी को स्वतन्त्र रूप से शोध सम्बन्धी कार्य करने चाहिये क्योकि विज्ञान मात्र स्वतत्र माहौल मे ही फूलता-फलता है। वैज्ञानिक माध्यमो से जिन जानकारियो को जाचा परखा जाता है वही शोध की बेहतरीन सामग्री होती है।

वैज्ञानिक तरीको की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता जो किसी चीज की पूर्ण और वास्तविक जानकारी के लिए आवश्यक है, वह यह कि एक वैज्ञानिक को किसी पूर्वाग्रह या भावनाओ से बिल्कुल अलग होकर किसी निर्णय या निष्कर्ष पर पहुचना चाहिए। एक सतुलित वैज्ञानिक अपने शोध-कार्यो की व्याख्या मे पूर्वाग्रहो से बचने की कोशिश करता है या तटस्थ रहता है। वास्तविकता तक पहुचने के लिए यह भी आवश्यक है कि वैज्ञानिक को

केवल जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से शोध करना चाहिये, न कि अपनी कुछ पूर्वधारणाओं को सिद्ध करने के लिए। कई बार ऐसा होता है कि किसी अनुमानित चीज को सिद्ध करने के लिए ही तर्क ढूढे जाते है। किन्तु बुनियादी तौर पर वैज्ञानिक को व निष्कर्ष भी स्वीकार करन के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए जो पूर्णत उन पूर्वधारणाओ के विपरीत हो जो वह वर्षो से पालता आया है।

ये ह उन तौर-तरीको की कुछ विशेष बाते जो वैज्ञानिक प्रयोग म लाते है। यह कहना अधिक बहतर हागा कि जो व्यक्ति इस ढग से कार्य करने है वही समाज के विशिष्ट व्यक्ति होते है। सर लॉरेन्स ब्रेग ने ठीक ही कहा है– 'एक अच्छा फिजिकल वैज्ञानिक जो स्वतन्त्र विचारो का हो और अपने विषय के साथ जिसका विशेष लगाव हो, सालाना दस लाख मे एक ही पैदा होता है। वैसे इसमें सन्देह नहीं कि आजकल इस वैज्ञानिक कार्य के क्षेत्र को अधिक शिक्षा सम्बन्धी सुविधाये पहुचाकर विस्तृत किया जा सकता है किन्तु इसके साथ-साथ यह कहना भी आवश्यक है कि हर वैज्ञानिक विज्ञान को आगे बढाने की क्षमता नही रखता। रोजमर्रा के अनुभव और कई व्यक्तियो के विशिष्ट काय नये तथ्यो की खोज के लिए महत्त्वपूर्ण है। मिसेज जोंस की यह खोज कि रक्त के कई ग्रुप है एक नया अन्वेषण अवश्य है किन्तु इसे एक नियम नहीं कहा जा सकता है। हा इसे नियम बनाने के लिए उसे रक्त पर हजारो अनुभवो और अन्वेषणो से गुजरना होगा। वास्तव मे लगातार और कई वर्षो के अनुभवों तथा अन्वेषणा और एक ही विषय पर कई वैज्ञानिकों की खोज का दूसरा नाम हो विज्ञान है। भूतपूर्व राष्ट्रपति डा एस राधाकृष्णन के शब्दो मे–"विज्ञान लगन है, दिमागी वर्जिश है मानसिक और अन्वेषण सम्बन्धी परिश्रम है।"

आइये अब आज के जीवन मे विज्ञान की उपयोगिता पर कुछ प्रकाश डाले।

पिछले हजारों वर्षो मे पत्थर धातु और पशुवत जीवन स उन्नति करता हुआ आज मनुष्य नयी रोशनी की जिन्दगी तक आ पहुचा हैं। नयी रोशनी की इस जिन्दगी तक पहुचने के पीछे मनुष्य की लगातार कोशिश शोध और लगन का बहुत बडा हाथ है। वस्तुत मनुष्य प्राचीन काल से ही इस प्रयास में लगा रहा कि वह एक दिन महान उन्नतिशील शक्ति बन सके।

स्पष्टत तत्कालीन स्थितियो मे देखने मे यह एक स्वप्न था किन्तु उसे मनुष्य एक दिन वास्तविकता के रूप में देखना चाहता था। बीते हुए हजारो वर्षो मे मनुष्य के लिए यह समस्या रही कि उन दिनो उसक पास न तो आजकल के जमाने की कले और मशीन थीं ओर न बिजली और भाप की शक्तिया। अगर ऐसी शक्तिया और कले मनुष्य के पास होतीं तो वर्षो पूव उसे शारीरिक परिश्रम स छुटकारा मिल जाता। मनुष्य अधिक आरामपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकता और अधिक प्रसन्नता और उन्नति के माध्यम पैदा कर सकता।

बीते हुए इन हजारा वर्षो मे मनुष्य ने मशीनों का आविष्कार किया। खोज और अन्वेषण के कई ढग अपनाए। नये-नये यत्र बनाने के तरीके अपनाय। पैदावारी शक्तियो को एक सीमा तक बढाया और पैदावार प्राप्त करने के ढगो म तब्दीली की। प्रकृति को नियन्त्रण मे लाने का प्रयास किया। ऐश-आराम के नये माध्यम तलाश किये। इस प्रकार

विज्ञान अपन साथ इतने अधिक परिवर्तन लेकर आया। यहा तक कि मनुष्य के रहन-सहन के ढग पर भी उसका गहरा प्रभाव पडा।

इन वज्ञानिक खोजो ऐश-आराम की वस्तुओं और कलो-मशीनो के प्रयोग का मनुष्य की जिन्दगी के हर पहलू पर बहुत प्रभाव पडा। हा इसका सर्वाधिक प्रभाव मनुष्य के रहन-सहन पर पडा और खाने-पीने उठने-बैठने यात्रा करने ऐश-आराम करने उद्योग और व्यापार करने, यहा तक कि जीवन के हर पहलू मे विज्ञान के नये तौर-तरीके नये रग-ढग और एक नई सस्कृति दी। खुराक मे विटामिन के तत्त्व जो प्रथम विश्व युद्ध तक नहीं मालूम थे, आज मनुष्य को स्वास्थ्य और तन्दुरुस्ती की ओर ले जाने मे सहायक सिद्ध होते है। प्लास्टिक की हल्की सस्ती और खूबसूरत वस्तुए धातुओ का अच्छा विकल्प सिद्ध हुई है। एक वैज्ञानिक आलोचक लिखते है—"आधुनिक युग मे मनुष्य की जिन्दगी के हर पहलू को विज्ञान ने प्रभावित किया हे। इसन मनुष्य की भावनाओ व चिन्तन में एक प्रकार की हलचल पैदा कर दी है।' वस्तुत विज्ञान अपने साथ एक क्रान्ति लाया है और वैज्ञानिक शोधो ने पूर्णता की सीमा को भी छू लिया है। आज ये शोध इस सीमा तक बढ चुके है कि वैज्ञानिक इस विषय पर विशेष रूप से माथापच्ची कर रहे है कि पौधों और जानवरो की नस्लो को बेहतर बनाने के लिए क्या उचित खुराक होनी चाहिए। किस प्रकार इनमे बेहतरी पैदा की जाये। स्वय मनुष्य की खुराक मे कौन सी चीज कितनी मात्रा मे, किस आयु मे और किस वक्त मिलनी चाहिये। सक्षेप मे हम कह सकते है कि आज मनुष्य की दृष्टि और शोध इस पर है कि मनुष्य की खुराक सतुलित कैसे होनी चाहिये। जिससे उसमे सतुलित मात्रा मे प्रोटीन, खनिज पदार्थ और विटामिन मौजूद हों। इसके साथ-साथ आज के मनुष्य पर विज्ञान का यह प्रभाव भी बहुत जोरदार सिद्ध हुआ कि बेहतर से बेहतर अनाज सब्जी और फल पैदा करके बेहतर से बेहतर जानवरों को पाले ताकि उनसे मास और ऊन प्राप्त कर सके।

ललित कला पर भी विज्ञान का स्पष्ट प्रभाव पडा है। विशेषत पेन्टिग, फोटोग्राफी पर विज्ञान का प्रभाव तकनीकी भी है और दार्शनिक भी। आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व रग चित्रकार की दृष्टि मे एक अर्थपूर्ण तत्त्व समझा जाता था और आब्सट्रेक्ट आर्ट में तो रगो के उतार-चढाव की महत्ता कई गुना बढ गई थी हालाकि इसका कोई वैज्ञानिक कारण नहीं था। आज स्थिति यह है कि रगों की महत्ता काफी कम हो गई है, क्योकि रग यद्यपि किसी दृश्य को चित्रित करने मे लुभावनापन तो पैदा कर सकता है, किन्तु दृश्य की पृष्ठभूमि जो अर्थ या प्रभाव उत्पन्न करना चाहती है वह आवश्यक रूप से रगो ही से पैदा नहीं किये जा सकते।

स्थापत्य कला मे भी विज्ञान का प्रभाव स्पष्ट रूप से लक्षित हुआ है। वह ऐसे कि आज के मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं और जरूरतो के अनुसार खुले, हवादार और स्वच्छ स्थान को प्राथमिकता दी है, न कि बीते समय के कलशों, मेहराबो और खूबसूरत दीवारो को। इस प्रकार आज के दौर मे खूबसूरती के स्थान पर आवश्यकता और सादगी का महत्त्व बढ चुका है। स्पष्टत आज गगनचुम्बी इमारतो मे मात्र खूबसूरत और महगी वस्तुओ के स्थान पर लोहा सीमेट और सीसे का प्रयोग होता है ताकि कम से कम खर्च मे मजबूत और अधिक घेराव वाला स्थान उपलब्ध हो सके।

विज्ञान न सगीत का भी प्रभावित किया है। एक पश्चिमी सगीत समीक्षक के अनुसार हाइडाजन (जिसकी महत्ता आज के एटमी युग में कई गुना बढ गइ है) बहुत शक्तिशाली ओर कइ गुना शक्ति पैदा करता है जिसका प्रयोग सगीत मे हो सकता है। वैसे सगीत का प्रभाव जीवन पर यह पडता है कि मनुष्य उससे मानसिक सतुष्टि ओर आध्यात्मिक प्रसन्नता प्राप्त करना हे और विज्ञान की बदौलत मनुष्य विश्व की अनेक चीजों से परिचित होता हे। वंम एक दृष्टिकोण से दोनो (विज्ञान और सगीत) एक दूसरे से मिले-जुले है क्योकि दाना आविष्कृत विषय है।

विज्ञान ने प्रजातत्र की नींव को मजबूत किया है। वैयक्तिक प्रयासो के फलस्वरूप विज्ञान का स्वरूप सामाजिक और प्रजातात्रिक है, क्योकि विज्ञान का प्रयोग क्रमबद्ध होता हे जिसके कारण वैज्ञानिको की अपनी एक बिरादरी स्थापित हो जाती हे। विज्ञान की दुनिया म जब भी कोई नई खोज या अन्वेषण होता है तो वैज्ञानिको की प्रतिक्रिया साधारणत सदेहजनक हो जाती है गोया दूसरे वैज्ञानिक उस नई खोज को अपने ढग से प्रयोग करने और दुहराने के पश्चात उनकी सेहत और उपयोगिता पर विश्वास करते है। कभी-कभी जब कोई अनुभव इस प्रयाग की कसौटी पर खरा नहीं उतरता तो वह अपनी मौत आप मर जाना है और जब वह लगातार अनुभवों पर खरा उतरता रहता है तो दूसरे वैज्ञानिक भी उस पर विश्वास कर लेते है।

विज्ञान का मनुष्य के जीवन पर यह प्रभाव विशेष रूप से प्रशसनीय है कि इसने व्यक्तिगत प्रयासों को एक सामूहिक दर्जा और प्रजातात्रिक आधार प्रदान किया है और इसमे कोई सन्देह नहीं कि इस प्रकार के अनुभव और खोज से वैज्ञानिक कार्यो को बहुत बढावा मिला तथा वैज्ञानिको को प्रोत्साहन भी।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात विश्व ने विज्ञान का एक और चमत्कार भी देख लिया, वह यह कि पिछली शताब्दी में उद्योग और रसायन मे बहुत नये-नये खोज और अन्वेषण हुए जिसका स्पष्ट प्रभाव मनुष्य के जीवन पर पडा। जीन्स की आनुवशिक विशेषता की जानकारी ने पालतू जानवरों और स्वय मनुष्य क सम्बन्ध मे बहुत अजीबो-गरीब और कामयाब शोध की ओर कदम बढाया। इस प्रकार मनोविज्ञान के विषय मे भी प्रगति हुई। यह विशेषता यद्यपि आने वाली नस्लों में परिलक्षित होती हे किन्तु उनको भिन्न प्रकार की आनुवशिक विशेषताओ मे भी परिवर्तित किया जा सकता है। इसी प्रकार मनोविज्ञान मे शोध से यह सिद्ध हुआ कि मानसिक रोगो, दिमागी परेशानियों ओर सामान्य बीमारियों के इलाज अधिक सफलतापूर्वक निकाले जा सकते है यानि विज्ञान की यह देन भी रही कि उसने बीमारियों के लिए लाभदायक इलाजों की खोज की।

वर्तमान युग मे जो सफाई खूबसूरती और तन्दरुस्ती दिखाई देती है, उसका सेहरा विज्ञान के सिर है क्योंकि विज्ञान ही न बीमारियों ओर सूखा इत्यादि से सामना करने के लिए कइ तौर-तरीके आविष्कार किए है। एक हद तक विज्ञान ने अधिक पैदावार प्राप्त करके सूखा इत्यादि क प्रभाव को कम किया भी है। यातायात के नये-नये ढग बताये हे। दूरसचार का सामान पैदा किया हें। विश्व की अनेक सस्कृतियों और कौमों को एक-दूसरे के नजदीक ला दिया

विज्ञान अपने साथ इतने अधिक परिवर्तन लेकर आया। यहा तक कि मनुष्य के रहन-सहन के ढग पर भी उसका गहरा प्रभाव पडा।

इन वैज्ञानिक खोजो ऐश-आराम की वस्तुओ और कलो-मशीनो के प्रयोग का मनुष्य की जिन्दगी के हर पहलू पर बहुत प्रभाव पडा। हा इसका सर्वाधिक प्रभाव मनुष्य के रहन-सहन पर पडा और खाने-पीने उठने-बैठने यात्रा करने ऐश-आराम करने उद्योग और व्यापार करने, यहा तक कि जीवन के हर पहलू मे विज्ञान के नये तौर-तरीके नये रग-ढग और एक नई सस्कृति दी। खुराक मे विटामिन के तत्त्व, जो प्रथम विश्व युद्ध तक नहीं मालूम थे, आज मनुष्य को स्वास्थ्य और तन्दुरुस्ती की ओर ले जाने मे सहायक सिद्ध होते है। प्लास्टिक की हल्की सस्ती और खूबसूरत वस्तुए धातुओ का अच्छा विकल्प सिद्ध हुई है। एक वैज्ञानिक आलोचक लिखते है—"आधुनिक युग में मनुष्य की जिन्दगी के हर पहलू को विज्ञान ने प्रभावित किया ह। इसने मनुष्य की भावनाओ व चिन्तन में एक प्रकार की हलचल पैदा कर दी है।' वस्तुत विज्ञान अपने साथ एक क्रान्ति लाया है और वैज्ञानिक शोधो ने पूर्णता की सीमा को भी छू लिया है। आज ये शोध इस सीमा तक बढ चुके है कि वैज्ञानिक इस विषय पर विशेष रूप से माथापच्ची कर रहे है कि पौधो और जानवरों की नस्लो को बेहतर बनाने के लिए क्या उचित खुराक होनी चाहिए। किस प्रकार इनमे बेहतरी पैदा की जाये। स्वय मनुष्य की खुराक मे कौन सी चीज कितनी मात्रा मे, किस आयु मे और किस वक्त मिलनी चाहिये। सक्षेप मे हम कह सकते है कि आज मनुष्य की दृष्टि और शोध इस पर है कि मनुष्य की खुराक सतुलित कैसे होनी चाहिये। जिससे उसमे सतुलित मात्रा में प्रोटीन, खनिज पदार्थ और विटामिन मौजूद हो। इसके साथ-साथ आज के मनुष्य पर विज्ञान का यह प्रभाव भी बहुत जोरदार सिद्ध हुआ कि बेहतर से बेहतर अनाज सब्जी और फल पैदा करके बेहतर से बेहतर जानवरों को पाले ताकि उनसे मास और ऊन प्राप्त कर सके।

ललित कला पर भी विज्ञान का स्पष्ट प्रभाव पडा है। विशेषत पेन्टिग, फोटोग्राफी पर विज्ञान का प्रभाव तकनीकी भी है और दार्शनिक भी। आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व रग चित्रकार की दृष्टि मे एक अर्थपूर्ण तत्त्व समझा जाता था और आब्सट्रेक्ट आर्ट में तो रगो के उतार-चढाव की महत्ता कई गुना बढ गई थी हालाकि इसका कोई वैज्ञानिक कारण नहीं था। आज स्थिति यह है कि रगो की महत्ता काफी कम हो गई है, क्योंकि रग यद्यपि किसी दृश्य को चित्रित करने मे लुभावनापन तो पैदा कर सकता है किन्तु दृश्य की पृष्ठभूमि जो अर्थ या प्रभाव उत्पन्न करना चाहती है वह आवश्यक रूप से रगो ही से पैदा नहीं किये जा सकते।

स्थापत्य कला मे भी विज्ञान का प्रभाव स्पष्ट रूप से लक्षित हुआ है। वह ऐसे कि आज के मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं और जरूरतो के अनुसार खुले, हवादार और स्वच्छ स्थान को प्राथमिकता दी है, न कि बीते समय के कलशों, मेहराबो और खूबसूरत दीवारो को। इस प्रकार आज के दौर मे खूबसूरती के स्थान पर आवश्यकता और सादगी का महत्त्व बढ चुका है। स्पष्टत आज गगनचुम्बी इमारतो मे मात्र खूबसूरत और महगी वस्तुओं के स्थान पर लोहा सीमेट और सीसे का प्रयोग होता है ताकि कम से कम खर्च में मजबूत और अधिक घेराव वाला स्थान उपलब्ध हो सके।

विज्ञान ने सगीत का भी प्रभावित किया है। एक पश्चिमी सगीत ममीक्षक के अनुसार हाइडाजन (जिसकी महत्ता आज के एटमी युग मे कई गुना बढ गइ है) बहुत शक्तिशाली ओर कइ गुना शक्ति पैदा करता है जिसका प्रयोग सगीत मे हो सकता है। वैसे सगीत का प्रभाव जीवन पर यह पडता है कि मनुष्य उससे मानसिक सतुष्टि और आध्यात्मिक प्रसन्नता प्राप्त करता है और विज्ञान की बदौलत मनुष्य विश्व की अनेक चीजों से परिचित होता हे। वेमे एक दृष्टिकोण से दोनो (विज्ञान और सगीत) एक दूसरे से मिले-जुले है क्योकि दोना आविष्कृत विषय है।

विज्ञान ने प्रजातत्र की नींव को मजबूत किया है। वैयक्तिक प्रयासा के फलस्वरूप विज्ञान का स्वरूप सामाजिक और प्रजातात्रिक है क्योकि विज्ञान का प्रयोग क्रमबद्ध होता हें जिसके कारण वैज्ञानिका की अपनी एक बिरादरी स्थापित हो जाती हें। विज्ञान की दुनिया मे जब भी काई नई खोज या अन्वेषण होता है तो वैज्ञानिको की प्रतिक्रिया साधारणत सदेहजनक हो जाती है गोया दूसरे वैज्ञानिक उस नई खोज को अपने ढग से प्रयोग करने और दुहराने के पश्चात उनकी सेहत और उपयोगिता पर विश्वास करते है। कभी-कभी जब कोई अनुभव इस प्रयाग की कसौटी पर खरा नहीं उतरता तो वह अपनी मौत आप मर जाता है और जब वह लगातार अनुभवों पर खरा उतरता रहता है तो दूसरे वैज्ञानिक भी उस पर विश्वास कर लेते है।

विज्ञान का मनुष्य के जीवन पर यह प्रभाव विशेष रूप से प्रशसनीय है कि इसने व्यक्तिगत प्रयासो को एक सामूहिक दर्जा और प्रजातात्रिक आधार प्रदान किया है और इसमे कोई सन्देह नहीं कि इस प्रकार के अनुभव और खोज से वैज्ञानिक कार्यो को बहुत बढावा मिला तथा वैज्ञानिकों को प्रोत्साहन भी।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात विश्व ने विज्ञान का एक और चमत्कार भी देख लिया, वह यह कि पिछली शताब्दी में उद्योग और रसायन मे बहुत नये-नये खोज और अन्वेषण हुए जिसका स्पष्ट प्रभाव मनुष्य के जीवन पर पडा। जीन्स की आनुवशिक विशेषता की जानकारी ने पालतू जानवरों और स्वय मनुष्य के सम्बन्ध में बहुत अजीबो-गरीब और कामयाब शोध की ओर कदम बढाया। इस प्रकार मनोविज्ञान के विषय मे भी प्रगति हुई। यह विशेषता यद्यपि आने वाली नस्लों में परिलक्षित होती है किन्तु उनको भिन्न प्रकार की आनुवशिक विशेषताओ मे भी परिवर्तित किया जा सकता है। इसी प्रकार मनोविज्ञान मे शोध से यह सिद्ध हुआ कि मानसिक रोगो, दिमागी परेशानियों और सामान्य बीमारियो के इलाज अधिक सफलतापूर्वक निकाले जा सकते है यानि विज्ञान की यह देन भी रही कि उसने बीमारियों के लिए लाभदायक इलाजों की खोज की।

वर्तमान युग मे जो सफाई खूबसूरती और तन्दरुस्ती दिखाई देती है उसका सेहरा विज्ञान के सिर है क्योकि विज्ञान ही ने बीमारियों और सूखा इत्यादि से सामना करने के लिए कइ तौर-तरीके आविष्कार किए है। एक हद तक विज्ञान ने अधिक पैदावार प्राप्त करके सूखा इत्यादि के प्रभाव को कम किया भी है। यातायात के नये-नये ढग बताये है। दूरसचार का सामान पैदा किया हें। विश्व की अनेक सस्कृतियो और कौमो को एक-दूसरे के नजदीक ला दिया

विज्ञान अपने साथ इतने अधिक परिवर्तन लेकर आया। यहा तक कि मनुष्य के रहन-सहन के ढग पर भी उसका गहरा प्रभाव पडा।

इन वैज्ञानिक खोजो ऐश-आराम की वस्तुओ और कलो-मशीनो के प्रयोग का मनुष्य की जिन्दगी के हर पहलू पर बहुत प्रभाव पडा। हा इसका सर्वाधिक प्रभाव मनुष्य के रहन-सहन पर पडा और खाने-पीने उठने-बैठने यात्रा करने, ऐश-आराम करने उद्योग और व्यापार करने, यहा तक कि जीवन के हर पहलू मे विज्ञान के नये तौर-तरीके नये रग-ढग और एक नई सस्कृति दी। खुराक मे विटामिन के तत्त्व, जो प्रथम विश्व युद्ध तक नहीं मालूम थे, आज मनुष्य को स्वास्थ्य और तन्दुरुस्ती की ओर ले जाने में सहायक सिद्ध होते है। प्लास्टिक की हल्की सस्ती और खूबसूरत वस्तुए धातुओ का अच्छा विकल्प सिद्ध हुई है। एक वैज्ञानिक आलोचक लिखते है— 'आधुनिक युग मे मनुष्य की जिन्दगी के हर पहलू को विज्ञान ने प्रभावित किया है। इसने मनुष्य की भावनाओ व चिन्तन में एक प्रकार की हलचल पैदा कर दी है।' वस्तुत विज्ञान अपने साथ एक क्रान्ति लाया है और वैज्ञानिक शोधो ने पूर्णता की सीमा को भी छू लिया है। आज ये शोध इस सीमा तक बढ चुके है कि वैज्ञानिक इस विषय पर विशेष रूप से माथापच्ची कर रह है कि पौधो और जानवरों की नस्लो को बेहतर बनाने के लिए क्या उचित खुराक होनी चाहिए। किस प्रकार इनमे बेहतरी पैदा की जाये। स्वय मनुष्य की खुराक मे कौन सी चीज कितनी मात्रा मे, किस आयु मे और किस वक्त मिलनी चाहिये। सक्षेप मे हम कह सकते है कि आज मनुष्य की दृष्टि और शोध इस पर है कि मनुष्य की खुराक सतुलित कैसे होनी चाहिये। जिससे उसमे सतुलित मात्रा में प्रोटीन, खनिज पदार्थ और विटामिन मौजूद हो। इसके साथ-साथ आज के मनुष्य पर विज्ञान का यह प्रभाव भी बहुत जोरदार सिद्ध हुआ कि बेहतर से बेहतर अनाज सब्जी और फल पैदा करके बेहतर से बेहतर जानवरों को पाले ताकि उनसे मास और ऊन प्राप्त कर सके।

ललित कला पर भी विज्ञान का स्पष्ट प्रभाव पडा है। विशेषत पेन्टिग, फोटोग्राफी पर विज्ञान का प्रभाव तकनीकी भी है और दार्शनिक भी। आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व रग चित्रकार की दृष्टि मे एक अर्थपूर्ण तत्त्व समझा जाता था और आब्सट्रेक्ट आर्ट में तो रगों के उतार-चढाव की महत्ता कई गुना बढ गइ थी हालाकि इसका कोई वैज्ञानिक कारण नहीं था। आज स्थिति यह हैं कि रगो की महत्ता काफी कम हो गई है, क्योंकि रग यद्यपि किसी दृश्य को चित्रित करने मे लुभावनापन तो पैदा कर सकता है, किन्तु दृश्य की पृष्ठभूमि जो अर्थ या प्रभाव उत्पन्न करना चाहती है वह आवश्यक रूप से रगो ही से पैदा नहीं किये जा सकते।

स्थापत्य कला मे भी विज्ञान का प्रभाव स्पष्ट रूप से लक्षित हुआ है। वह ऐसे कि आज के मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं और जरूरतो के अनुसार खुले, हवादार और स्वच्छ स्थान को प्राथमिकता दी है, न कि बीते समय के कलशों, मेहराबो और खूबसूरत दीवारो को। इस प्रकार आज के दौर मे खूबसूरती के स्थान पर आवश्यकता और सादगी का महत्त्व बढ चुका है। स्पष्टत आज गगनचुम्बी इमारतो मे मात्र खूबसूरत और महगी वस्तुओ के स्थान पर लोहा सीमेट और सीसे का प्रयोग होता है, ताकि कम से कम खर्च में मजबूत और अधिक घेराव वाला स्थान उपलब्ध हो सके।

विज्ञान ने सगीत को भी प्रभावित किया है। एक पश्चिमी सगीत समीक्षक के अनुसार हाइडाजन (जिसकी महत्ता आज के एटमी युग मे कई गुना बढ गइ है) बहुत शक्तिशाली और कइ गुना शक्ति पैदा करता है जिसका प्रयोग सगीत मे हो सकता है। वैसे सगीत का प्रभाव जीवन पर यह पडता है कि मनुष्य उससे मानसिक सतुष्टि और आध्यात्मिक प्रसन्नता प्राप्त करता है और विज्ञान की बदौलत मनुष्य विश्व की अनेक चीजों से परिचित होता है। वसे एक दृष्टिकोण से दोनो (विज्ञान और सगीत) एक दूसरे से मिले-जुले है क्योकि दोना आविष्कृत विषय है।

विज्ञान ने प्रजातत्र की नींव को मजबूत किया है। वैयक्तिक प्रयासो के फलस्वरूप विज्ञान का स्वरूप सामाजिक और प्रजातात्रिक है, क्याकि विज्ञान का प्रयोग क्रमबद्ध होता ह जिसके कारण वैज्ञानिको की अपनी एक बिरादरी स्थापित हो जाती है। विज्ञान की दुनिया म जब भी कोई नई खोज या अन्वेषण होता है तो वैज्ञानिको की प्रतिक्रिया साधारणत सदेहजनक हो जाती है गोया दूसरे वैज्ञानिक उस नई खोज को अपने ढग से प्रयोग करने और दुहराने के पश्चात उनकी सेहत और उपयोगिता पर विश्वास करते है। कभी-कभी जब कोई अनुभव इस प्रयोग की कसौटी पर खरा नहीं उतरता तो वह अपनी मौत आप मर जाता है और जब वह लगातार अनुभवों पर खरा उतरता रहता है तो दूसरे वैज्ञानिक भी उस पर विश्वास कर लेते है।

विज्ञान का मनुष्य के जीवन पर यह प्रभाव विशेष रूप से प्रशसनीय है कि इसने व्यक्तिगत प्रयासो को एक सामूहिक दर्जा और प्रजातात्रिक आधार प्रदान किया है और इसमे कोई सन्देह नहीं कि इस प्रकार के अनुभव और खोज से वैज्ञानिक कार्यो को बहुत बढावा मिला तथा वैज्ञानिकों को प्रोत्साहन भी।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात विश्व ने विज्ञान का एक और चमत्कार भी देख लिया वह यह कि पिछली शताब्दी में उद्योग और रसायन मे बहुत नये-नये खोज और अन्वेषण हुए जिसका स्पष्ट प्रभाव मनुष्य के जीवन पर पडा। जीन्स की आनुवशिक विशेषता की जानकारी ने पालतू जानवरों और स्वय मनुष्य के सम्बन्ध में बहुत अजीबो-गरीब और कामयाब शोध की ओर कदम बढ़ाया। इस प्रकार मनोविज्ञान के विषय मे भी प्रगति हुई। यह विशेषता यद्यपि आने वाली नस्लो में परिलक्षित होती हैं किन्तु उनको भिन्न प्रकार की आनुवशिक विशेषताओं मे भी परिवर्तित किया जा सकता है। इसी प्रकार मनोविज्ञान म शोध से यह सिद्ध हुआ कि मानसिक रोगो, दिमागी परेशानियो और सामान्य बीमारियों क इलाज अधिक सफलतापूर्वक निकाल जा सकते है यानि विज्ञान की यह देन भी रही कि उसने बीमारियों के लिए लाभदायक इलाजों की खोज की।

वतमान युग मे जो सफाई खूबसूरती और तन्दरुस्ती दिखाइ देती है उसका सेहरा विज्ञान के सिर है क्योकि विज्ञान ही न बीमारियों और सूखा इत्यादि से सामना करने क लिए कइ तौर-तरीके आविष्कार किए है। एक हद तक विज्ञान ने अधिक पैदावार प्राप्त करके सूखा इत्यादि के प्रभाव को कम किया भी है। यातायात के नये-नये ढग बताये हैं। दूरसचार का सामान पैदा किया है। विश्व की अनेक सस्कृतियों और कौमो को एक-दूसरे के नजदीक ला दिया

है और उनके लिए उन्नति के अनेक माध्यम उत्पन्न किए है। विज्ञान ने समुद्र और रेगिस्तान इन दोनो की सीमाओ को पार करके सम्पूर्ण विश्व को एक इकाई मे परिवर्तित कर दिया है। समय और दूरी के प्रश्न को भी इसने हल किया है। कौमें तथा सस्कृतिया कैसे एक दूसरे के निकट आई? वह इस तरह कि हर वह नया रग नया ढग नया फैशन, नया अदाज जो इग्लैण्ड या अमेरिका या फ्रास से उभरता है कम से कम समय में हिन्दुस्तान और जापान जा पहुचता है और फैशन का यह अदाज रेडियो टेलीविजन समाचार पत्र और फिल्मो की सहायता स कई दूसरे देशो तक पहुच जाता है और इस प्रकार यह आगे से आगे की ओर बढता जाता है। विश्व को एक-दूसरे के अदाज या फैशन से परिचित कराता है तथा एक-दूसरे की जीवन शैली को समझने मे सहायक बन जाता है। आज स्थिति यह है कि विश्व मे कुछ भी अनजान नहीं रहा। विदेश का भ्रमण किये बिना हम आज वहा के बारे मे उतना ही जान जाते है जितना वहा के रहने वाले। लार्ड मैकाले के शब्दो मे—'विज्ञान ने मनुष्य की जिन्दगी बढा दी है। दर्द और दु ख को कम कर दिया है। उसने समुद्री सफर को सुरक्षित बना दिया है। जगबाजो को नये-नये हथियार उपलब्ध कराये है। इसने ऐसे पुलो के माध्यम से बडी-बडी नदियो इत्यादि को पार करने का सामान उत्पन्न किया है जिनसे हमारे पूर्वज अवगत नहीं थे। विज्ञान ने रात को दिन की भाति रोशन कर दिया है। इसने मनुष्य को व्यापक दृष्टि दी है। इसने यातायात तथा दूरसचार के माध्यमो की गति को तीव्र किया है तथा फासले समाप्त कर दिए है। मनुष्यो को समुद्र का सीना चीरने की क्षमता प्रदान की है। यह विज्ञान की उपलब्धियो का ही हिस्सा है बल्कि एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है।'

उद्योग और व्यापार मे विज्ञान के कारण ही बहुत उन्नति हुई है। दूसरे देशों में सामान बेचने के लिए वस्तुओ का उच्चस्तरीय होना अनिवार्य समझा जाता है जिससे कि विश्व बाजार मे उस वस्तु को पसद किया जाये। यह स्पष्ट है कि प्रतिस्पर्धा के कारण हर देश बेहतर से बेहतर सामान का उत्पादन करता है जो दूसरे देशों मे अच्छे ढग और आसानी से बिक पाता है।

आज के विज्ञान ने समय, अन्तरिक्ष और आणविक शक्ति के सम्बन्ध मे पूर्णत नवीन विचार दिये है। दूसरे इसने इस विचार को पूरी तरह समाप्त कर दिया है कि विश्व मात्र एक मशीन की भाति है जो एक नियमबद्ध तरीके से गतिशील है। आप जैन धर्म के सिद्धान्त को ही लीजिए। 19वीं शताब्दी तक यह विचार मनुष्य के मस्तिष्क पर हावी था कि मनुष्य का भाग्य पूर्व निश्चित हे जिसमे फेरबदल की कोई सम्भावना नहीं। किन्तु आज विज्ञान ने इस विचार को निर्मूल सिद्ध कर दिया है। एक अन्य विचार जो एक समय मनुष्य पर हावी था और एक सीमा तक आज भी हावी है कि मनुष्य जो कुछ भी इस ससार मे करता है उसका प्रतिफल उसे दूसरी पारलौकिक दुनिया मे जो मृत्यु के पश्चात प्राप्त होगी उसके अच्छे-बुरे कर्मो के अनुरूप मिलेगा। आज भाग्य के स्थान पर कर्मो का अधिक महत्त्व है और इसी ससार मे ही आप अपने कर्मो का अच्छा या बुरा प्रतिफल ल सकते है।

विज्ञान ने मनुष्य की भौतिक आवश्यकताओ का काफी सीमा तक पूर्ण किया हे और इसके साथ-साथ भ्रम तथा अधविश्वासो की समाप्ति मे भी इसका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा

है। ज्यो-ज्यो वैज्ञानिक चिन्तन मनुष्य के मस्तिष्क मे स्थान पाते गये, त्यो-त्यो प्राचीन मान्यताए और निर्मूल रस्म-रिवाज तथा विचारो को मनुष्य छोडता गया। आज गाव का रहने वाला एक सामान्य व्यक्ति भी इस बात को समझता है कि जो चीज स्पष्ट रूप से सही हो तथा तार्किक हो उस ही स्वीकार करना चाहिये। इस प्रकार आज के विज्ञान ने मनुष्य को एक नई चिन्तन शैली दी है जो आज के दौर मे बहुत आवश्यक है। पडित नेहरू भी इस बात के बहुत पक्षधर थे। वह चाहते थे कि वैज्ञानिकता और तार्किकता देश के इस कोने से उस कोने मे फैल जाए, जिससे हमारा देश विश्व के अग्रणी देशो की कतार मे गिना जा सके और भारत मे प्रसन्नता तथा आत्मनिर्भरता का दौर आ सके।

आम मनुष्य यदि वैज्ञानिक न भी हो तो उसे विज्ञान की भाति क्या, क्यो और कैसे का रवैया अपनाना चाहिये जिससे हर व्यक्ति मे तार्किकता उत्पन्न हो। इससे सामान्य व्यक्ति का दृष्टिकोण भी वैज्ञानिक हो सकेगा। देश से निरक्षरता की समाप्ति मे सहायता मिलेगी, निर्मूल परम्पराओ का जाल टूट जाएगा और देश खुशहाली और उन्नति की ओर बढ सकेगा। आने वाला समय मनुष्य के लिए प्रसन्नता और खुशहाली का स्वर्ग हो सकता है। उसका नक्शा मनुष्य के सम्मुख है। मनुष्य को यह अवश्य ही निश्चित करना है कि उसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना है या नहीं?

वैज्ञानिक प्रवृत्ति और तरीका अपनाने मे स्वय मनुष्य का ही लाभ है, क्योकि विज्ञान ने मनुष्य के भौतिक जीवन मे अजीबोगरीब क्रान्ति पैदा करके जिन्दगी और रहन-सहन के तरीकों मे काफी लाभकारी परिवर्तन लाये है। इस दौर में मनुष्य के सोचने और रहने की समस्याओं पर विचार करने का ढग बदला है, रहन-सहन का ढग भी बदला है। आज का मनुष्य जो उन्नति और निर्माण की ओर अग्रसर हुआ है उसका सेहरा वैज्ञानिक सोच-विचार को जाता है। सोच-विचार तथा चिन्तन के इसी तरीके ने मनुष्य के नैतिक मूल्यो, उसके विचार, उसकी सस्कृति, यहा तक कि उसकी सच्चाइ और खूबसूरती की कल्पना को परिवर्तित करके रख दिया है और इस प्रकार मनुष्य को एक नई रोशनी प्रदान की है।

# हमारा विज्ञान : एक अवलोकन

हजारों वर्षो से भारत कला और सस्कृति का केन्द्र रहा है। यहा अनेक धर्मो और सस्कृतियो का जन्म और विकास हुआ। स्थापत्य कला, वास्तुकला, पेन्टिग, सगीत और नृत्य जैसी कलाओ को भारत ने उन्नति की उस पराकाष्ठा तक पहुचाया जिसे अन्य कोई देश और सस्कृति आज तक नही छू सकी। शायरी, नाटक और कथालेखन के क्षेत्र मे भारत की प्रतिभा आज भी विश्व के लिए आश्चर्य का कारण है। ये सब मानव जाति की बेहतरीन और कीमती धरोहर है और हमारी धरोहर तो है ही।

यही स्थिति विज्ञान की भी है। प्राचीन काल से ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण और शोध भारतीय सस्कृति का एक अग रहा है। इसी दृष्टिकोण पर अमल करने पर भारतीय विद्वानो, शासको और वैज्ञानिको ने सदैव बल दिया है। योग वशिष्ठ की यही शिक्षा है, बल्कि मानवता इस अमल का ही दूसरा नाम है जिसकी विशेषता शाश्वतता है। जो व्यक्ति इस लक्ष्य तक पहुच गया उसने वस्तुत कमाल हासिल कर लिया। इस कमाल को प्राप्त करना मनुष्य ही के वश मे है। इसीलिए उपनिषदो मे यह कहा गया कि सदैव कर्म मे रत रहो क्योकि कर्म के अतिरिक्त मनुष्य के पास अन्य कोई विकल्प नहीं है। इसी प्रकार भगवत् गीता मे श्रीकृष्ण अर्जुन को कर्म करने का उपदेश देते हुए कहते है—"राजा जनक और दूसरे लोगो ने कर्म के माध्यम से पूर्ण मनुष्य का स्थान प्राप्त किया। इसीलिए तुझे मनुष्यता की भलाई और उन्नति को ध्यान में रखते हुए अपने कर्म मे रत रहना चाहिये।"

कर्म को हम विज्ञान का पर्याय कह सकते है। ऐसा ही जीवन प्राचीन काल के भारत की विशेषता रही है। यू कहिये कि भारत मे विज्ञान, वैज्ञानिक शोध तथा काम-काज प्राचीन काल मे विद्यमान था। यदि हमारा इतिहास है, सस्कृति है, साहित्य है, कला है और एक सुनहरा अतीत है तो उसमे विज्ञान भी सम्मिलित है। बल्कि यू कहिये कि ईसा की 12वीं शताब्दी तक यूरोप मे विज्ञान ने जो उन्नति की उसमे चीन, अरब देश और भारत का बहुत बडा योगदान था। इसी दौर में यूनानी चिकित्सा पद्धति, भूगोल, दर्शन और सस्कृति को बहुत बढावा मिला। घडी, अम्ल, बारूद और कुतुबनुमा से सबसे पहले अरबों ने विश्व को परिचित कराया। रसायन का ज्ञान और बीजगणित अरबो की मुख्य खोज कही जा सकती है इसी प्रकार शल्य विज्ञान भी। वस्तुत पाषाण और धातु काल में भी मनुष्य ने

सबसे पहले जिन्दगी की आवश्यकताओ को पूरा करने और उन्हें प्राप्त करने पर बल दिया और जब थोडी-बहुत सन्तुष्टि और सकून से मनुष्य आबाद हो गया तो सस्कृति का जन्म हुआ। इसी प्रकार इसके साथ-साथ वैज्ञानिक सोच-विचार और अन्वेषण का सिलसिला भी समाज में स्थापित हो गया। इसके पश्चात मनुष्य ने ऐसे तौर-तरीकों की ओर ध्यान दिया जिसके माध्यम से वह मौसम तथा ऋतुओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सके खेती-बारी में उन्नति कर सके। यातायात और दूरसचार के बेहतर माध्यम पैदा कर सके और इस प्रकार उन्नति तथा खुशहाली के माध्यम भी पैदा कर सके।

## हडप्पा की खुदाई

ईसा से 3000-4000 वर्ष पूर्व तक के समय के मोहनजोदडो और हडप्पा की खुदाई से कुछ ऐसे अवशेष प्राप्त हुए है जो यह स्पष्ट करते है कि उस समय मे नालियों, सडकों और इन्जीनियरिग का विज्ञान अपने शैशवावस्था मे था। चित्रो की खुदाई उस समय आम रूप से प्रचलित थी। छपाई के लिए ताबे, पकी ईंटों, पत्थरों तथा कासे की बनी हुई लिपिया प्रयोग मे लाइ जाती थीं। जब आर्यो ने सिन्धु घाटी सभ्यता पर ईसा से 1500 वर्ष पूर्व कदम रखा तो वैज्ञानिक काम-काज को आगे बढाने के लिए उन्हे पहल से ही तैयार एक पृष्ठभूमि मिली। ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथववेद में दवाओ, कई प्रकार की बीमारियो तथा तारों की जानकारी का उल्लेख मिलता है। कणाद ओर कपिल इन दो विद्वानों का पाच मूल तत्त्वों का उल्लेख (जिससे अन्य तत्त्व निर्मित होते हैं) इतिहास में विद्यमान हे। ऐसे ही अन्य विद्वानों ने परमाणुओ और अणुओ के रहस्य को समझा और समझाया। कणाद ने ध्वनि के सिद्धान्त को पेश करते हुए यह अनुमान लगाया कि प्रकाश और ध्वनि एक ही शक्ति के रूप हे। विशेष रूप से ऋग्वेद और सामवेद में ऐसे प्रश्नों जैसे—दुनिया अस्तित्व मे कैसे आइ या इस ब्रह्माण्ड मे पृथ्वी अस्तित्व में कैसे आई, की बहस मिलती है। दूसरे, ऋग्वेद में पृथ्वी द्वारा सूय के 12 महीनो के चक्कर और हर माह के 30 दिनों के चक्कर का उल्लेख मिलता है। अथर्ववेद मे हर चौथे वष में एक दिन की वृद्धि (लीप वर्ष) का उल्लेख है। यजुर्वेद मे 27 तारो का उल्लेख है जिससे भविष्यवाणी की जा सकती है। ज्योतिष विज्ञान का उल्लेख भी इस ग्रन्थ में मिलता है।

ऋग्वेद मे शीत, ग्रीष्म ऋतुओं तथा चन्द्र और सूर्यग्रहण का उल्लेख मिलता है। यह स्मरणीय है कि एक अन्धविश्वास उन दिनों आम था और आज भी कई प्राचीन कट्टरपन्थी हिन्दू इस बात को मानते है कि सूर्य ग्रहण राहु के कारण लगता है। ऋग्वेद मे इस प्रकार की धारणा का उल्लेख तो है, किन्तु इसके साथ यह भी वर्णित हे जो अधिक स्वीकारणीय है कि सूय ग्रहण पृथ्वी और सूर्य के बीच चन्द्रमा के आ जाने से लगता है। वास्तव में, इस काल में यदि कहीं धार्मिक अन्धविश्वासों का उल्लेख मिलता हैं तो उसके साथ वेदो में कहीं-कहीं अधिक वैज्ञानिक बाते भी उल्लेखित मिलती हैं जो आज भी उसी रूप मे स्वीकार की जाती है। ये उनकी वैज्ञानिक सच्चाई की आज भी प्रमाण है।

कल्पसूत्र मे रेखागणित का विस्तृत रूप से उल्लेख मिलता है। वर्ग आयत वृत्त का उल्लेख और उनका आपसी सम्बन्ध व अनुपात इत्यादि सभी का उल्लेख कल्पसूत्र मे है। रेखागणित के एक महत्त्वपूर्ण नियम को यूनान के प्रसिद्ध विद्वान पाइथागोरस के नाम से जाना जाता है। किन्तु ऐसे ही दृष्टिकोण का उल्लेख कल्पसूत्र मे भी है। उन दिनों दशमलव का प्रयोग भी सम्मुख आ चुका था। ऐसी जडी-बूटियो और पौधो का उल्लेख मिलता है जिनसे कई प्रकार की दवाए तैयार की जाती थीं। स्पष्ट है कि स्वास्थ्य विज्ञान और चिकित्सा के सिद्धान्तो से उस समय के लोग अवगत थे तथा वैद्य और हकीम ऐसे विषयों पर शोध किया करते थे। भौतिकी और चिकित्सा विज्ञान के विशेषज्ञ अत्रि का उल्लेख भी यह आवश्यक है जो तक्षशिला विश्वविद्यालय (ई से 600 वर्ष पूर्व) से सम्बन्धित थे।

उनके शिष्यो ने यूनानी चिकित्सा तथा शल्य चिकित्सा पर कई प्रकार की खोज की। इन शिष्यो मे जीवन अग्निवेश और भेल का नाम उल्लेखनीय है। स्वय अत्रि ने जडी-बूटियों से इलाज करने के ढग को सर्वप्रथम ई पू 6 ठीं शताब्दी में प्रयोग मे लाया। शल्य चिकित्सा से सम्बन्धित सुश्रुत नामक ग्रन्थ मे यह उल्लेख मिलता है कि उस काल मे लगभग 120 प्रकार के चीड फाड सम्बन्धी औजारो को चिकित्सक प्रयोग में लाते थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि उस काल के चिकित्सको को मनुष्य शरीर के सूक्ष्म और नाजुक हिस्सो के महत्त्व का ज्ञान था। चरक अपने काल के प्रसिद्ध वैद्य थे। चरक का ही सस्कृत मे कथन है—''वैद्य-हकीम को अपने मरीजो का प्रतिफल के लालच से इलाज नहीं करना चाहिए, बल्कि लालच व व्यापार से ऊपर उठकर एक मानवीय भावना के साथ पीडित रोगियो को स्वास्थ्य प्रदान करना चाहिये। जो चिकित्सा बेचते है, वे सोना खरीदने की बजाय मिट्टी खरीदते हैं।'

## भारतीय व यूनानी लेन–देन

सिकन्दर ने 325 ई पू मे जब भारत पर आक्रमण किया तो इसके परिणामस्वरूप यूनानी और भारतीय विज्ञान को पास-पास आने का अवसर उपलब्ध हुआ। आग, पानी और हवा से सम्बन्धित तत्त्वो की जानकारी का सिलसिला भारत से यूनान पहुचा। प्लेटो की पुस्तको में ऐसे सदर्भ प्राप्त होते है जो भारत की पुस्तको मे भी पाये जाते हैं। अरस्तू के एक शिष्य का कथन हे कि एक भारतीय विद्वान ने उन दिनो एथेस मे सुकरात से भेट की। इसी तरह मेगस्थनीज का कथन है कि चन्द्रगुप्त मोर्य के राज्यकाल मे पशु विज्ञान उन्नति पर था। अशोक के काल मे वनस्पति और दवाइयो इत्यादि पर अनेक शोध किये गये। कौटिल्य का ग्रन्थ ''अर्थशास्त्र'' तत्कालीन परिस्थितियो पर काफी प्रकाश डालता हे। यह ग्रन्थ यद्यपि अर्थशास्त्र से सम्बन्धित है, तथापि कई अन्य प्रारम्भिक सिद्धान्तो और दृष्टिकोणो का स्पष्ट रूप से बयान करता हैं। विशेष रूप से यह कि आर्थिक उन्नति के साथ-साथ वैज्ञानिक कार्यकलाप उस काल मे काफी सीमा तक आगे बढता गया।

बौद्ध धर्म के आने स भारतीय विज्ञान का द्विपक्षीय विस्तार हुआ। एक तो नालन्दा जैसा विश्वविद्यालय खुलने से शिक्षा प्राप्त करने कराने के स्रोत बढ गये और अन्तरिक्ष

विज्ञान तथा गणित पर शोध व अध्ययन-अध्यापन सम्बन्धी कार्य दिन-प्रतिदिन प्रगति करने लगा। दूसरे भारतीय सस्कृति के दक्षिण-पूर्वी और मध्य तथा पश्चिमी एशिया मे फैलने का दायरा बढ गया तथा सस्कृतियो के इस प्रकार मेल-मिलाप से कुछ वैज्ञानिक जानकारियो का लेन-देन बडे पैमाने पर होने लगा।

भारतीय शासक कनिष्क के काल मे ( ईसा की लगभग दूसरी शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षो मे) चरक का उल्लेख भी आवश्यक है जिसने औषधियो पर काफी महत्त्वपूर्ण शोध किए और कइ प्रकार की बीमारियो मूत्र सम्बन्धी रोगो तथा चर्म रोग सम्बन्धी बीमारियो क इलाज के तरीको को खोजा। इसी प्रकार चिकित्सा विज्ञान को आगे बढाने वालो मे सुश्रुत पाराशर हरत नागाजुन आर वररुचि के नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। 1715 ई मे एक ऐसा समय आया जब मसूर और हारुन ने औषधियो के विषय से सम्बन्धित भारतीय पुस्तको का अरबी भाषा मे अनुवाद किया। हारुन रशीद ने भारतीय चिकित्सको को बगदाद मे आमत्रित किया तथा उनकी सहायता से एक आधुनिक ढग का चिकित्सालय स्थापित किया। इसी काल मे कई भारतीय पुस्तको का अनुवाद तिब्बती तथा मगोल भाषा मे किए गये।

## प्राचीन खगोल विज्ञान

6ठीं शताब्दी मे वराहमिहिर ने खगोल विज्ञान के पाच नियमो का उल्लेख किया जो तत्कालीन समय मे भारत मे प्रचलित थे। ब्रिटिश इतिहासकार जे डी बरनाल लिखते है—' भारतीय विज्ञान (गणित तथा खगोल) मे तीन नाम बहुत ही उल्लेखनीय है—आर्यभट्ट, वराहमिहिर और ब्रह्मगुप्त। अरब के गणितज्ञों ने भारतीय काम को खूब अच्छे ढग से समझा तथा बीजगणित के विषय पर महत्त्वपूर्ण कार्य किया। आर्यभट्ट 476 ई मे पाटलिपुत्र मे पैदा हुए। उनकी यह खोज रहती दुनिया तक स्थापित रहेगी कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है। इस वैज्ञानिक ने त्रिकोणमिति, दशमलव, वर्ग, सूर्य तथा चन्द्र ग्रहण लगने के समय इत्यादि पर काफी जानकारिया प्रदान की है।''

वराहमिहिर (जन्म 555 ई ) ने खगोल और अन्तरिक्ष विज्ञान पर काफी उल्लेखनीय कार्य किया। उनकी पुस्तक ''पचसिद्धान्तका'' मे 6ठीं शताब्दी मे प्रचलित 5 खगोलीय तत्रो का उल्लेख है। ब्रह्मगुप्त ने भूमध्य रेखा और सरल रेखा तथा क्षेत्रफल इत्यादि पर नई खोज की। नागार्जुन ने रसायन पर, विशेष रूप से पारे पर, अन्वेषण सम्बन्धी कार्य किया।

धातु के बने हुए, भुवनेश्वर और कोणाक मे स्थित लौह स्तम्भ तथा दिल्ली मे स्थित लौह स्तम्भ (जो चौथी शताब्दी मे स्थापित हुआ) तत्कालीन समय मे धातु-निर्मित कला और विज्ञान के प्रशसनीय नमूने है। गणित तथा तारो से सम्बन्धित ज्ञान मे विद्वता प्राप्त व्यक्ति भास्कराचार्य थे जिन्होने इस क्षेत्र मे काफी प्रशसनीय कार्य किया। विज्ञान के क्षेत्र मे दो भास्कर हुए है—एक भास्कर सातवीं शताब्दी मे ब्रह्मगुप्त का हमउम्र था जिसने आर्यभट्ट पर एक विशेष समीक्षा 629 ई मे लिखी। इस भास्कर के नाम से तीन पुस्तके नामित की जाती है। दूसरा भास्कर एक प्रसिद्ध गणितज्ञ था। उसका जन्म 1114 ई मे हुआ था। उसने गणित के कई नये सिद्धान्त दिये।

ग्यारहवी शताब्दी का एक विदेशी यात्री अलबरूनी लिखता है–''भारत मे कई प्रकार के विज्ञान उन्नति पर थे। यदि जनता का ध्यान उन वैज्ञानिक विषयो की ओर आकर्षित कराया जाये तो ऐसे काम को बढ़ावा मिलेगा।

## मुगल काल

मुगलो की भारत पर विजय के साथ विज्ञान की उन्नति के कई और माध्यम उपलब्ध हुए। सिल्क रूई, दरी के कई किस्म के कपडे बनाने के कार्य औद्योगिक स्तर पर सामने आए। इससे पूर्व 'बारूद नामक चीज भारत मे नहीं थी। इसे मुगल ही अपने साथ भारत लाए। दूसरे भारत मे मुगलों द्वारा सत्ता सभालन के साथ ही नये ढग के हथियार बन्दूके इत्यादि बनाने तथा सडको और राजमार्गों के निर्माण के क्षेत्र में काफी कार्य किए गये। स्थापत्य कला, वास्तुकला और ललित कला के क्षेत्र मे भी मुगल काल मे काफी उल्लेखनीय कार्य हुआ। आज भी शाहजहा द्वारा बनवाया हुआ ताजमहल तथा लाल किला स्थापत्य कला के महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। मुगलो द्वारा स्थापित कई चीजे आज भी सम्पूर्ण देश मे यादगार के रूप मे भरी पडी हैं जो भव्यता और सौंदर्य मे अपनी मिसाल नहीं रखतीं। जहागीर के काल मे चित्रकला काफी उन्नति पर थी। अली मदान ने इन्जीनियर के रूप मे रावी नहर 1639 ई मे बनवाई और दूसरे शालीमार बाग का निर्माण करवाया।

एक अन्य उल्लेखनीय बात यह है कि कुछ हमलावर भारत मे केवल सम्पत्ति लूटने के उद्देश्य से आये थे। इसलिए वैज्ञानिक और समाज की उन्नति के क्षेत्र मे उनके द्वारा कोई सकारात्मक कदम उठाने का कोइ प्रश्न ही नही पैदा होता था। मुगलो से पूर्व जो आक्रमणकारी आये थे वे सास्कृतिक और वैज्ञानिक विचारो के आदान-प्रदान के चक्कर मे बिल्कुल नहीं पडे। दूसरे, उन्नतिपूर्ण काय शाति और स्थिरता के वातावरण से ही पनप सकते है युद्ध तथा अस्थिरता के वातावरण मे नहीं। इसी कारण विज्ञान की उन्नति के क्षेत्र में यह काल काफी नकारात्मक सिद्ध हुआ।

## यूनानी चिकित्सा

अब्बासी काल मे बहुत से प्रसिद्ध चिकित्सक यूनान और रोम से अपनी कला, अरबी, यूनानी चिकित्सा सम्बन्धी पाण्डुलिपिया और भारतीय चिकित्सा सम्बन्धी पुस्तकों के सीरियाई अनुवाद अपने साथ लाये। खलीफा ने भारतीय चिकित्सको को आमन्त्रण देकर तत्कालीन चिकित्सा सम्बन्धी भारतीय पुस्तको के अनुवाद कराये। फलस्वरूप 8वीं शताब्दी के अन्त तक अरब लोग चरक जैसे भारत की प्रसिद्ध आयुर्वेदिक हस्तियो से अवगत हो चुके थे।

मुसलमानो के भारत आगमन से यहा यूनानी-अरबी चिकित्सा पद्धति स्थापित हुई। वे लोग अपने साथ एक बहुमूल्य ग्रन्थ ''कराबादैन'' भी लाये जिसमे बहुत सी ऐसी दवाओं का उल्लेख मिलता है जो हमारे देश को नहीं मालूम थीं। चिकित्सा के आयुर्वेदिक ढग और विशेषत वे जडी-बूटिया जो यहा उपलब्ध न होने वाली दवाओ के स्थान पर प्रयोग में लाई जाती थीं, के मेल से यूनानी चिकित्सा पद्धति और अधिक लाभदायक बन गई। इस प्रकार

यूनानी, अरबी और आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति के मेल-जोल ने यूनानी चिकित्सा पद्धति को भारत में विस्तृत रूप से फैलाया।

भारत में यूनानी, अरबी दवाओं का ज्ञान सबसे पहले अरब व्यापारियों द्वारा गुजरात तथा मालाबार के क्षेत्रों में पहुचा जहा उन्होंने आकर बसना शुरू किया था। 1296-1316 ई में यूनानी, अरबी चिकित्सको के सन्दर्भ में बदरुद्दीन दमस्की का उल्लेख सर्वप्रथम मिलता है। वह चिकित्सकों के गुरु के नाम से भी प्रसिद्ध थे। कुछ अन्य चिकित्सकों और एक हिन्दू चिकित्सक महाचन्द का नाम भी उल्लेखनीय है।

बादशाह मुहम्मद तुगलक तथा फिरोजशाह तुगलक (1325-1388 ई) के काल में भारत में यूनानी चिकित्सा पद्धति की जड़ें काफी मजबूत हो गईं और दिल्ली के आसपास के क्षेत्रों मे इसकी काफी वृद्धि हुई। स्थान-स्थान पर चिकित्सालय खोले गये, चिकित्सा सम्बन्धी पुस्तकें लिखी गईं, जिससे चिकित्सकों के हौसलों में वृद्धि हुई। फिरोजशाह तुगलक स्वय भी एक प्रसिद्ध चिकित्सक था।

लोदी खानदान के जो सम्राट गुजरात तथा बीजापुर पर शासन करते थे, वे चिकित्सकों की बहुत इज्जत करते थे। उस दौर में चिकित्सकों ने सस्कृत तथा अरबी चिकित्सा सम्बन्धी पुस्तकों से कुछ महत्त्वपूर्ण भागों को लेकर पुन सकलित किया। ईरान, तुर्किस्तान, समरकन्द, बुखारा और काबुल से चिकित्सक तथा शल्य चिकित्सक भारत आये तथा अपनी पुस्तकें साथ लाकर अपनी चिकित्सा पद्धति को यहा स्थापित किया और चिकित्सा-सम्बन्धी विषयों पर पुस्तकें भी लिखीं जिससे चिकित्सीय ज्ञान की भारत में काफी उन्नति हुई।

जहागीर (1605-1627 ई) स्वय एक श्रेष्ठ हकीम था। उसने शिलाजीत के प्रभाव का पता लगाया तथा "तुजुके जहागीरी" लिखी। हकीम सदरा जहागीर का दरबारी हकीम था जिसको जहागीर ने सर्वश्रेष्ठ चिकित्सक घोषित किया था। शाहजहा के काल में सतीउन्निसा खानम नाम की एक महिला चिकित्सक थीं, जो शाही हरम में बेगमों की चिकित्सा के लिए नियुक्त की गई थीं। उसी काल में मुहम्मद अकबर अरजानी ने चिकित्सा के विषय पर अनेक पुस्तकें जैसे—'तिब्बे अकबर" और 'तिब्बे हिन्दी" इत्यादि लिखीं जो चिकित्सा क्षेत्र में काफी महत्त्वपूर्ण समझी जाती है तथा यूनानी चिकित्सा सम्बन्धी कालेजों के पाठ्यक्रम में सम्मिलित हैं।

पुर्तगालियों, फ्रासीसियों और अग्रेजों के भारत के आगमन से एलोपैथिक चिकित्सा पद्धति की जडे स्थापित हुईं किन्तु यूनानी चिकित्सा पद्धति भी साथ-साथ पनपती रही। उस काल के कुछ प्रसिद्ध चिकित्सकों के कारण ही यह चिकित्सा पद्धति स्थापित रही। इनमें हकीम सैय्यद मुहम्मद हुसैन का नाम उल्लेखनीय है जो "मखजनुल अदवेयह" के लेखक है। इस पुस्तक में 1500 चिकित्सा सम्बन्धी वनस्पतियो का उल्लेख है जो भारत में पायी जाती हैं। उसी काल में हकीम आजम खा ने चिकित्सा सम्बन्धी कई महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं। आज भी 4 भागों में सकलित उनका विशिष्ट प्रयास—"मोहिते आजम" यूनानी-चिकित्सा से सम्बन्धित एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक मानी जाती है। इस पुस्तक में कई हजार दवाओं की विशेषताए उल्लिखित है। इनके पश्चात इनके पुत्र हकीम मुहम्मद नजमुल गनी ने 'खजाएनुल अदवेया' लिखकर इस क्षेत्र में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने इसमें 2500 से अधिक दवाओं की विशेषताओं का उल्लेख किया है।

भारत की आश्चयजनक ''सुर्पगधा'' से हकीम अजमल खा का नाम कभी अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि उन्होने ही अपने शिष्य डा रसीद सिद्दकी और कुछ अन्य शिष्यो को इस आश्चर्यजनक दवा की जडो पर कार्य करने के लिए प्रेरित किया था और जिन्होंने पहली बार पाच अलक्लाइड्स की खोज की जिनमें तीन अलक्लाइड्स (अज्मलैन, अल्मलीइन ओर अज्मलैनिन) का नाम हकीम अजमल खा के नाम पर रखा गया।

## राजा जयसिह

ब्रिटिश साम्राज्य से पूव यानि 1728 ई में राजा जयसिह ने तारो के विषय पर कुछ शोध किये जिसे ''जज मुहम्मदशाही '' के नाम से याद किया जाता है। समरकन्द में इस विषय पर हुए कार्य को जगन्नाथ ने अपने काम के साथ मिलाया तथा जयपुर, उज्जैन, बनारस और मथुरा मे कइ वेधशालाये अस्तित्व मे आईं। सम्राट अकबर एक धर्म-निरपेक्ष और विद्वान व्यक्ति था, फिर भी हुकूमत के शासन-प्रबन्धो की ओर उसका ध्यान अधिक रहा, न कि वैज्ञानिक शोधो की ओर। बहरहाल, उस जमाने में कश्मीर में शालें बनाने का, आगरा में दरिया बनाने का और बगाल में खूबसूरत कपडे बनाने का कार्य बडे पैमाने पर किया जाता था। बल्कि इन स्थानों पर इतनी उत्कृष्ट चीजे तैयार होती थीं जिन्हे उन दिनों अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर रखा जा सकता था। वास्तव मे, उद्योग सम्बन्धी कार्य उस काल में, वैज्ञानिक कार्यों की तुलना में अधिक उन्नति पर था।

प्रारम्भ में ब्रिटिश शासको का भारत मे वैज्ञानिक सोच पैदा करने या वैज्ञानिक उन्नति के क्षेत्र में कुछ प्रगति करने का कोई विचार नहीं था, जबकि इसी दौर में यूरोप में विज्ञान काफी तेजी से प्रगति कर रहा था। विज्ञान और नयी-नयी औद्योगिक तकनीक के आविष्कार से मनुष्य की असीम क्षमताये स्पष्ट हुई और यूरोप ने प्राकृतिक शक्तियों पर नियन्त्रण प्राप्त करके उन्हे मानव की उन्नति के लिए प्रयोग करने की कमर कस ली। कबीलाई सीमाओ को समाप्त कर दिया और साथ-साथ देश की सुरक्षा तथा वैयक्तिकता को बढावा दिया।

वास्तव मे, विदेशी शासक यह नहीं चाहते थे कि एक गुलाम देश के निवासी ज्ञान विज्ञान के स्तर पर यूरोप के समकक्ष बन सके। इसीलिए अग्रेजो ने शासको और शासितों के बीच काफी दूरी बनाये रखी। उन्होने इस देश को कभी नहीं स्वीकारा और सदैव यहा गैर की तरह ही रहे।

18वीं शताब्दी में भारत की गिनती पिछडे देश के रूप मे होने लगी थी। यहा अन्तर्दृष्टि तथा चिन्तन समाप्त हो चुका था, महिलाये शिक्षा से वचित थीं, लोग शैक्षिक व वैज्ञानिक सोच-विचार से अनभिज्ञ थे तथा साथ-साथ इतिहास भूगोल और अन्य विषयों की वास्तविकता और उपयोगिता से भी अनभिज्ञ थे। नई रोशनी और शिक्षा से बडे-बडे लोग भी वचित थे। विदेश यात्रा को उचित नहीं समझा जाता था।

यह भारत का सौभाग्य था कि यहा राजा राममोहन राय जैसे प्रगतिशील विचार वाले तथा जनसेवा की भावनाओं से सराबोर व्यक्ति समाज के बीच पैदा हुए। उन्होने भारत की दिलचस्पी विज्ञान की ओर पैदा करने में बहुत सहायता की। उन्होने भारतीयों की सोई हुई इन्द्रियों तथा

विवेक को यह समझाया कि यदि भारत ने ज्ञान-विज्ञान की ओर पूरा ध्यान नहीं दिया तो यह अवश्य पिछड जायेगा तथा प्रगतिशील देशो के साथ कदम मिलाकर नहीं चल सकेगा।

## 19वीं सदी की क्रान्ति

भारत मे 19वीं सदी एक बहुत बडी क्रान्ति की गवाही देती है। इस दौर में कई नये-नये समाचार पत्र अस्तित्व में आये और साहित्य के क्षेत्र मे काफी तीव्र गति से उन्नति हुई। इस काल मे कुछ ऐसे उन्नति पसद व्यक्ति पैदा हुए जिन्होंने आधुनिकता, शोध, नयी रोशनी तथा वैज्ञानिक शिक्षा को भारत के लिए आवश्यक बताया।

ऐसे व्यक्तियों मे राजा राममोहन राय विशिष्ट प्रतिभा के धनी थे। उनमे असीम प्रतिभा, दृढता और सेवा भाव था। उन दिनो अग्रेज शासक तथा ब्रिटिश मिशनरिया भारतीय सभ्यता और सस्कृति पर चहु ओर से प्रहार कर रही थीं। राजा राममोहन राय का जन्म 1774 ई में बगाल के बर्दवान जिले मे हुआ। उन्होने यूनानी, लातीनी, अग्रेजी और अरबी भाषाओं में ईसाई धर्म तथा ज्ञान का अध्ययन किया और भारतीय उपनिषदों का तो उन्हें पूर्ण ज्ञान था ही। उन्होंने उपनिषद के सिद्धान्तों का प्रचार सिर्फ इस कारण किया कि उपनिषद तार्किक बातो पर आधारित है। राजा राममोहन राय ने भारतीयों को इस बात के लिए प्रेरित किया कि वे आत्मा और मस्तिष्क को निम्नता की ओर ले जाने वाले अधविश्वासों से निजात पायें तथा किसी बात को स्वीकार करने से पूर्व उसे तक की कसौटी पर कसें तथा अपनी सोच में वैज्ञानिकता लायें जिससे सम्पूर्ण भारत अन्य प्रगतिशील देशों के साथ कदम मिला कर चल सके। प्रारम्भ मे अग्रेजी शिक्षा का बहुत विरोध हुआ, किन्तु धीरे-धीरे शिक्षा के इस नये ढग की ओर लोगों का रुझान बढने लगा।

राजा राममोहन राय एक विद्वान तथा बुद्धिजीवी व्यक्ति थे। उन्होंने कुरान तथा अन्य दूसरी धार्मिक पुस्तकों का स्वय अध्ययन किया। तिब्बत के लामाओं से उन्होने बौद्ध धर्म की शिक्षा प्राप्त की। बनारस में सस्कृत तथा धर्मशास्त्रो का अध्ययन किया। वेदान्त, जैन धर्म ईसाई धर्म, इन सभी का उन्होने गहन अध्ययन किया तथा इनका उन्हें पूर्ण ज्ञान था। बाइबिल को उसकी अपनी भाषा मे पढने के लिए उन्होने हिब्रू और यूनानी भाषाए सीखीं तथा अनेक देशो जैसे ब्रिटेन इत्यादि का उन्होंने भ्रमण किया। 1832 ई में उनकी ब्रिस्टल में मृत्यु हो गई।

राजा राममोहन राय का एक पत्र जिसे 11 दिसम्बर, 1823 ई को लार्ड एमहर्स्ट को लिखा गया था काफी महत्त्वपूर्ण है। यह पत्र वस्तुत उस योजना के विरोध में है जिसके तहत ब्रिटिश सरकार बडे पैमाने पर भारत में सस्कृत विद्यालय खोलना चाहती थी। इस पत्र मे राजा राममोहन राय लिखते है—''यदि आप ब्रिटेन में लोगो के ज्ञान-विज्ञान का जायजा लें तो आप यह मान जायेगे कि लार्ड बेकन का ज्ञान-विज्ञान पर इतना व्यापक प्रभाव नहीं पडा था जितना बेकन के लेख पढने और वैज्ञानिक तथा तार्किक दृष्टिकोण पैदा किए जाने के बाद हुआ। यू समझिये कि यदि ब्रिटेन मे पुरानी तर्ज पर शिक्षा प्रदान की जाती तो आज का अग्रेज न इतना प्रगतिशील हो पाता और न ही वैज्ञानिकता से इतना लाभ उठा पाता। इसलिए यदि विस्तृत पैमाने पर भारत मे मात्र सस्कृत की शिक्षा दी जायेगी तो स्पष्ट है

कि ऐसी शिक्षा से देश पिछडेपन की ओर ही जायेगा तथा नई रोशनी से प्रकाशित न हो सकेगा। ऐसी स्थिति में यदि सरकार यह चाहती है कि भारतीय अर्थव्यवस्था प्रगति की ओर उन्मुख हो तो सरकार को अधिकाधिक स्वतत्र तथा नई शिक्षा नीति अमल मे लानी चाहिये। इस विचार को ध्यान मे रखते हुए पाठ्यक्रम में गणित भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, प्राकृतिक विज्ञान तथा अन्य उपयोगी विषयो को सम्मिलित किया जाना चाहिये। इस कार्य को सफल बनाने के लिए उच्चस्तरीय शिक्षको को भारतीय स्कूलों तथा कालेजों मे भर्ती किया जाना चाहिये। दूसरे ऐसे कालेजो में आवश्यक पुस्तको, प्रयोग सम्बन्धी उपकरण तथा अन्य उपयोगी उपकरण उपलब्ध किए जाने की आवश्यकता है।''

## एक नया वातावरण

राजा राममोहन राय के पत्र की यानि भारत की नयी लाभदायक शिक्षा योजना की दूसरे विद्वानो ने बहुत प्रशसा की तथा इसे अपना समर्थन दिया। इसके अतिरिक्त जॉन मिल तथा बेन्थम ने भी ब्रिटिश सरकार की भारतीय शिक्षा नीति को एक सीमा तक एक नया मोड दिया। आधुनिक शिक्षा को कार्यान्वित करने में ईसाई मिशनरियो का बडा योगदान था। बल्कि यहा अग्रेजी शिक्षा का प्रारम्भ उन्हीं के माध्यम से हुआ। कुछ यूरोपीय चिन्तको ने भगवत् गीता, महाभारत, अभिज्ञान शाकुन्तलम् तथा वेदों का अनुवाद भी अग्रेजी भाषा मे किये। इस प्रकार भारत मे सामान्य तथा वैज्ञानिक शिक्षा के लिए एक शैक्षिक वातावरण उत्पन्न होने लगा।

राजा राममोहन राय के साथ-साथ सर सैय्यद अहमद खान का उल्लेख भी आवश्यक है। सर सैय्यद उच्च शिक्षा प्राप्त और सवेदनशील व्यक्ति थे। आपके जीवन का अधिकाश समय दिल्ली तथा उत्तर प्रदेश मे व्यतीत हुआ। आप शिक्षा को आम बनाने तथा वैज्ञानिक शिक्षा को बढाने के पक्षपाती थे। वे पाश्चात्य सभ्यता तथा आधुनिक शिक्षा पद्धति को अपनाने के पक्ष मे थे। उनका नौकरी, मित्रता तथा परिचय के माध्यम से अग्रेजों का गहरा सम्बन्ध रहा और अग्रेजों के जीवन का बहुत करीब से अध्ययन करने का उन्हें अवसर मिला। अग्रेजों की प्रतिभा तथा कार्य करने की उनकी लगन ने उन्हे काफी प्रभावित किया। उनका विचार था कि इस नयी रोशनी से मुसलमानो का निम्न भावना से ग्रसित होना तथा उनका गुलामी का अहसास समाप्त हो जायेगा और नयी शिक्षा से प्रकाशित मुसलमान एक सम्मानित तथा अन्य अग्रणी वर्गो के बराबर के स्थान को प्राप्त कर सकेगा।

मिस्टर ग्राहम सर सैय्यद की जीवनी (अग्रेजी मे ) में लिखते है—''सर सैय्यद का विचार था कि आधुनिकता और विज्ञान के द्वारा ही हमारा देश उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकता है।'' सर सैय्यद ने अलीगढ कालेज की स्थापना की और मुस्लिम यूनिवर्सिटी का बुनियादी पत्थर जनवरी 1877 ई मे रखा। शिक्षा के प्रसार का यह कार्य कालान्तर मे काफी उपयोगी सिद्ध हुआ। उस समय के वाइसराय लार्ड लॉरेन्स ने सर सैय्यद की शैक्षिक और सामाजिक सेवाओ को ध्यान मे रखते हुए उन्हे एक स्वर्ण पदक तथा लार्ड मैकाले की पुस्तकें प्रदान कीं। सर सैय्यद ने मुसलमानो को आधुनिक शिक्षा की ओर प्रेरित करने

तथा आधुनिक दृष्टिकोण अपनाने के लिए अपन दोनो पुत्रों को उच्च शिक्षा के लिए ब्रिटेन भेजा। उन्होने मोहम्मडन एजूकेशनल कान्फ्रेस की स्थापना की जो प्रतिवर्ष शिक्षा से सम्बन्धित कार्यक्रमों को आयोजित करवाती थी तथा अधिक से अधिक सख्या मे शैक्षिक सस्थाओ को खोलने का काम कराती थी। इस कान्फ्रेस ने मुसलमानों में आधुनिक शिक्षा को फैलाने और उनके विरुद्ध दुष्प्रचार का खण्डन करने का भी कार्य किया। ज्यो-ज्यों समय बीतता गया पुरानी मूढ विचारधाराओं का स्थान नई और तार्किक विचारधारा ग्रहण करती गई तथा आधुनिक शिक्षा प्राप्त करने वालों की सख्या में वृद्धि होती गई। डा ताराचन्द के अनुसार—''सर सैय्यद अहमद की इच्छा थी कि विज्ञान और स्वतन्त्र विचारों की ताजी हवाए मुसलमानो तक पहुचे तथा उनके भीतर जीवन का नया प्राण भरें।' सर सैय्यद का प्रयास यही रहा कि वह मुसलमानों के लिए एक ऐसा माध्यम पैदा करें जिससे वे अपने धर्म पर कायम रहते हुए उस आधुनिक जीवन को अपना सकें जो पाश्चात्य शिक्षा से उत्पन्न प्रगति के आधार पर अस्तित्व में आई है। सर सैय्यद के अतिरिक्त उनके शिक्षा सम्बन्धी प्रयासो को एक सीमा तक हाली और नजीर अहमद ने पूरा किया।

1857 ई की क्राति के पश्चात दो नेतृत्व उभर कर सामने आये। पहले नेतृत्व का चरित्र धार्मिक था जिसके अग्रणी धार्मिक नेता थे। जबकि दूसरे नेतृत्व के अग्रणी सर सैय्यद अहमद खान, उनके साथी तथा कुछ अन्य आधुनिक विचारों वाले व्यक्ति थे। धार्मिक नेताओं का विचार था कि इस्लामी सस्कृति की जितनी वैचारिक धरोहर है उसे सुरक्षित रखने का प्रयास किया जाए तथा इस्लामी सभ्यता और सस्कृति की किले बन्दिया कर दी जायें तथा अरबी मदरसों में धर्म प्रचारको और धर्म गुरुओं को तैयार किया जाए। 'नदवतुला उल्मा' की नींव रखने वालो ने प्राचीन और आधुनिक शिक्षाओं की अच्छाइयों को मिश्रित करने का प्रयास किया। इसके साथ-साथ यह भी प्रयास किया गया कि धार्मिक शैक्षिक पाठ्यक्रम इस ढग से तैयार किया जाये जो प्रगतिशीलता का वाहक हो। ''हयात-ए-शिवली'' के अनुसार—

'अब नयी शिक्षा है नयी समस्याए है, नये शोध है और अब इस बात की आवश्यकता है कि हमारे धर्मगुरु इन नयी चीजों से अवगत होकर इस्लाम की नयी समस्याओ का हल निकालें और इनका तार्किक जवाब दें।''

दुर्भाग्य से इस विचार को प्राचीन और आधुनिक दोनों वर्गों का प्रभावी और जोरदार समर्थन प्राप्त न हो सका जिसके वह योग्य था। इसका सबसे प्रमुख कारण योग्य चिन्तकों का अभाव था जो स्वय भी इन दोनो विचारों के मिश्रण के वाहक हो और इन दोनों विचारों की अच्छाइयों को अच्छी तरह आत्मसात कर चुके हों और जो उन तत्वों से जो एक दूसरे के विपरीत दिखाई देते है एक पवित्र सतुलित, खुशगवार और अच्छा सतुलन स्थापित कर सके जिस प्रकार शहद की मक्खी भिन्न-भिन्न फूलों और पौधों से रस प्राप्त करके शहद तैयार करती है। अकबर इलाहाबादी ने इस स्थिति का इस ढग से बयान किया है—

''इधर ये जिद है कि लेमेन्ट भी नहीं छू सकते
उधर ये रट है कि साकी सुराही ए मै ला''

बहरहाल 'नदवतुल उल्मा' के आन्दोलन के अग्रणियो ने पुस्तकों, मैगजीनो और लेखो के माध्यम से भारत की आधुनिक पीढी की हीनता की भावना को दूर करने मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई और लोगों को इतिहास, इस्लाम, दर्शन और साहित्य की ओर उन्मुख किया, यद्यपि विज्ञान की ओर न सही।

## सर सैय्यद अहमद खा का योगदान

सर सैय्यद का शिक्षा के क्षेत्र मे योगदान का उल्लेख पिछले पृष्ठो मे आ चुका है। अब उनके बारे मे विस्तृत रूप से कुछ कहा जाए। वह एक ऐसे शक्तिशाली व्यक्तित्व के धनी थे जिससे अधिक शक्तिशाली व्यक्तित्व उस समय के व्यक्ति मे दिखाई नहीं देता। उन्होंने बडे स्तर पर एक वैचारिक युद्ध जारी रखा। जिस आन्दोलन का उन्होने नेतृत्व किया उसे बहुत सफलता प्राप्त हुइ और उन्होने मुसलमानों की नयी पीढी को इतना अधिक प्रभावित किया जितना कोई अन्य आन्दोलन नहीं कर सका। सर सैय्यद अहमद खान के शक्तिशाली व्यक्तित्व का प्रभाव भारत के इस्लामी समाज पर पडा। उन्होने भाषा, साहित्य तथा चिन्तन शैली सभी को प्रभावित किया तथा एक ऐसे साहित्यिक और वैचारिक वर्ग की आधारशिला रखी जिसके अन्तर्गत कालान्तर मे बडे-बडे व्यक्तित्व उत्पन्न हुए।

उसी दौरान कई समाचार पत्र और पत्रिकाये भी जारी हुईं जिसमें वैज्ञानिक जानकारियो को किसी न किसी रूप मे प्रस्तुत किय जाता था। एक स्थान पर गारसन दतासी 1876 ई के अपने एक लेख में लिखते है—''अभी कुछ समय की बात है कि भारत जाहिलो का देश कहा जाता था जबकि यह कभी शिक्षा, सस्कृति और कला का केन्द्र था। जबसे समाचार पत्रों की छपाइ प्रारम्भ हुई है, हमारी मोजूदा स्थिति पर प्रकाश पडने लगा है। यह सच है कि प्राचीन प्रशसा की तुलना मे हमारे दिन अधिक बेहतर है। समाचार पत्रो ने देश में शिक्षा का जो हल्का-हल्का प्रकाश फैला दिया है उसने अशिक्षा के अन्धेरे को दूर किया है। लोगों में विज्ञान और सस्कृति की इच्छा आम होती जा रही है।''

इसी प्रकार गारसन दतासी एक अन्य स्थान पर सितम्बर, 1877 ई के अपने ''लेख'' मे लिखते है ''एक पुस्तक -'हरकियात व सुकूनयात' के नाम से पण्डित कृपाराम ने अनुवाद की है। 'नवीन पचाग' नामक जन्त्री भी उल्लेखनीय है। यह पाश्चात्य विचारों पर आधारित हे। इसके लेखक बलवन्त राव नायक शास्त्री है, जिनके भाई ने यह सिलसिला प्रारम्भ करके हिन्दुओं का खगोल-शास्त्र के क्षेत्र में कायापलट कर दिया था।

दतासी एक स्थान पर अपने भाषण मे कहते है—''बीते मार्च 1869 ई में जयपुर के राजपूताना सोशल साइस काग्रेस का समारोह आयोजित हुआ। इस सगठन का उद्देश्य यह है कि कुछ सस्थाए स्थापित की जाए और शेक्षिक पाठ्यपुस्तकों की छपाई बढाई जाये। दूसरे यह भी ध्यान मे रखा गया है कि इन सस्थाओ मे ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिये जो गणित, रसायन, भौतिकी, अर्थशास्त्र इत्यादि से सम्बन्धित हो।''

मौलाना हाली पानीपती ने कौम का दु ख-दर्द अनुभव किया तथा शिक्षा के माध्यम से ही कौम की उन्नति का हल ढूढा। हाली के एक लेख से उद्धृत एक अश इस प्रकार

है—"इबादत से इल्म बेहतर है। यानि स्वय को अतिवादी एवम् परहेजगार बनाना कमाल नहीं है, बल्कि एक अच्छा इन्सान बनना अधिक महत्त्वपूर्ण है जिसके लिए आधुनिक शिक्षा की आवश्यकता है। शिक्षा को प्रकाश कहा गया है और अशिक्षा की अधेरे से उपमा दी गई है। अशिक्षित व्यक्ति सकीर्ण दृष्टिकोण वाला है और बदचरित्र हो जाता है जबकि एक विद्वान तथा शिक्षित व्यक्ति के पास चरित्र, नम्रता, प्रेम और हमदर्दी सभी कुछ होती है। उच्च शिक्षा उज्ज्वल भविष्य और अच्छे इन्सान पैदा करने की गारटी है।"

राजा राममोहन राय भारत के यूरोपीय तथा वैज्ञानिक शिक्षा के प्रसार के प्रबल समर्थक थे। उन्हीं के समय मे वारेन हेस्टिग्ज ने भारत मे शिक्षा को अधिक से अधिक क्षेत्रो मे फैलाने की योजना बनाई। 1830 ई मे हेस्टिग्ज जब भारत आये तो राजा राममोहन राय ने उन्हें अग्रेजी स्कूल खोलने के लिए अपना मकान भी दे दिया तथा छात्र भी उपलब्ध कराये। 1781 ई में कलकत्ता मे एक मदरसा स्थापित किया गया तथा 1891 ई में बनारस सस्कृत कालेज। 1784 ई मे कलकत्ता मे एशियाटिक सोसाइटी की नींव पडी जिसके सर्वेसर्वा सुप्रीम कोर्ट के जज सर विलियम जोस थे जिन्होने शोध सम्बन्धी कार्यों की ओर भारतीयो का ध्यान आकर्षित किया तथा पूर्व के वैज्ञानिको और विद्वानो में वैज्ञानिक विवेक उत्पन्न किया। 19वीं शताब्दी के मध्य तक इस सोसाइटी से सर जगदीश चन्द्र बसु, पी सी राय, आशुतोष मुखर्जी और अन्य कई वैज्ञानिक सम्बद्धित रहे जिनकी बदौलत शोध तथा अन्वेषण का कार्य जनता तक पहुचा। इसी सोसाइटी की बिना पर कलकत्ता में हिन्दुस्तानी अजायबघर की नींव पडी।

## आधुनिक शिक्षा की सम्भावनाये

1800 ई मे फोर्ट विलियम कालेज भी खुल गया। 1818 ई में एक बगाली अखबार 'दिग्दर्शन' जारी हुआ जो जनता को वैज्ञानिक व शिक्षा सम्बन्धी जानकारिया उपलब्ध कराता था। विलियम कैरी ने 1814 ई में ब्रिटिश हुकूमत को एक सुझाव दिया कि भारतीयों को यूरोपियन-वैज्ञानिक शिक्षा देने की अच्छी व्यवस्था की जानी चाहिए। 1817 ई में कलकत्ता मे एक कॉलेज की स्थापना की गई जिसमें भूगोल, खगोलशास्त्र तथा गणित की शिक्षा विशेष रूप से दी जाती थी। शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे कदम उठाये जाने से कम से कम बगाल में तो विज्ञान की शिक्षा के लिए दरवाजे खुल ही गये।

1827 ई मे कलकत्ता के मदरसे मे यूनानी चिकित्सा की और सस्कृत कालेज में आयुर्वेद की शिक्षा की व्यवस्था कर दी गई।

1825 ई मे दिल्ली में प्राच्य शिक्षा के लिए दिल्ली कॉलेज खोला गया और तीन वर्ष पश्चात उसी कालेज में अग्रेजी की शिक्षा भी प्रारम्भ कर दी गई। इस कालेज ने आज तक अनेक विद्वान पैदा किए है। 1835 ई में लार्ड बेटिक ने घोषणा की कि भारत में शिक्षा का माध्यम अग्रेजी होगा। इस घोषणा के पश्चात तीव्र गति से स्कूल और कॉलेज खुलने लगे और खुलते गये।

1825 ई में कलकत्ता मेडिकल कालेज की नींव पडी और उसके दो वर्ष पश्चात मद्रास मे क्रिश्चियन कालेज की। 1824 ई में कलकत्ता मे, 1841 ई में मद्रास मे मौसम सम्बन्धी

भविष्यवाणियो हेतु केन्द्र स्थापित किए गये और 1847 ई मे रुडकी मे इन्जीनियरिग कालेज खोला गया। 1858 ई मे मद्रास स्कूल को मेडिकल कालेज मे परिवर्तित कर दिया गया। 1850 ई मे भारत मे रेलवे लाइन का जाल बिछाना प्रारभ किया गया। 1856 ई मे बगाल इन्जीनियरिग कालेज तथा अजायबघर और 1857 ई मे बबई, कलकत्ता तथा मद्रास विश्वविद्यालय स्थापित किए गये। इस प्रकार शिक्षा के क्षेत्र मे भारत मे आधुनिकता आई और इस प्रकार की शिक्षा से लोगो के चितन तथा दृष्टिकोण मे काफी सकारात्मक परिवर्तन आया।

## दयानन्द सरस्वती का नया दृष्टिकोण

स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म सन् 1824 ई मे हुआ। उन्होंने अपने सिद्धान्तो को बहुत वैज्ञानिक ढग से प्रस्तुत किया। उन्होने छुआछूत जात-पात, मूर्ति पूजा तथा अन्धविश्वासो का निडरतापूर्वक खण्डन किया तथा 'आर्य समाज' की स्थापना की जिसकी बदौलत हिन्दुओ के एक तबके को नकारात्मक परम्पराओ तथा प्रथाओ से मुक्ति मिली और शिक्षा की मशाल भारतीय समाज में एक नई रोशनी लेकर आई। रामकृष्ण एक हमदर्द सूफी थे जिन्होने इस सिद्धान्त का प्रचार किया—"इन्सान पर रहम की नहीं बल्कि उसकी खिदमत को ही इबादत समझो।" दूसरे शब्दो मे उन्होंने मानवता से प्रेम और नि स्वार्थ सेवा की भावना का प्रचार किया। ऐसे प्रचार से भारत मे वैज्ञानिक दृष्टिकोण युवा हुआ और कम से कम हिन्दुओ के पढे लिखे तबके के सोच में परिवर्तन पैदा हुआ।

रामकृष्ण परमहस 1836 ई मे एक ब्राह्मण परिवार मे पैदा हुए। यद्यपि दृष्टिकोण के विचार से वह पुराने विचारो के व्यक्ति थे किन्तु आधुनिक शिक्षा के वह बिल्कुल भी विरोधी न थे। उन्होने आम दृष्टान्तो के माध्यम से लोगो को अपनी बाते समझाई। अपने दृष्टिकोण को उन्होंने दार्शनिकों की भाति प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि वह सूफियो की भाति व्यावहारिक बाते करते थे, सिर्फ वही बाते जो उनके आसपास घटित होती थीं।

## स्वामी विवेकानन्द

वैसे तो रामकृष्ण परमहस के बहुत से शिष्य थे, लेकिन उनमे से विवेकानन्द को सबसे अधिक इज्जत और प्रसिद्धि प्राप्त हुई। विवेकानन्द ने अमेरिका, फ्रास और ब्रिटेन में लोगों को अपने विचारों व दृष्टिकोण से बहुत प्रभावित किया। उन्होने हिन्दू सिद्धान्तों को नये

आयाम के साथ प्रस्तुत करने मे अपनी दक्षता दिखाई। विशेषत वेदान्त को लोकप्रिय बनाने मे उन्होने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। विवेकानन्द ने वेदान्त दर्शन को इसलिए महत्ता दी क्योकि वेदान्त वस्तुत अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण बातो को भी सामान्य ढग से समझाने की कोशिश करता है। यह एकता पर बल देता है तथा साथ-साथ क्षणिक चीजो की तुलना मे शाश्वत चीजो पर अधिक बल देता है। यह विभिन्नता मे एक्ता तथा अनेकता में एकता की शिक्षा देता हे। यह मानवता मित्रता सेवा, त्याग आस्तिकता तथा सहनशीलता की शिक्षा देता है।

19वीं शताब्दी मे जिन व्यक्तियो ने भारत मे शिक्षा विशेषत वैज्ञानिक शिक्षा के प्रसार पर जोर दिया, उनमे मोहिन्दर लाल, बकिम चन्द्र कश्यप चन्द्र, अब्दुल लतीफ खा तथा राजेन्द्र लाल मित्र का नाम उल्लेखनीय है।

## एक व्यापक दृष्टिकोण वाला सुधारक

नवाब अब्दुल लतीफ खा एक व्यापक दृष्टिकोण वाले पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त व्यक्ति थे। उन्होंने 1863 ई मे एक पुरस्कार की घोषणा की जो ऐसे व्यक्ति को दिया जायेगा जो इस विषय पर लेख लिखेगा कि 'अग्रेजी माध्यम में यूरोपीय शिक्षा मुसलमान छात्रो के लिए किस सीमा तक लाभदायक हो सकती है। दूसरे, ऐसी शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए क्या व्यावहारिक कदम उठाये जाने चाहिये।'' इस विचार से नवाब ने उसी वर्ष 'मोहम्मडन लिटरेरी सोसाइटी' स्थापित की। अब्दुल लतीफ खा और राजेन्द्र लाल मित्र ने मोहिन्दर लाल को साइस एसोसिएशन की नींव रखने मे बहुत सहायता की। कश्यप चन्द्र ने 1870 ई मे एक टेक्निकल स्कूल खोला तथा 1875 ई मे अमृत बाजार पत्रिका के सम्पादक शिशिर कुमार घोष ने तकनीकी शिक्षा को बढाने के उद्देश्य से एक ''इण्डियन लीग' और दो वर्ष पश्चात मोहिन्दर लाल की सहायता से ''एलबर्ट टेम्पुल ऑफ साइस'' की स्थापना की गई। ऐसी सस्थाए वैज्ञानिक और तकनीकी कार्यो के प्रति अधिक दिलचस्पी पैदा करने मे अत्याधिक मददगार सिद्ध हुई। आखिरकार सस्थाओ का उद्देश्य यही होता है कि जनसामान्य इनसे लाभ उठाये और शिक्षा प्राप्त करे।

मोहिन्दर लाल ''साइस एसोसिएशन'' के सर्वेसर्वा थे और वह इस सस्था को राष्ट्र की प्रगति के साथ जोडना चाहते थे। 1920 ई मे उनकी मृत्यु हो गई। मृत्यु से पूर्व अपने

एक पत्र मे उन्होने यू लिखा– 'यदि हमारे देश को वास्तव मे उन्नति करना है और उन्नतिशील देशो मे शुमार होना है तो उसे विज्ञान का ही सहारा लेना होगा। यही सच्ची देशभक्ति है कि विज्ञान के महत्त्व के बारे मे जनता को बताया जाए।''

सर आशुतोष मुखर्जी, डा सरकार पण्डित मदनमोहन मालवीय, सर जमशेद जी टाटा, तारक नाथ पलटा और रास बिहारी बोस ने मोहिन्दर लाल की मृत्यु के पश्चात भारतीय विज्ञान को बहुत आगे बढाया। इधर ''साइस एसोसिएशन'' को सर वी सी रमन ने सभाल लिया। रमन की प्रतिष्ठा 1907 ई तक यूरोप तक स्थापित हो चुकी थी तथा वैज्ञानिक काम-काज भी प्रयोगशालाओ मे अधिक से अधिक होने लगे थे। साइस एसोसिएशन को जीवित रखने और राष्ट्र के हित के लिए कार्य करने मे रमन के अतिरिक्त एस के मित्र और मेघनाथ साहा ने बहुत गर्मजोशी से कार्य किया।

## कलकत्ता का सेट जेवियर कॉलेज

1860 इ मे कलकत्ता मे सेट जेवियर कॉलेज स्थापित हुआ जिसमे फादर जान लेफेन्ट एस जे भारतीय विज्ञान और विशेषन बगाल मे विज्ञान के क्षेत्र के बहुत महान व्यक्तित्व सिद्ध हुए। उन्होने इस कालेज मे विज्ञान की शिक्षा को स्थापित करने तथा बढावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस ईसाई पादरी और वैज्ञानिक ने विज्ञान के विषय पर कई भाषण तथा लेख लिखे। उनके इस कार्य मे डॉ सरकार उनके सहयोगी बने रहे। लेफेन्ट एक ही समय मे सेट जेवियर कॉलेज, साइस एसोसिएशन तथा बगाल की एशियाटिक सोसाइटी और कलकत्ता विश्वविद्यालय के विज्ञान-विभाग को आगे बढाते रहे। यह उनकी निष्ठा, लगन और योग्यता का ही प्रमाण है।

1908 ई मे उनकी मृत्यु हो गई। उन्होने भारत मे वैज्ञानिक शोध और शिक्षा के क्षेत्र मे बहुत उल्लेखनीय कार्य किया। वह भारत मे आधुनिक विज्ञान के अग्रणी सिद्ध हुए। लेफेन्ट प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र बसु के आचार्य भी थे। यही सब कारण है कि उनकी इज्जत देश के हर कोने मे की जाती थी।

## आधुनिक अन्वेषण

लगभग सम्पूर्ण 19वी सदी मे भारतीय विज्ञान नयी-नयी कल्पनाओ तथा अन्वेषणो को अपनी अनुसूची मे सम्मिलित करता रहा। सम्पूर्ण देश मे कॉलेजो तथा विश्वविद्यालयो के खुलने से शिक्षा का जोर बढता गया और नई पीढी उच्च तथा तकनीकी शिक्षा से प्रकाशित होती रही। हा, एक बात अवश्य ही उल्लेखनीय है कि भारतीय विज्ञान यूरोप की तुलना मे शोध के क्षेत्र मे उन्नति के अधिक अवसर न पैदा कर सका। कारण स्पष्ट है कि उन दिनो नई शिक्षा अपनी प्रारम्भिक अवस्था मे थी। इसके बावजूद भारतीय मस्तिष्क और विवेक यूरोप की तुलना मे काफी शक्तिशाली और लगनयुक्त सिद्ध हुआ। इसी सदी मे एक योग्य प्रोफेसर रामचन्द्र ने दिल्ली और रुडकी मे गणित के प्रवक्ता की हैसियत से अपने लेखो में अपनी योग्यता का परिचय स्पष्ट रूप से दिया। उनकी एक पुस्तक 1850

इ मे प्रकाशित हुई। ''बगाल की बुलबुल' सरोजिनी नायडू क पिता डॉ अगवर नाथ चटर्जी पहले रसायनशास्त्री थे जिन्होंने यूरोप मे डी एस सी की डाक्टरेट की डिग्री प्राप्त की। सर आशुतोष मुखर्जी एक विद्वान गणितज्ञ थे जिन्होंने कई शोध-लेखो से भारतीय विज्ञान को समृद्ध किया। एक ऐसा भी समय आया जब मुखर्जी साहब कलकत्ता विश्वविद्यालय के वाइस चासलर नियुक्त हुए। उन्होंने विज्ञान की उच्च शिक्षा तथा शोध के कई कार्यक्रम बनाये जिससे 19वीं शताब्दी मे विज्ञान के क्षेत्र में काफी उन्नति हुई किन्तु शोध अन्वेषण का कार्य बहुत बडे स्तर पर न हा सका और यह कार्य जगदीश चन्द्र बसु आचाय प्रफुल्ल चन्द्र राय सी बी रमन इत्यादि पर छोड दिया गया कि आने वाले वर्षो मं वे वैज्ञानिक कामकाज को सफलतापूर्वक आगे बढाए।

## 20वीं सदी की महत्ता

भारतीय इतिहास मे 20वीं शताब्दी का काफी महत्त्व है। इसी सदी में देश में आजादी के लिए आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। इकबाल, चकबस्त सुरूर, अकबर इलाहाबादी, हाली और जोश की देशभक्तिपूर्ण नज्मो ने भारतीयों को एक नयी समझ दी तथा उन्हे आजादी प्राप्ति की ओर उन्मुख किया। गाधी जी के नेतृत्व मे देश मे देशभक्ति की भावना और मजबूत हुई। शिक्षा का प्रसार होता रहा और जब हमारा मस्तिष्क तथा विवेक जागा तो देश भी स्वतन्त्र हो गया।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात हमे देश की उन्नति और खुशहाली के लिए योजनाए बनानी पडीं और वेज्ञानिक तौर-तरीको तथा खोज व अन्वेषण सम्बन्धी कार्यो को बहुत बढावा मिला। इन वर्षों मे नये-नये वेज्ञानिक उभरे जिन्होन अपनी प्रतिभा से देश को समृद्ध किया। आधुनिक विज्ञान ने इस सदी मे बहुत उन्नति की। कई वैज्ञानिक तथा शोध-सम्बन्धी सस्थाए स्थापित हुई जिनमे उद्योग तथा विज्ञान की उन्नति के कार्य दिन-प्रतिदिन बढते गये। वास्तव मे प्रकृति ने केवल मनुष्य को ही अक्ल दी है जिससे वह प्रकृति की अनेक उपयोगी चीजो को प्रयोग मे लाने योग्य बना सके। जिगर मुरादाबादी के अनुसार–

घटे अगर तो बस इक मुश्ते खाक है इन्सा
बढे तो वुसअते कौनेन में समा न सके।

आचार्य जगदीश चन्द्र बसु आधुनिक विज्ञान के अग्रणी लोगों में से थे। आप दृढ विचारो वाले एक योग्य वेज्ञानिक थे। विज्ञान की दयनीय स्थिति पर एक बार आपने कहा था– 'हमारे यहा भारतीयो की एक आम आदत हे कि पिछडेपन के लिए किसी एक व्यक्ति पर सारा आरोप थोप दिया जाता है या तो विश्वविद्यालय पर या सरकार पर या स्थिति की प्रतिकूलता पर। किन्तु किसी व्यक्ति को यह शोभा नहीं देता कि वह सिर्फ शिकायतो का दफ्तर खोल ले, बल्कि होना यह चाहिये कि प्रतिकूल परिस्थितियों का डटकर मुकाबला किया जाये समस्याओ का हल तलाश किया जाये और फिर उन पर सफलता पाने की भरपूर कोशिश की जाये। ' यू कहिए कि आचार्य बसु ने वैज्ञानिको को इस ओर आकर्षित किया कि वे देश की प्रगति को ध्यान मे रखते हुए दृढता से काम ले।

आचार्य बसु ने भारतीय विज्ञान का नये-नये आयामो से समृद्ध किया। उनकी मृत्यु पर यूरोप मे 1937 ई मे एक पुस्तक प्रकाशित हुई जिसमे कहा गया था कि "बसु का अन्वेषण भारत मे अपने समय से बहुत आगे था और यह अन्वेषण इतना प्रशसनीय था कि सीमित शब्दो मे उसे व्यक्त नहीं किया जा सकता।" बसु के अन्वेषण ने नये वैज्ञानिको को बहुत रोशनी दी। उन्होने यह खोज निकाला कि पेड और पौधे भी मनुष्यो और पशुओं की ही भाति होते है। वे सास लेते है और अपनी खुराक हासिल करते है। त्याज्य पदार्थो को उत्सर्जित करते है, अनुभव करते है, प्रसन्न और दुखी होते है, बढते है तथा वश वृद्धि करते है। बसु की एक अन्य खोज यह थी कि तारो की सहायता के बिना भी सदेश एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजे जा सकते है। उनके द्वारा आविष्कृत यत्र का नाम क्रेसोग्राफ है जिसके माध्यम से पौधों की वृद्धि को रिकार्ड किया जाता है। यह यत्र अति धीमी गति और हरकतों को एक करोड गुना अधिक करके दिखाता है।

## भारतीय रसायन का सम्राट

आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र भारतीय रसायन के पिता कहे जाते है। उन्होंने 1888 ई में एडनबर्ग से डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की तथा कलकत्ता के रीजेन्सी कालेज मे अध्यापक नियुक्त हो गये। वह विज्ञान पढाने के साथ-साथ अपना प्रयोग भी करते रहे। लन्दन में 1916 ई मे भारतीय विज्ञान पर उन्होंने एक लेख भी पढा जिसकी प्रशसा लन्दन की कई महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओ ने की। प्रो प्रफुल्ल चन्द्र की निगरानी में बगाल मे मिट्टी के बर्तन बनाने तथा क्राकरी के कारखाने भी स्थापित हुए। रसायन विज्ञान के क्षेत्र मे प्रो प्रफुल्ल चन्द्र भारतीय विज्ञान के सम्राट कहे जा सकते है। पारे पर शोध के लिए आप बहुत प्रसिद्ध हैं जिसकी विदेशो में भी प्रशसा की गई। वह भारतीयता के बहुत बडे समर्थक थे और इस कारण उन्होंने 1902 ई में भारतीय रसायन पर एक पुस्तक लिखी जिसमें यह सिद्ध किया गया था कि प्राचीन भारत मे विज्ञान कितनी उन्नति पर था।

लाहौर के प्रोफेसर डॉ शान्ति स्वरूप भटनागर ने चुम्बकीय रसायन पर कुछ शोध सम्बन्धी कार्य किया। उनके आचार्य प्रो घोष थे जो स्वय प्रो प्रफुल्ल चन्द्र के शिष्य थे। प्रारम्भिक शिक्षा लाहौर से प्राप्त करने के पश्चात डॉ भटनागर लन्दन चले गये। 1921 ई में उन्होंने लन्दन विश्वविद्यालय से डी एससी की डिग्री प्राप्त की और भारत वापस आ गये। इसके पश्चात वह बनारस विश्वविद्यालय मे रसायन के प्रोफेसर नियुक्त हुए। उनकी सलाह पर इस विश्वविद्यालय मे एक उच्चस्तरीय प्रयोगशाला स्थापित की गई। प्रो भटनागर ने विश्वविद्यालय की ओर से लेवरपूल में आयोजित एक कान्फ्रेस में हिस्सा लिया।

1924 ई में प्रो भटनागर पजाब विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान विभाग के अध यक्ष नियुक्त किए गये। वह उद्योगपतियों को भी महत्त्वपूर्ण तथा लाभदायक परामर्श दिया करते थे और इसके एवज में उन्हे जो धन प्राप्त होता, उसे वह विश्वविद्यालय की केमिकल सोसाइटी को सौप देते थे जिससे शोध सम्बन्धी कार्यो में यह धन लगाया जा सके। 1932 ई मे रोम में आयोजित एक अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस में डॉ भटनागर ने भारत का नेतृत्व भी किया।

## औद्योगिक अनुसधान

1940 ई मे डा भटनागर "बोर्ड ऑफ इन्डस्ट्रियल एड साइन्टिफिक रिसर्च" के प्रथम निदेशक नियुक्त हुए। यह पहली भारतीय सस्था है जिसने आज तक कई क्षेत्रो मे बहुत प्रशसनीय तथा महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। विशेष रूप से रसायन के विषय पर डॉ भटनागर ने अपने शोध से यह सिद्ध किया कि कोयला यद्यपि चुम्बकीय गुण वाला नहीं होता लेकिन उसमे चुम्बकत्व का गुण उत्पन्न किया जा सकता है। इस कार्य हेतु उन्होंने एक यत्र भी निर्मित किया। डॉ भटनागर ने अपने जीवन में वैज्ञानिक विषयो पर अनेक शोध लेख लिखे जो सख्या मे लगभग सौ होगे। इन लेखो के माध्यम से डॉ भटनागर ने दूसरे वैज्ञानिकों का भी कई शोध सम्बन्धी विषयो की ओर ध्यान आकर्षित कराया।

उन्होने एक ऐसा तरीका खोजा जिसकी बदौलत पेट्रोल के कुए सूख नहीं सकते। इस शोध पर बर्माशील कम्पनी ने आपको कई लाख रुपयो का पुरस्कार प्रदान किया जो उन्होंने पजाब तथा बनारस के विश्वविद्यालयो मे बराबर-बराबर बाट दिया।

डॉ भटनागर विज्ञान को जनता के लिए उपयोगी बनाने के पक्षधर थे। इसीलिए वह ऐसे शोध किया करते थे जो उपयोगिता से परिपूर्ण हो। बिना गध की मोमबत्ती बनाने, बिनौलों की छनी हुई सामग्री से बेकेलाइट बनाने तथा साबुन के रग बनाने पर उन्होंने बहुत उल्लेखनीय तथा महत्त्वपूर्ण कार्य किया। वस्तुत रसायन पर शोध का कार्य प्रो प्रफुल्ल चन्द्र के परामर्श पर भारत मे प्रारम्भ हुआ। इसके पश्चात प्रो बाट्स ने इस कार्य को ढाका तथा कानपुर मे, डा ट्रिवर्ज ने इसे बगल की शोध सम्बन्धी प्रयोगशालाओ मे आगे बढाया। प्रो फाउलर ने इस कार्य को जारी रखा और अन्त मे डा भटनागर ने इस कार्य को बहुत अच्छे ढग से आगे बढाया।

## टैगोर की सेवाये

रवीन्द्रनाथ टैगोर का घर विभिन्न ढग की कलाओ, साहित्य और ज्ञान का सगम था। उनका निवास-स्थल स्वय एक विशाल शिक्षा का केन्द्र था। पूर्व तथा पश्चिम के अधिकाश विद्वान उनके यहा अक्सर आया करते थे जिसका प्रभाव यह हुआ कि मदरसो और प्राचीन ढग की शिक्षा और सभ्यता का इन पर गहरा प्रभाव नहीं पडा। बल्कि वे उनसे एक सीमा तक दूर भागते थे। समय के साथ-साथ उनका विचार आधुनिक और वैज्ञानिक होता गया।

टैगोर जहा एक ओर शेरो-शायरी, नृत्य और सगीत तथा ललित कला के शौकीन थे, तो दूसरी ओर शिक्षा और शिक्षा

सबधी समस्याओ को हल करने की योग्यता भी रखते थे। वे वैज्ञानिक तथा तार्किक बातो के कायल थे। इसीलिए उन्होने अपने लेखन सम्बन्धी कार्यो मे शालीनता बनाये रखी। उन्होने शिक्षा और साहित्य के साथ-साथ विज्ञान का भी अध्ययन किया। विज्ञान के दर्शन को उन्होने अच्छी तरह समझा तथा अपने लेखन मे वह एक उच्च-स्तरीय वैज्ञानिक सिद्ध हुए।

टैगोर ने भारत मे सर्वप्रथम शिक्षा का सम्बन्ध प्रकृति के साथ जोडने पर बल दिया। यही कारण है कि वह भारत के शिक्षा सम्बन्धी दर्शन मे अपना एक विशेष स्थान रखते है। वह एक प्रसिद्ध शिक्षक तथा रूसो की भांति मानवता के प्रेमी थे। टैगोर शिक्षा को मानवीय जीवन का एक अग मानते थे। ये दोनो शिक्षाविद् बच्चो के व्यक्तित्व के आदर के कायल थे तथा बच्चो के जीवन मे सम्भावनाओ की तलाश करते थे। एक स्थान पर टैगोर कहते है—'' एक स्कूल के अनुभवी प्रधानाचार्य एक बार शान्ति निकेतन देखने आये और सब कुछ देखने के पश्चात उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब उन्होने एक लडके को पेड पर चढे हुए देखा जो उनके अनुसार एक उद्दण्डता थी।''

इसके पश्चात टैगोर लिखते है—''उस प्रधानाचार्य को इससे अधिक आश्चर्य इस बात पर हुआ कि जब उन्होने उस लडके को इस ढग से वनस्पति सम्बन्धी समस्याओ को हल करते हुए पाया। उनका दृष्टिकोण था कि यदि पौधो की वृद्धि का ज्ञान पुस्तकीय आधार पर प्राप्त किया जाये तो वह विज्ञान है। किन्तु, यदि यह स्वय अनुभव करके सीखा जाए तो वह हर तरह की वृद्धि मे सहायता देता है और यही प्रकृति का ढग है।''

टैगोर का विचार था कि अशिक्षा अनेक राष्ट्रीय समस्याओ की जड है। उन्होने शाति निकेतन विश्वविद्यालय स्थापित किया जिसमे वह चाहते थे कि शिक्षा वैज्ञानिक तौर-तरीके से प्रदान की जाए। दूसरे, वह विज्ञान को मनुष्य का सेवक बनाना चाहते थे, न कि मनुष्य को विज्ञान का।

महान कवि और नोबेल पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता टैगोर ने मनुष्य के भविष्य को उच्च शिक्षा से सम्बन्धित किया क्योकि उच्च शिक्षा (जिसमे विज्ञान की शिक्षा भी सम्मिलित है) से ही जेहालत दूर हो सकती है तथा उन्नति और प्रगति की सम्भावनाए बढ सकती है। वह बहुत प्रगतिशील और सवेदनशील कवि थे।

## एक चमकता सितारा

डॉ सी बी रमन भारतीय विज्ञान के क्षितिज पर एक चमकता हुआ सितारा सिद्ध हुए। भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में आपने बहुत उल्लेखनीय कार्य किया तथा एक महत्त्वपूर्ण खोज की बदौलत 1930 ई का नोबेल पुरस्कार प्राप्त किया। उन्होने 1928 ई मे यह सिद्ध किया कि जब प्रकाश की किरणे किसी पदार्थ के माध्यम से होकर गुजरती है तो उन किरणो के कुछ कमजोर भागो मे एक्स रे जैसी विशेषता उत्पन्न हो जाती है। उनकी 'व्यू लेन्थ कुछ परिवर्तित हो जाती है। 'व्यू लेन्थ' का यह परिवर्तन उस पदार्थ की विशेषता पर निर्भर करता है जिसमे से होकर प्रकाश-किरणे गुजरती है। इसी प्रकार किसी प्रकार के कणो की सरचना के बारे में ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। उनके शिष्य प्रो के एस कृष्णन का नाम भी उल्लेखनीय है जिन्होने ढाका और कलकत्ता विश्वविद्यालय मे कई वर्षो तक शोध का कार्य जारी रखा।

डॉ  कृष्णन नये-नये प्रयोग करते रहने के प्रबल समर्थक है। इसी कारण आपने क्रिस्टल  धातुओ की प्रकृति इत्यादि पर काफी शोध किया। 1947 इ  से 1961 ई  तक वे नेशनल फिजिकल लैबोरेटरी के डायरेक्टर रहे। इस दौरान इस सस्था ने भारत मे वैज्ञानिक खोजो के क्षेत्र मे अत्यधिक नाम कमाया और इसमें डॉ  कृष्णन का बडा हाथ था। दूसरे उन्होने भारतीय विज्ञान को तकनीकी कार्यो की ओर मोडने में बडा हिस्सा लिया जिसकी वजह से प  नेहरू उनकी बहुत इज्जत करते थे। पडित जी ने उनके 60वें जन्मदिन पर उनके सम्बन्ध मे कहा—' कृष्णन के सम्बन्ध मे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वह मात्र एक वैज्ञानिक ही नहीं बल्कि उससे कुछ अधिक ही है। कृष्णन एक सम्पूर्ण नागरिक है  इससे बढकर एक सम्पूर्ण मनुष्य है  एक ऐसा मनुष्य जिसकी एक व्यापक शख्सियत हो।''

प्रो  सतीन बोस मे वैज्ञानिक शोध की उत्कट आकाक्षा थी। आप भावुक बिल्कुल न थे बल्कि एक यथार्थवादी व व्यावहारिक वैज्ञानिक थे। आपने गणितीय प्रकृति पर कार्य किया। एक नजरिये से आपका नाम अल्बर्ट आइन्स्टीन से जोडा जाता है। आप एक विद्वान व्यक्ति थे और देश की समस्याओ को विज्ञान के माध्यम से हल करने तथा विज्ञान को आम बनान के पक्षधर थे। सामान्य विज्ञान का इतना प्रबल समर्थक आज तक भारत मे नहीं पैदा हुआ वह भी मातृभाषा में। यह अपने आप मे एक बहुत बडी सेवा है कि विज्ञान को जनसामान्य की भाषा मे ही जनता तक पहुचाया जाये।

## गणित मे अद्वितीय प्रतिभा

श्रीनिवास रामानुजम का नाम गणित के क्षेत्र में अत्यधिक प्रसिद्ध है। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' वाली कहावत आपके सम्बन्ध में पूर्णत  चरितार्थ होती है। रामानुजम बचपन से ही प्रतिभाशाली थे और गणित के विषय में बहुत तेज थे। आप उच्च शिक्षा तो नहीं प्राप्त कर सके, किन्तु आपकी विलक्षण प्रतिभा की धाक भारत के बाहर तक फैली। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर जी एच हार्डी उन्हें इग्लैण्ड ले गये और बाद मे दोनो ने शोध व शिक्षा का सिलसिला प्रारम्भ किया। रामानुजम ने गण्ति पर कई शोध लेख लिखे। दुर्भाग्य से इस गणितज्ञ की 33 वर्ष की अल्पायु में ही मृत्यु हो गयी।

परमाणु शक्ति के क्षेत्र में डॉ  होमी जहागीर भाभा का काम काफी प्रशसनीय है जिसे उनकी मृत्यु के पश्चात डॉ  साराभाई ने जारी रखा। यह काम आज भी एटमी ऊर्जा आयोग के तहत चल रहा हैं। यह आयोग आजकल एटमी शक्ति से तीन स्थानो (तारापुर  मद्रास और राणाप्रताप सागर) पर बिजली पैदा कर रहा हैं तथा एटमी ऊर्जा के अन्य कई उद्देश्यों पर कार्य कर रहा है।

चन्द्रशेखर डॉ  रमन के भतीजे है। खगोल विज्ञान पर आपने लगभग 30 वर्ष कैम्ब्रिज और शिकागो मे शोध कार्य किया। 1953 ई  से उन्होने अमेरिकी नागरिकता प्राप्त कर ली है और अब वहीं के हो गये है।

साहनी एक विलक्षण वैज्ञानिक थे। अपनी प्रारम्भिक परीक्षाओं में वे बहुत अच्छे नम्बरो से पास होते रहे। उन्होने बहुत ही सादे ढग से अपना जीवन व्यतीत किया। कई वर्षो तक आप बनारस विश्वविद्यालय मे वनस्पति विज्ञान के प्रोफेसर रहे। इसके पश्चात लाहौर मे

एक वर्ष तक रहने के उपरात आप लखनऊ विश्वविद्यालय मे वनस्पति विज्ञान के प्रोफेसर नियुक्त हो गये। भूमि के अन्दर छिपी हुई वनस्पतियो पर आपके शोध काफी महत्त्व रखते है। इसके साथ-साथ आपने दूसरे क्षेत्रो में भी बहुत शोध किया।

बीरबल साहनी पहले भारतीय वैज्ञानिक है जिन्हें कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने डी एच सी की डिग्री से सम्मानित किया। उन्होंने 1931 ई मे कैम्ब्रिज और 1939 ई में एमस्टरडम में आयोजित कान्फ्रेस मे हिस्सा लिया। आप रॉयल सोसाइटी ऑफ लदन के सदस्य भी रह चुके है और कई अन्तर्राष्ट्रीय सगठनो के सक्रिय सदस्य भी रहे है।

बीरबल साहनी की अथक मेहनत के कारण लखनऊ मे वनस्पति विज्ञान पर शोध हेतु एक सस्था स्थापित की गई जिसमे वनस्पति विज्ञान पर शोध-लेख प्रकाशित करने की योजना भी सम्मिलित थी। उन्होने 1946 ई में वनस्पति विज्ञान की एक ऐसी सस्था स्थापित की जहा पुरानी वनस्पतियों पर शोध और अध्ययन किया जाता है।

उल्लेखनीय है कि भूकम्प और कुछ ऐसे ही विनाशकारी धमाकों से भूमि सतह पर काफी परिवर्तन होते रहते है, यहा तक ऊपर की सतह नीचे भी दब जाती है। इस प्रकार के कुछ निशान खुदाई मे मिले है, जिन पर शोध करने से यह बात सामने आई है कि ये वनस्पतिया बीते हुए समय से सम्बन्धित है। यह सस्था इसी ढग की वनस्पतियो को अपने शोध के दायरे मे लेती है। यह बात प्रशसनीय है कि डॉ साहनी के नेतृत्व मे इस सस्था ने बहुत कार्य किया है और आने वाले वर्षों में यह सस्था उनकी याद दिलाती रहेगी।

वर्तमान समय में गणित मे डॉ राजचन्द्र बोस का कार्य, जीव विज्ञान के क्षेत्र में जे बी एस हाल्डेन का, इन्जीनियरिंग मे डॉ ए एन खोसला का, एटमी धमाकों से उन्पन्न होने वाले प्रभावो पर डॉ दौलत सिह कोठारी का, भौतिक विज्ञान तथा गणित मे प्रो महाला नोबस का, कृषि में डॉ एस रन्धावा, डॉ स्वामीनाथन तथा डॉ पाल का और साख्यिकी में डॉ सी एच राव का नाम भारतीय वैज्ञानिको मे स्मरण किया जायेगा। सम्भवत ऐसे वैज्ञानिकों के लिए ही मीर ने यह शेर कहा था—

"मत सहल हमे जानो फिरता है फलक बरसों
तक खाक के परदे से इन्सान निकलते है"

वर्तमान समय में प्रो सैय्यद जहीर ने कोयला, रसायन, दवाओ, औद्योगिक रसायन, तेल तथा कीडे मारने वाली दवाओ पर काफी शोध सम्बन्धी कार्य किया है।

प्रो ए रहमान 35 राष्ट्रीय प्रयोगशालाओ के शोध सम्बन्धी कार्यों की योजना तथा देखरेख और इनमें तालमेल स्थापित करने के जिम्मेदार है। विज्ञान का इतिहास, विज्ञान सम्बन्धी योजनाओ और अनुसन्धानो पर उन्होने कई लेख और पुस्तकें लिखी है।

## डॉ जाकिर हुसैन — एक कुशल शिक्षाविद्

यद्यपि स्वर्गीय राष्ट्रपति डॉ जाकिर हुसैन मे कई विशेषताए थीं किन्तु एक विशेषता का उल्लेख यहा आवश्यक है, वह यह कि आप एक कुशल शिक्षाविद् भी थे और जामिया मिलिया विश्वविद्यालय को उत्कर्ष पर पहुचाने में आपका बहुत योगदान था। इस सस्था के आप कई वर्षों तक वाइस चासलर रहे। जाकिर हुसैन साहब ने आधारभूत शिक्षा के लिए

एक आन्दोलन चलाया जिसके सम्बन्ध में वह लिखते हैं—"सच्ची तालीम वह है जिसमें इन्सान की तमाम क्षमताओ का विकास हो और वे उत्कर्ष पर पहुचे।" दिसम्बर, 1937 ई मे उन्होंने अपने एक भाषण में यू कहा—"आज जबकि दुनिया तेजी से बदल रही हैं और विभिन्न राष्ट्रों का जीवन नया रूप ले रहा है हमारी तालीम जिन्दगी की मुख्य धारा से अलग उसी पुरानी ढर्रे पर चल रही है। यह बदलती हुई स्थितियों मे मेल नहीं खा सकती। न तो यह रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करती है और न ही इसके सामने कोई बुलद कल्पना है जो देश के मृत शरीर में जीवन डाल दे। यहा जाकिर हुसेन साहब उस शिक्षा का उल्लेख कर रहे है जो व्यावहारिक हो और उपयोगिता से परिपूर्ण हो। यानि जिससे व्यक्ति तथा राष्ट्र दोनो ही आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक रूप से प्रगति कर सकें।

प्रसिद्ध लेखक प्रो ह्वाइट हेड का कथन है—'शिक्षा से ऐसे छात्र पैदा होने चाहिये जो अधिक ज्ञान के साथ-साथ अधिक अमल के हामी बने। अमल और नजरिये का ऐसा करीबी रिश्ता है जो दोनो के लिए लाभदायक है।"

जीवन अमल का नाम है और विज्ञान अमल का दूसरा नाम। वैज्ञानिक तो जिन्दा ही अमल से रहता है और अपने एकात में शोध व अध्ययन मे व्यस्त रहता है। कार्य करने की लगन वैज्ञानिक से सीखिये और काम की व्याख्या डा जाकिर हुसैन के शब्दो से—"कार्य को तालीम का माध्यम बनाने वालों को सदैव याद रखना चाहिये कि कार्य निरुद्देश्य नहीं होता, काय हर नतीजे पर सहमत नहीं होता कार्य मात्र कुछ भी करते हुए समय व्यतीत करने का नाम नहीं, काय केवल दिल्लगी नहीं, कार्य खेल नहीं, कार्य कार्य है। सोद्देश्य मेहनत है। कार्य शत्रु की भाति अपना हिसाब करता हैं और यदि पूरा खरा उतरता है तो वह प्रसन्नता देता है जो कहीं अन्यत्र नहीं मिलती। कार्य कसरत है, कार्य पूजा है।' उपरोक्त शब्द जिन्दगी को बेहतर बनाने के सूत्र है।

## खुशहाली की योजनाये

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारत ने देश की खुशहाली की कई योजनाए बनाई। ये योजनाए दो प्रकार की थीं—एक कृषि के क्षेत्र में उन्नति के लिए और दूसरी उद्योगो के विकास के लिए। स्पष्ट है कि कृषि और उद्योग दोनो क्षेत्रो मे तकनीकी शोध पर पूरा-पूरा जोर दिया गया ताकि देश भर मे आय को बढाया जा सके। इस उद्देश्य के लिए तकनीकी रुझान बढाने और उसे लोकप्रिय बनाने में प नेहरू ने बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।

उनमे बडी सूझ-बूझ दूरदृष्टि और वैज्ञानिक समझ थी जो देश के विकास के लिए बहुत कारगर सिद्ध हुई। विज्ञान के सम्बन्ध मे प नेहरू कहते है—

"भविष्य विज्ञान के हाथ मे है और यह केवल उन लोगो का हो सकता है जो विज्ञान से सम्बन्ध जोड सकते है।' एक अन्य स्थान पर प नेहरू भारतीय प्रयोगशालाओ के सम्बन्ध मे यू कहते है—"हमारी प्रयोगशालाए हमारा ध्यान नये-नये पहलुओ की ओर आकर्षित कराने का माध्यम हैं। मै इन प्रयोगशालाओ को इस नजरिये से नहीं परखता कि वे कौन-कौन सी समस्याओं का समाधान करने में सक्षम हो सकती है, बल्कि उनको म विज्ञान का मन्दिर समझता हू जो मानवता की सेवा के लिए स्थापित की गई है।" वसे इसमे सन्देह नहीं कि इन प्रयोगशालाओ ने देश के आत्मनिर्भरता के प्रश्न को एक हद तक हल किया है।

पिछले कई वर्षो मे भारत ने हर क्षेत्र मे काफी प्रगति की हैं किन्तु विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र मे इसने जो विशिष्ट कामयाबी हासिल की हैं उसका जीता-जागता उदाहरण 1981 ई मे "आर्यभट्ट" और "एप्पुल" के रूप मे जनसामान्य की दृष्टि मे आ चुका है।

आर्यभट्ट की मुहिम कामयाब बनाने के लिए कई प्रकार की थर्मल लैबोरेटरिया अस्तित्व में आइ तथा तकनीकी कार्यकर्त्ताओं को इस मुहिम मे विशेष रूप से लगाया गया। इस प्रोजेक्ट का उद्देश्य यह था कि उपग्रह से सम्बन्धित भारतीय क्षमता को बढावा दिया जाये और दूसरे यह कि अन्तरिक्ष मे अधिक वैज्ञानिक-शोध सम्बन्धी कार्य किये जाये जिससे भारत तक्नीकी क्षेत्र मे आत्मनिर्भरता की ओर एक कदम और बढा सके।

अटार्कटिका दक्षिणी ध्रुव मे स्थित विश्व का एक विशाल महाद्वीप है। यह विश्व का सर्वाधिक ठडा और खुश्क तथा सबसे ऊचा क्षेत्र है। अटार्कटिका का क्षेत्रफल पूरे विश्व के क्षेत्रफल का दसवा भाग है। इस महाद्वीप का 98 प्रतिशत भाग पूरे वर्ष बर्फ से ढका रहता हें और यह अनुमान लगाया जाता है कि यदि यह बर्फ पिघल जाये तो विश्व के समुद्र का जल स्तर 10 मीटर अधिक ऊचा हो जाएगा। इस बर्फ की तह करीब 4000 मीटर (यानि 2½ मील) मोटी बताई जाती है। यहा पर न्यूनतम तापमान —88° से ग्रे तक नोट किया गया है जबकि गर्मियो मे यहा का तापमान 10 से ग्रे तक रहता है। यहा पर हवाओ की गति 320 कि मी/प्रति घन्टा होती है। जेम्स कुक ने पहली बार इस महाद्वीप का 1772-75 ई में पता लगाया किंतु इसकी विस्तृत जानकारी 17 फरवरी, 1821 ई को हुई। यहा पर मानवीय जीवन के आसार बिल्कुल नहीं पाये जाते। यहा वनस्पतिया बहुत ही कम पाई जाती है। मात्र दो फूलदार पोंधो की किस्मे यहा पर खोजी गई हें।

जैसा कि आप जानते है अटार्कटिका दक्षिणी ध्रुव का सबसे विशाल और ठडा महाद्वीप है और वहा के सम्बन्ध मे पूर्ण जानकारी उपलब्ध नहीं है। भारत से पूर्व विश्व के कई देशो ने अपने कदम जमाकर बहुत मारी अनुसन्धानशालाए स्थापित की है। इस महाद्वीप यानि अटार्कटिका पर अब भारतीय वैज्ञानिको ने भी अपने कदम जमा लिए है।

यह महाद्वीप काफी अरसे से प्रगतिशील देशो के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है क्याकि यहा पर तेल, गैस, कोयला विभिन्न प्रकार की धातुए और अन्य दूसरी चीजों के भण्डार पाये जाने के प्रमाण मिले है। क्योकि दुनिया की आबादी बहुत तीव्र गति से बढ रही है जिसके कारण विश्व के कई देश बीते कई वर्षो से प्राकृतिक सम्पदा की कमी की

स्थिति से दो चार हो रहे हैं इसीलिए उनके लिए इस क्षेत्र मे पाये जाने वाले ये प्राकृतिक भण्डार एक बहुत बडी सम्पदा की हैसियत रखते है।

## राष्ट्रीय वेधशालाए

हमारी राष्ट्रीय वेधशालाओ मे शोध सम्बन्धी कार्य आज तक हो रहा है और आने वाले समय मे भी होता रहेगा। तकनीकी प्रगति के लिए शोध सम्बन्धी काय बहुत आवश्यक हो गया है। दूसरे, वैज्ञानिक प्रगति और तकनीक के बिना विज्ञान क्या मतलब रखना है। भारतीय वैज्ञानिक डॉ वाई नायूडामा के शब्दो मे—''शोध या खोज का सम्बन्ध दिल ओर दिमाग से है। यह प्रगति तथा सकारात्मक परिवर्तन की ओर एक मित्रतापूण रवेया है। यह आने वाले कल का प्रतिनिधि है न कि बीते हुए कल का।''

भारत की अनुसधानशालाओ मे कई विश्वविद्यालयो की सस्थाये जैसे-इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइस-बगलोर, एटामिक एनर्जी कमीशन, टाटा इस्टीट्यूट, इडियन एग्रीकल्चरल रिसच इस्टीट्यूट नेशनल फिजिकल लैबोरेटरी, नेशनल केमिकल लैबोरेटरी इडियन कौसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च, इंडियन ड्रग एड फार्मास्युटिकल लैबोरेटरी तथा इडियन कौसिल ऑफ साइस रिसर्च सम्मिलित है। इन सस्थाओ मे आजक्ल कई हजार वैज्ञानिक शोध व अन्वेषण सम्बन्धी कार्य कर रहे है। इन सस्थाओ मे की गई खोजो को जनसामान्य तक भी पहुचाया जाता है ताकि दूसरे वैज्ञानिक, विद्वान और सामान्य लोग इन कार्यो के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त कर सके।

आजादी के बाद के वर्षो मे भी यह कार्य जारी है जिसमे बुनियादी शोध भी सम्मिलित है। सी राजगोपालाचारी के अनुसार—''बुनियादी शोध पर जो धन खर्च किया जाता है उसे खोखली प्रतिष्ठा के लिए धन खर्च करना न कहिये बल्कि यह एक लाभदायक और आवश्यक खर्च है जिसे हर तरक्की पसन्द देश वहन करता है। वास्तव मे, जब हम किसी योजना की महत्त्वपूर्ण मजिल पर पहुच जाते है तो वहा सिर्फ विज्ञान और तकनीक ही मददगार सिद्ध हो सकती है।' देश की प्रगति, खुशहाली और आत्मनिर्भरता की कुजी विज्ञान के हाथो मे है। देश ने जिस तरह कृषि, उद्योग चिकित्सा, टेलीविजन, इजीनियरिंग, नहर, रेलवे यातायात, अन्तरिक्ष मे उडाने, युद्ध-कला, परमाणु-शक्ति की बदौलत उन्नति का मार्ग स्थापित किया है इससे हम यह उम्मीद कर सकते है कि भारत ऐसे शोध व निर्माण के कार्यो मे लगा रहेगा और आने वाले वर्षो मे अधिक खुशहाली व कामयाबी की ओर बढेगा।

स्वर्गीय प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी के अनुसार—''हमारे ख्वाबो का एक ऐसा खुशहाल हिंदुस्तान जिसमे हर हिंदुस्तानी की खुशी व उन्नति समाहित हो, विज्ञान इन्जीनियरिंग और तकनीक के क्षेत्र मे आत्मनिर्भरता से ही सगठित और प्राप्त हो सकता है।''

स्मरणीय है कि जिन देशों का वैज्ञानिक शिक्षा प्राप्त करने और शोध सम्बन्धी कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ है, उन्हे वैज्ञानिक चिन्तन का जैसे विशाल खजाना प्राप्त हो गया है। उनका मस्तिष्क रोशन हो गया है। वे पिछडेपन और अधविश्वासो के बजाय

प्रगतिशील विचारो के वाहक हो गये है तथा अब वे अपने लिए प्रगति और निर्माण के रास्ते और अधिक विस्तृत कर सकते है।

एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक के शब्दो मे–"विज्ञान की प्रगति और शिक्षा के विस्तार ने मनुष्य को वह सब कुछ दिखा दिया है जिसे उसने पहले नही देखा था। घटनाओ की जिन कड़ियों को न जानने के कारण हम समझ नही सकते थे कि यह घटना क्यो घटी, अब घटनाओ की तमाम कडियो के सामने आ जाने से वह एक जानी-समझी चीज बन गया है। जैसे कि पहले मनुष्य यह नहीं जानता था कि सूर्य कैसे उदय और अस्त होता है, इसीलिये उसने यह समझ लिया कि ऐसा कोई ईश्वर है जो सूर्य को उदय और अस्त करता है। इस तरह एक पारलौकिक सत्ता का विचार अस्तित्व मे आया और जिस चीज को मनुष्य नहीं जानता था उसके सम्बन्ध मे उसने यह कह दिया कि यह उसी पारलौकिक शक्ति का करिश्मा है। आज घटनाओ के वास्तविक कारण ज्ञान हो जाने के पश्चात यह भ्रम स्वत ही समाप्त हो गया है जिसके लिए पहले के लोगो ने ईश्वर या पारलौकिक सत्ता का अस्तित्व स्वीकारा था।"

भारत ने मशीनो, आधुनिक आविष्कारो और नये-नये खोजो की बदौलत प्रगति की ओर कदम बढाया है और अब इससे पीछे की ओर जाना कोई समझदारी की बात नहीं। आज का भारत विज्ञान की उपलब्धियो से मुह नहीं मोड सकता। उसे समय की धारा के साथ-साथ चलना है और यह धारा विज्ञान की धारा है। नि सन्देह विज्ञान एक उज्ज्वल भविष्य और निर्माण तथा प्रगति की कुजी है।

# डॉ. सी.वी. रमन (1888-1970)

## अन्तर्राष्ट्रीय नोबल पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता वैज्ञानिक

नोबेल पुरस्कार प्राप्त एक इतिहासकार ने कभी भारतीयो के सम्बन्ध मे कहा था कि "उनको (भारतीय वैज्ञानिको को) अपनी प्रयोगशालाओ में व्यस्त रहने के बजाय जनता के बीच आना चाहिये। ' डॉ रमन ने ठीक इसके विपरीत कहा है कि "उन्नति की ओर ले जाने वाले लोग सदैव अनुसन्धान व अन्वेषण सम्बन्धी कार्यो हेतु एकान्त मे ही मिलेगे। यही वे लोग है जिनकी मानवता सदैव आभारी रहेगी।" रमन अपने वक्तव्य के अनुसार अपना अधिकाश समय अपनी प्रयोगशाला (बगलौर स्थित रमन रिसर्च इस्टीट्यूट) मे ही व्यतीत करते थे। अपनी उम्र के अन्तिम 10 वर्षो मे तो वे वहीं के होकर रह गये थे। वह सदैव कहा करते थे—"मै एकान्त में वैज्ञानिकों की भाति जीवन व्यतीत करने के पक्ष मे हू। मै केवल काम करने का शौकीन हू। मेरा बुनियादी शौक विज्ञा ही है और मुझे वैज्ञानिक कार्यो से ही सुकून और प्रसन्नता मिलती है।"

चन्द्रशेखर वेकट रमन 7 नवम्बर 1888 ई को त्रिचरापल्ली में पैदा हुए थे। वे बचप से ही बहुत मेधावी और लिखने-पढने मे रुचि रखने वाले थे। इसीलिए उनकी योग्यता व अनुमान बचपन से ही हो गया था। गाव मे शिक्षा की मनोवाछित व्यवस्था उपलब्ध न होने व कारण डा रमन के पिता चन्द्रशेखर उन्हे त्रिचनापल्ली ले आये जहा रमन ने बी ए पास किय रमन के पिता अपने मेधावी पुत्र को घर पर ही विज्ञान और गणित पढाया करते थे और स्कू के प्रिंसिपल उन्हे विशेष रूप से वक्त निकालकर अंग्रेजी पढाया करते थे।

डा रमन ने 13 वर्ष की आयु मे मद्रास के प्रेसीडेन्सी कालेज मे प्रवेश ले लिया। जब रमन बी ए मे पढते थे तो उनके शिक्षक ने एक दिन भरी क्लास मे उनसे पूछा कि "क्या आप वास्तव मे बी ए के छात्र है? तो उत्तर मिला— 'जी हा।' "आपकी आयु कितनी होगी?" शिक्षक ने दूसरा प्रश्न किया। "13 वर्ष", रमन ने उत्तर दिया। शिक्षक बहुत अचम्भित हुए और जब उन्हे यह मालूम हुआ कि इतनी कम उम्र मे अपनी पढाई-लिखाई के साथ-साथ वे एक शोध-लेख भी लिख रहे है जो बाद मे एक अतर्राष्ट्रीय पत्रिका मे प्रकाशित हुआ तो शिक्षक क्या सारा कालेज अचम्भित रह गया। इस घटना से रमन की प्रतिभा की धाक जम गई।

उसी समय मे रमन ने जानकारियो से परिपूर्ण 'प्रकाश के बिखराव' से सम्बन्धित एक लेख लिखा जो बाद मे लन्दन की एक फिलॉसफिकल मैगजीन मे प्रकाशित हुआ। इससे भी रमन की प्रतिष्ठा कई गुना बढी और 2 वर्ष के उपरान्त वह इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइन्स के सचिव चुने गये।

रमन 1921 ई मे ऑक्सफोर्ड मे आयोजित एक कान्फ्रेस मे सम्मिलित हुए और तीन वर्ष उपरान्त भारत के प्रतिनिधि के रूप मे फ्रैंकलिन गये। आपने चार माह के लिए मोरिना मे प्रोफेसर के रूप मे कार्य किया। इसके साथ ही वे एक अतर्राष्ट्रीय सगठन "रायल सोसाइटी" के फेलो बना दिए गये। रमन ने 1926 ई मे सम्पादक के रूप मे भारत की एक पत्रिका 'इडियन जर्नल ऑफ फिजिक्स' को प्रारम्भ किया। 1922 ई मे डा रमन को डी एससी की डिग्री प्राप्त हुई। 1929 ई मे ब्रिटिश शासन अर्थात भारतीय ब्रिटिश सरकार ने उन्हे "सर" की उपाधि से सम्मानित किया। 1930 ई मे आपको अन्तर्राष्ट्रीय नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। डॉ रमन विज्ञान के क्षेत्र मे नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले प्रथम भारतीय वैज्ञानिक थे।

डॉ रमन ने 1933 ई मे बगलौर की एक सस्था मे वैज्ञानिक कार्यो से सम्बन्धित एक पद सभाला। एक वर्ष पश्चात जब भारत में इडियन एकेडमी ऑफ साइस की नींव पडी तो उसकी स्थापना मे रमन का एक महत्त्वपूर्ण योगदान था। 1951 ई मे बगलैार मे रमन रिमर्च इन्स्टीट्यूट स्थापित किया गया और डॉ रमन मृत्युपर्यन्त इस सस्था के सर्वेसर्वा रहे। 1954 ई मे आपको "भारत रत्न" और रूस के लेनिन एवार्ड से सम्मानित किया गया। लेनिन एवार्ड की घोषणा पर रमन ने अपनी भावनाओ को इस प्रकार अभिव्यक्त किया—"लेनिन अवार्ड के लिए मुझे सबसे पहले चुना गया है, सिर्फ इसलिए कि मै एक वैज्ञानिक हू। लेकिन इससे महत्त्वपूर्ण बात यह हे कि मैने कोई भी वैज्ञानिक खोज अपनी व्यक्तिगत उन्नति या ख्याति या जग या विनाश के लिए नहीं की, बल्कि सदैव मेरी यही इच्छा रही है कि वैज्ञानिक अन्वेषण विश्व की उन्नति और शाति के लिए किया जाये।"

डॉ रमन की योग्यता के कारण उनकी धाक विश्व भर मे जम गई। पेरिस, ग्लास्गो, फ्रीबर्ग मुम्बई, कलकत्ता, बनारस, मद्रास और ढाका के विश्वविद्यालयों ने उन्हे मानद उपाधिया प्रदान कीं। वे आजीवन यूरोप के कई वैज्ञानिक सगठनो के सदस्य रहे और विशेषकर पेरिस (फ्रास) और रूस की साइस एकेडमी के कई वर्षो तक सदस्य रहे। भारतीय वैज्ञानिको और विश्व के वैज्ञानिकों मे डॉ रमन का नाम सदैव स्मरणीय रहेगा।

भूतपूर्व राष्ट्रपति ने डॉ रमन की मृत्यु पर बडे प्रशसनीय शब्दो मे यू कहा—"रमन महान प्रतिभा के धनी थे। उनमें खोज व अन्वेषण की बहुत लगन थी, जो दूसरे वैज्ञानिको

के लिए भी उत्साहवर्धक है। उनकी मृत्यु से भारत का ही नहीं बल्कि विश्व स एक महान वैज्ञानिक उठ गया है। '

डॉ रमन के लिए कर्म ही जीवन था और विज्ञान उनकी दृष्टि मे इश्वर के समकक्ष था। अपने अन्तिम दिनो मे जब वे बहुत बीमार होकर कमजोर हो गये तो डॉक्टरो से कहा करते थे—'मै इस बेकार जिन्दगी का क्या करूगा जिसमें मै एक प्रतिशत भी कार्य करने के योग्य नहीं हू।' रमन समय की बहुत इज्जत करत थे और अपने अन्वेषण सम्बन्धी कार्यो मे पूर्णत व्यस्त रहते थे। वह कहा करते थे—'जिन्दगी निस्तब्धता का नाम नहीं। जब तक मास है तब तक उसके साथ-साथ काय करते रहना चाहिये। बुढापा कोई थकान या मायूसी नहीं उत्पन्न कर सकती।

प्रो रमन का अपना निजी पुस्तकालय उनके चहेतो क लिए हर समय खुला रहता था। उनके पुस्तकालय मे ऐसी पुस्तकें भी थीं जो उन्होने अपने बचपन म पढी थीं। रमन के एक मित्र के शब्दानुसार ऐसी किताबो के कई पृष्ठो पर ''क्योकि , ''किस तरह ' ''क्या ये सही है के निशान मिलते हे। इससे स्पष्ट होता है कि विज्ञान की हर बात को वे आख मूद कर स्वीकार नहीं करते थे।

डा रमन की फाइन आर्ट, सस्कृत साहित्य और सगीत मे भी रुचि थी। वे अपने भाषण में अक्सर सस्कृत साहित्यकारो जैसे कालिदास इत्यादि के लेखो का उदाहरण दिया करते थे। एक दिन उन्होने अपने दिल की बात यू कही—'मै लम्बी उम्र जीने का आकाक्षी हू। इसलिए नहीं कि कुछ अधिक ऐश-आराम कर सकू बल्कि इसलिये कि मै सगीत के उन झकारो से आनन्द और लाभ नहीं उठा सका जिनसे मैं लाभान्वित और आनन्दित होना चाहता था।

प्रो रमन अपने अवकाश का समय वायलिन और मृदग के साथ व्यतीत किया करते थे। बगलौर मे एक साज-सगीत क सामान की दुकान थी जहा रमन अक्सर जाया करते थे। दूसरे, उनके घर मे विभिन्न प्रकार के तबले वायलिन मृदग, नाद, सूर इत्यादि पडे रहते थे जो उन्होने अपनी उम्र भर के अरस मे दूर-दराज से खरीद कर जमा कर रखे थे। यह उल्लेखनीय है कि उन्होने एक पुस्तक सगीत के साजो पर भी लिखी है।

डॉ रमन भारतीय विज्ञान के सदैव आलोचक रहे। उनकी शिकायत थी कि भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का एक भी वैज्ञानिक पैदा नहीं किया। दूसरे, भारत की वेधशालाओ मे जो करोडो रुपया खर्च किया जाता है, डॉ रमन सदैव उसके खिलाफ रहे। बल्कि वे कहा करते थे कि ''ये वेधशालाए नहीं, अस्तबल है। मुगल सम्राट शाहजहॉ ने ताजमहल अपनी महबूबा की याद मे स्थापित करवाया, और हमारी वेधशालाए अब वैज्ञानिक औजारो को दफनाने के लिए स्थापित की गई है।'

इतनी तुनक और निन्दनीय बातो के बावजूद आप भारत के एक सफल वैज्ञानिक रहे। उन्हें देश, राष्ट्र और सरकार से बहुत इज्जत और प्रतिष्ठा मिली, मात्र इसलिए कि रमन एक साधारण वैज्ञानिक नहीं थे बल्कि अपने आप मे एक व्यक्ति नहीं बल्कि सगठन थे और भारत के एक आदरणीय व्यक्तित्व थे।

डॉ रमन की खोज 'रमन इफेक्ट' विश्व मे उनकी प्रसिद्धि का कारण बनी और अपनी इसी खोज के कारण वे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के वैज्ञानिक बने। उन्हे प्रकाश के विषय से बहुत

लगाव था और इसी विषय पर उन्हे बहुत प्रसिद्धि प्राप्त हुई। इस कार्य को विश्व के एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने बहुत गर्मजोशी से स्वीकार किया और विज्ञान की दुनिया मे रमन का एक रिकाड स्थापित हो गया। इसमे कोई सन्देह नहीं कि रमन भारतीय वैज्ञानिको क क्षितिज पर लगभग 60 वर्षो तक एक आलोकित सितारे की भाति चमकते रहे।

'रमन इफक्ट' के सम्बन्ध मे विज्ञान की दुनिया मे एक कहानी प्रसिद्ध है। कहते है कि 1921 ई मे रमन हवाई जहाज मे बैठकर विदेश जा रहे थे। उस वक्त उनका जहाज समुद्र के ऊपर से गुजर रहा था। रमन ने पानी की सतह पर निगाह दौडाई तो उन्होने अनुभव किया कि समुद्र क पानी का रग कुछ भिन्न दिखाई द रहा था। कुछ अन्य यात्री भी समुद्र का नजारा देख रहे थे। रमन ने सोचा हो न हो ये सूर्य की किरण है जो पानी के अणुओं पर बिखर रही है। जब वे वापस कलकत्ता पहुचे तो उन्होने तरल पदार्थो मे प्रकाश के बिखराव सम्बन्धी प्रयोग प्रारम्भ कर दिया। दो वर्ष तक लगातार प्रयोग के पश्चात 1922 ई मे उन्होने स्वच्छ तरल पदार्थ की एक और विशेषता का पता लगाया और इस पहेली पर वे खूब गौर करते रहे जो बाद मे ''रमन इफेक्ट' के नाम से एक वैज्ञानिक खोज के रूप म सामने आयी।

प्रकाश का बिखराव प्रकाश की ही एक क्रिया है, यह कोइ नई बात नहीं है। प्रकाश जब किसी ऐसे माध्यम से गुजरता है जिसमे रेत के महीन कण होते है तो वह इधर-उधर फेल जाता है। ऐसी स्थिति मे किसी केन्द्र पर जमा होने वाले और उस केन्द्र से फैलने वाले प्रकाश की लहरो की लम्बाई बराबर होती है। जब उन पर प्रकाश की किरणे एक विशेष कोण से पडती है तो उनसे बिखरने वाले प्रकाश की लहरो की लम्बाई बदल जाती है जिससे हमको कुछ विशेष रगो का एहसास होता है। जैसे आसमान का रग नीला दिखाई देता है, तो सूर्य के उगते और डूबते समय क्षितिज पर लालिमा का नजारा किया जाता है। इस वास्तविकता की खोज का सेहरा लले नामक वैज्ञानिक के सिर पर है। उनका यह भी दृष्टिकोण था कि धूल और पानी के अतिरिक्त स्वय हवा के कण प्रकाश के बिखराव म सहयोगी सिद्ध होते है। स्वच्छ हवा और दूसरी गैसो के कणो मे भी प्रकाश की लहरो के बिखरन की क्षमता का प्रमाण कब्नस ने पहली बार प्रायोगिक तौर पर दिया था। इन दृष्टिकोणो को ध्यान मे रखते हुए कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रो रमन ने तरल पदार्थो पर अपना प्रयोग प्रारम्भ किया। उन्होने यह पता लगाया कि तरल पदार्थो मे प्रकाश की लहरो को बिखेरने की क्षमता कम होती ह। यू समझ लीजिए कि पानी गदा है, उसमे रेत या चाक या पाउडर या इसी प्रकार के अन्य कण बिखरे हुए है। इस गदे पानी को साफ शीशे के जार मे लेकर एक तरफ कोई बल्ब रोशन कर दिया जाए और दूसरी तरफ म इसे देखा जाए तो आपको प्रतीत होगा कि पानी म एक रास्ता सा बन गया है जिस पर चल कर प्रकाश दूसरी तरफ आ रहा है। वास्तव में यह रेत या पाउडर के बहुत ही सूक्ष्म कणो का करिश्मा है जो पानी मे बिखरे हुए है। इस ढग से प्रकाश के बिखराव को टडल इफेक्ट कहा जाता है। ऐसे बिखराव के लिए प्रकाश की लहरो की लम्बाई का छोटा होना आवश्यक है।

रमन के प्रयोग ने प्रथमत यह बताया कि तरल पदार्थो मे प्रकाश का बिखराव बहुत ही कम होता है। द्वितीय यह कि यदि प्रकाश तरल पदार्थ से हो कर गुजरता है तो उन प्रकाश किरणो की तीव्रता और लम्बाई मे इस प्रकार की कमी आ जाती है कि वे पूर्णत भिन्न प्रकार की लहरे

बन जाती है। इन कमजोर लहरो का परखन और जाचने के लिए उन्होने सात इच लम्बी एक परावर्तक दूरबीन का प्रयोग किया जिसमे प्रयुक्त लस बहुत ही छोटे आकार का था।

प्रा रमन को जब यह एहसास हुआ कि उन्होने एक ऐसी नयी खोज कर ली है जिसका सम्बन्ध प्रकाश के बिखराव से है तो उन्होने अपने प्रयोग म सशोधन करते हुए एक अचम्भित आविष्कार प्रस्तुत किया।

किसी भी स्वच्छ माध्यम से चाहे वह ठोस हो या तरल हो या गैस हो या किसी भी प्रकार की कोई चीज हो जब सीधी दिशा मे एक जैसी किरणे जैसे-ट्यूब लैम्प से फूटने वाला प्रकाश गुजारी जाती है तो वे निश्चित रूप से बिखर जाती है। जब इस बिखरे हुए प्रकाश को एक यत्र के माध्यम से जाचा जाता है तो उस यन्त्र मे कई लकीरे और धारिया दिखाई देती है। इसमे जो बुनियादी लकीरे और धारिया दिखाई देती है, उनकी लम्बाई भिन्न-भिन्न होती है और रग भी अलग-अलग होते है।

अपने इस आविष्कार को रमन ने एक उचित अवसर पर विश्व के सम्मुख प्रस्तुत किया। 16 मार्च 1928 ई को साउथ इडियन साइस एसोसिएशन का एक आयोजन बगलौर मे हो रहा था। उसी आयोजन मे आपने बताया कि यदि प्रकाश की लहरो की सख्या मे कोई परिवर्तन आता है या उनमे कोई कमी या वृद्धि होती है तो इसकी निभरता प्रकाश इन लहरो पर नहीं बल्कि उस पदार्थ पर है जिसमे होकर प्रकाश की ये किरण गुजरती है। की इस प्रकार इन किरणो के बिखराव से उस पदार्थ की सरचना के बारे मे जानकारी प्राप्त की जा सकती है। आपने बताया कि इस नयी प्रकाश-किरणो की सख्या मे परिवर्तन वस्तुत पदार्थ की रासायनिक सरचना का ही परिणाम होती है और ऐसा परिवर्तन सामान्य प्रकाश की लहरो से अधिक लम्बी प्रकाश की लहरो के क्षेत्र मे दिखाई देता है। इस प्रकार प्राप्त होने वाली लकीरो को रमन इफेक्ट कहा जाता है।

डॉ रमन वैज्ञानिक विषयो के एक अच्छे लेखक थे। उनके एक लेख 'पानी एक अमृत'' से एक कथन इस प्रकार है—''मनुष्य ने पवित्र अमृत की खोज मे कई सदिया व्यतीत कीं, जबकि जिदगी का असली अमृत तो हमारे सामने पडा है जो तरल पदार्थो मे सर्वाधिक आम है। इसका नाम है—पानी। इस पानी की बदौलत ही जीवो और वनस्पतियो का जीवन अस्तित्व मे है। इस दृष्टिकोण से इस बात की आवश्यकता है कि पानी के प्रमुख तत्त्वो पर भरपूर शोध किया जाये और उसे विज्ञान के शोध का एक महत्त्वपूर्ण विषय बनाया जाये। इस विषय पर खोज की सम्भावना है और इस पर शोध का कार्य आवश्यक है।'

डॉ रमन ने 'विज्ञान के कुछ पहलू' के शीर्षक से ऑल इडिया रेडियो मद्रास के लिए कुछ भाषण भी लिखे जो आज के विज्ञान के विभिन्न पहलुओ पर भरपूर प्रकाश डालते है। इन विषयो मे 'प्रकाश और रग' 'देहाती क्षेत्रो का भौतिक विज्ञान 'आधुनिक भौतिक कल्पनाए 'भौतिकी का भविष्य और 'वैज्ञानिक दृष्टिकोण' उल्लेखनीय है। अन्तिम लेख मे डॉ रमन लिखते है—''बडे-बडे आविष्कार अधिकाशत युवा मस्तिष्को ने किये है। सच तो यह है कि अन्य चीजे अगर बराबर भी हो तो भी वैज्ञानिक शोधो में कामयाबी के लिए ज्ञान की इच्छा नहीं होती जो उम्र और अनुभव के साथ-साथ प्राप्त होती है। हा, दृष्टिकोण की ताजगी

होती है जो युवा मस्तिष्कों मे बखूबी पाई जाती है। देखा गया है कि उच्च विचार नौजवान मस्तिष्को मे आसानी से आते है।

आगे चलकर रमन विज्ञान की व्याख्या इस प्रकार करते है— 'विज्ञान का छात्र प्रकृति का छात्र है और प्रकृति से वह प्रोत्साहन प्राप्त करता है। वैज्ञानिक अपने मस्तिष्क मे अपनी कल्पना से प्रकृति की तस्वीरे बनाता है या उनका नक्शा उतारता है। प्रकृति की असीम पेचीदगियो को वह कुछ सामान्य सिद्धान्तो के रूप मे हल करने का प्रयास करता है। इस प्रयास मे विज्ञान का विद्वान दूसरी कलाओ के विशेषज्ञ की भाति अपने आपको कडे सिद्धान्तो का पाबद बना लेता है। उसके सिद्धान्त व उसूल स्वय ही तैयार करता है और इसे वह 'लाजिक' कहता है। प्रकृति के निर्माण के लिए मनुष्य के मस्तिष्क की क्षमता प्रयोग मे आती है और विज्ञान इसमे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस दृष्टिकोण से विज्ञान विभिन्न कलाओ मे उच्च स्थान रखता है।''

प्रो रमन का विचार था कि महानतम विज्ञान कभी अस्तित्व मे नहीं आ सकता यदि अनुकरण मात्र ही को ईमान समझ लिया जाये। यू तो दूसरो के खोजे गये तरीको पर चलकर तक्नीकी महारथ हासिल हो सकती है किन्तु महान खोज का आविष्कार नहीं किया जा सकता। उच्च वैज्ञानिक खोज के लिए स्वय वैज्ञानिक के भीतर प्रकृति के भेद ढूढ निकालने की गहरी लगन का होना बहुत आवश्यक है।

प्रो रमन एक महान शिक्षक थे। उनके विचार और वक्तव्य बहुत तार्किक और स्पष्ट होते थे। परिहास की मिलावट से वे अपनी बात को अधिक दिलचस्प और रगीन बना देते थे। वे कहा करते थे कि यदि कोई व्यक्ति अपनी बातचीत या लेखन मे अपने विचारो को पूर्णत व्यक्त कर सकता है, तो इसका तात्पर्य यह है कि उस व्यक्ति की कल्पना सगठित है और वह सही दिशा मे सोच सकता है। उनके भाषणो की यह विशेषता उल्लेखनीय है कि वे श्रोताओ मे जोश पैदा कर देते थे जो स्वय उनमे विद्यमान था। विज्ञान के बारीक से बारीक मसलो को वे बच्चो की भाषा मे बयान कर सकते थे। यह गुण उन्हे प्राकृतिक रूप से प्राप्त था।

प्रो रमन 21 नवम्बर 1970 ई को इस दुनिया से उठ गये और अपने पीछे अमल और अनुभव का एक बहुमूल्य खजाना छोड गये जिससे आने वाले वैज्ञानिको को प्रकाश और निर्देशन मिलता रहेगा।

डॉ रमन ने अपने जीवन में इतने बहुमूल्य वैज्ञानिक शोध सम्बन्धी लेख लिखे जो हर दृष्टिकोण से उच्च स्तरीय और लाभदायक कहे जा सकते हैं। वैज्ञानिक पत्रिका 'करेट साइस' का प्रकाशन उनके प्रयासो के कारण ही सम्भव हो सका। उनको अपनी मृत्युपर्यन्त विज्ञान से लगाव रहा क्योंकि प्रकृति के भेद समझने का विवेक उन्हे प्रकृति ने खूब प्रदान किया था।

उनके शब्दो मे—''मानसिक सुन्दरता सबसे उच्च स्तर की सुन्दरता है, किन्तु विज्ञान इससे भी बढकर है क्योकि इसमे मनुष्य का सौन्दर्य बोध और उसका मस्तिष्क ये दोनों शक्तिया मिलकर प्रकृति की व्याख्या करते है। दूसरी व्यावहारिक बात वैज्ञानिको के सम्बन्ध मे उन्होने यू कही—''परिपक्व वैज्ञानिको का यह आवश्यक कर्त्तव्य है कि वे नये उभरने वाले वैज्ञानिको मे योग्यता और विवेक वाले व्यक्तियो की खोज करे और नये-नये वैज्ञानिको को शोध के अवसर उपलब्ध कराये। उनके लिये स्वतन्त्र रूप से काम-काज के अवसर उपलब्ध कराये।''

# डॉ. जगदीश चन्द्र बसु (1858-1937)

## आधुनिक युग के प्रथम वैज्ञानिक

एक समय की बात है कि बगाल के एक जिले फरीदपुर मे बाबू भगवान चन्द्र बोस नामक एक डिप्टी कलक्टर हुआ करते थे। वे एक बहुत ही शरीफ और देशभक्त व्यक्ति थे। इस जिले के विक्रमपुर नामक एक गाव मे उनके यहा 30 नवम्बर 1858 ई को एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम जगदीश चन्द्र बसु रखा गया। वह समय अग्रेजी हुकूमत का था। अग्रेज के साये से भारतीय कापते थे। किन्तु जगदीश चन्द्र अपने पिता की भाति बहुत प्रतिभाशाली और साहसी व्यक्ति थे। बचपन मे उनकी मा उन्हे धार्मिक कहानिया सुनाया करती थीं, जिससे जगदीश चन्द्र एक आस्तिक सात्विक तथा साथ-साथ देशभक्त व्यक्ति बन गये।

फरीदपुर मे भगवान चन्द्र एक बगले मे रहते थे जिसका काफी बडा अहाता था। बगले के पास ही पद्मा नदी का एक छोटा सा चश्मा बहता था जिस पर एक पुल बना था जिसे पार करके ही घर पहुचा जा सकता था। बहते चश्मे और खूबसूरत से पुल का दृश्य देख कर मासूम जगदीश प्रसन्न हो उठता था। इसीलिए कलकत्ता मे उन्होने एक नक्शा तैयार किया जिसमे नहर के साथ पानी के एक बहते चश्मे को दिखाया गया था जिस पर एक पुल भी बनाया गया। बाद मे जगदीश ने जब कलकत्ता और दार्जिलिग मे मकान बनवाया तो उसके लिए लैण्ड स्केप गार्डेन के डिजाइन तैयार किए और पानी का चश्मा तथा पुल को उसमें शामिल किया। पानी का बहाव उन्हे बेहद पसद था। इसीलिए वे बडी-बडी नदियो के पास ठहर कर उनका नजारा करते और कभी-कभी छुट्टिया ऐसे ही स्थानों पर बिताया करते।

जगदीश चन्द्र धार्मिक समारोह मे बडे शौक से सम्मिलित होते थे। इन समारोहो ने उनमें महाकाव्यो और उनके पात्रो तथा चरित्रो मे दिलचस्पी उत्पन्न की। इसीलिए रामायण और महाभारत का उन्होने शौक से अध्ययन किया। महाभारत के बहादुर सिपाही और उसके अद्वितीय पात्र तथा महानता के प्रतीक, जगदीश के मस्तिष्क मे घर कर गये। कर्ण ने उन्हे विशेष रूप से प्रभावित किया। वे अक्सर कहा करते थे कि राम और लक्ष्मण के चरित्र अधिक प्रभावित करते है किन्तु वे अतिशय पूर्ण और अत्यधिक कामयाब भी है जबकि कर्ण की असफलताओ और महरूमियो से भरी जिन्दगी के कारण उसे राजा होना चाहिये था और फिर कर्ण की जिदगी उन्हे अपने पिता का स्मरण कराती थी जिन्होने अपने हम वतनो के लिए स्वय को कुर्बान कर दिया और अन्तत उन्हे महरूमियत ही हासिल हुई।

11वर्ष की आयु मे जगदीश कलकत्ता आए जो न सिर्फ राजधानी बल्कि बगाली पुनर्जागरण का केन्द्र रहा। वहा उन्होने कई कारनामे किए। उस समय उन्हे अग्रेजी भाषा बहुत कम आती थी। 3 महीने तक स्कूल मे शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात उन्हें अग्रेजी भाषा सीखने के लिए सेट जेवियर स्कूल मे भर्ती कराया गया जिसमे उन दिनो केवल यूरोपीय और एग्लो-इडियन बच्चे ही पढा करते थे। पहले ही दिन इस देशी लडके का सामना क्लास के एक चैम्पियन बाक्सर से हुआ जिसके नतीजे मे उनके नाक से खून बहने लगा। बाद मे जगदीश ने उस घटना की चर्चा करते हुए लिखा था कि "उस वक्त मै बाक्सिग के बारे मे कुछ नहीं जानता था लेकिन मैने उस चुनौती को स्वीकार कर लिया जिसकी मुझे सख्त सजा मिल गई और उस रवैये के बाद प्रतियोगिताओ के सम्बन्ध मे मुझे बहुत सहायता मिली।"

जगदीश ने एक छात्र मेस स्थापित किया जहा कॉलेज के छात्र और उनके रिश्तेदार ठहरते थे। यह इतनी दिलचस्प जिन्दगी नहीं थी किन्तु यह उनके लिए कुछ व्यस्तता और प्रसन्नता का माध्यम अवश्य था। उन्होने कुछ जानवर पाले और छोटे-छोटे पुल और पानी के चश्मे बनाये। उस वक्त भगवान चन्द्र बर्दवान के सहायक कमिश्नर थे। जगदीश छुट्टियो में अपने घर चले जाते थे। उनके साथ कबूतर और खरगोश भी होते। एक बार तो वह एक भेडिया साथ ले गये। वह टट्टू पर सवारी करते और पालतू जानवरो के लिए घरोंदे बनाते। उनकी बहने भी उनकी सहायता करती। जगदीश की सारी छुट्टिया इसी तरह की दिलचस्पियो मे गुजरतीं। जगदीश चन्द्र बसु एक स्थान पर लिखते है— 'जब मै देहाती स्कूल पढने के लिए भेजा गया तो वहा मुझे किसान और मछेरे बच्चो के साथ रहने खेलने और पढने का अवसर मिला। इन मछेरे बच्चो से मैने न केवल प्रकृति से प्रेम करने, बल्कि इसानियत का पाठ पढा और मेरी पौधो-पत्तो मे दिलचस्पी बढती गई।"

जगदीश ने 16 वर्ष की उम्र मे छात्रवृत्ति के साथ मैट्रिक किया और सेट जेवियर कालेज मे प्रवेश लिया। वहा उनकी मुलाकात भौतिकी के प्रसिद्ध शिक्षक फादर लेफेन्ट से हुई। जगदीश की गिनती उनके चहेते शिष्यो मे होने लगी। यह फादर लेफेन्ट का ही प्रभाव था कि उन्होने अपने लिए भौतिकी को ही पसन्द किया यद्यपि उनकी दिलचस्पी सजीवो के अध्ययन की ओर थी। जगदीश ने अपने शिक्षक से अनुभव प्राप्त करने की योग्यता पैदा की जिससे बाद मे उनके पशसक और साथी भी प्रभावित हुए।

सेट जेवियर कालेज के रेक्टर ने जगदीश को उस समय एक प्रमाणपत्र दिया था जो उनकी मृत्यु के कई दिन उपरान्त जगदीश को मिला। इस पत्र मे रेक्टर ने कुछ अन्य बातो के अतिरिक्त यह भी लिखा था कि कालेज की शिक्षा के दौरान जगदीश ने विज्ञान और गणित में विशेष योग्यता प्राप्त की और सस्कृत तथा लातीनी पर उनकी अच्छी पकड है और वे अद्वितीय प्रतिभा के धनी है। इससे प्रतीत होता है कि जगदीश बचपन से ही बहुत प्रतिभाशाली थे।

जगदीश 1880 ई मे इग्लैण्ड के लिए रवाना हुए और वहा पहुचने के पश्चात लदन मे उन्हे मेडिकल मे प्रवेश मिला जिसमे भौतिकी और रसायन के अतिरिक्त वनस्पति और जीवो के अध्ययन सम्बन्धी विषय भी सम्मिलित थे। यात्रा के कारण उनकी बीमारी और भी बढ गई और इग्लैण्ड के प्रवास के दौरान वह बीमारी से ग्रस्त रहे। इस बीमारी को कालाजार कहा जाता है। अपने एनाटमी टीचर की सलाह पर उन्होने मेडिसिन की पढाइ छोड दी क्योकि उसमें कडी मेहनत की आवश्यकता थी। जनवरी 1881 मे उन्होंने क्राइस्ट कालेज कैम्ब्रिज में प्रवेश लिया जहा उन्हे विज्ञान मे पढने के लिए स्कालरशिप भी मिली।

कैम्ब्रिज में काफी रुचिकर वातावरण था। जगदीश ने दवाओं का प्रयोग करना बन्द कर दिया और बोटिंग करने लगे लेकिन दो वर्ष तक भी उनका स्वास्थ्य पूरी तरह ठीक नहीं हुआ। बसु के अध्यापक ने सलाह दी कि वह अपनी मित्रता का दायरा बढाए। इसीलिए कुछ समय बाद उनकी तन्हाई और शर्मीलापन खत्म हुआ और वह कालेज के जीवन का आनन्द उठाने लगे। मित्रो की सख्या बढती गई। इसका फल यह हुआ कि उनका स्वास्थ्य भी सुधरता गया। उन्होने प्राकृतिक विज्ञान क्लब मे प्रवेश ले लिया जहा वैज्ञानिक विषयों पर गम्भीर बहस और व्याख्यान हुआ करते थे। जगदीश ने गर्मी की पहली छुट्टिया वारियत द्वीप मे व्यतीत की। एक बार किश्ती चलाते हुए उन्होंने तूफान का सामना भी किया। दूसरी बार गर्मी के मौसम में वे अपने कुछ साथियो के साथ पहाडी क्षेत्रों मे भ्रमण करते रहे।

1880 ई मे उस समय के कुछ प्रसिद्ध योग्य और प्रशसनीय व्यक्तियो ने जिनमें माइकल मास्टर (फिजियालोजी) फिजान्स विल्फर (इम्ब्रियालॉजी) फ्रास डार्विन (वेजिटुबल फिजियालॉजी), सिडनी वाइन्स और ए व्हिम ने फादर लेफेन्ट की भाति जगदीश का बहुत हौसला बढाया। उनके शोध के परिणामो के सम्बन्ध मे इन अध्यापकों ने उनकी बहुत सहायता की। जगदीश ने 1884 ई में प्राकृतिक विज्ञान ट्रीपोज में कैम्ब्रिज से डिग्री प्राप्त की। उनके विषय—भौतिकी रसायन और जीव विज्ञान से सम्बन्धित थे। इसके अतिरिक्त जगदीश ने भारत पहुचकर वाइसराय से शिमला मे मुलाकात की। वाइसराय ने उनका बहुत गर्मजोशी से स्वागत किया और वायदा किया कि इम्पीरियल एजुकेशनल सर्विस मे उन्हे उचित और याग्य पद दिया जाएगा। ये काम तो न हो सका किन्तु बसु प्रेसीडेन्सी कालेज मे भौतिकी के प्रोफसर बन गये।

बसु ने प्रेसीडेन्सी कालेज मे अपने शुरुआती वर्ष भोतिकी प्रयोगशाला स्थापित करने और शोधो मे व्यतीत किए। जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण फेसला उन्होंने अपने 36वे जन्म दिन पर किया। उन्होने इस बात का इरादा किया कि वह स्वय को आधुनिक अन्वेषणो हेतु समर्पित कर देगे। इस फैसले क फलस्वरूप एक ऐसा व्यक्ति पेदा हुआ जो उनके जीवनी लेखक

प्रा पेट्रिक गुड्स के शब्दा मे आधुनिक युग का प्रथम भारतीय था जिसने विज्ञान के क्षेत्र म अनेक कारनामे किए। जगदीश चन्द्र बसु की जीवनी 1920 ई मे लन्दन से प्रकाशित हुई।

भारत के बारे म जितनी भी जानकारिया प्राप्त हुई जगदीश ने उन पर बगाली में लेख लिखे हैं। उनकी एक पुस्तक ''अबयाक्ता' बाद मे प्रकाशित हुई जिसमे कुछ लेखो को सम्मिलित किया गया। 1884 मे अपने बगाली लेख 'जकताकरा' मे उन्होने अजन्ता की नई खोजी गई गुफाओ और मदिरो की चित्रकारी का उल्लेख किया हैं जिसका तात्पर्य यह है— ''दो भिन्न क्षेत्रों से बादलो का हुजूम टकराया दो चेहरे प्रकट हुए और खौफनाक टकराव प्रकट हुआ। यह टकराव आदि से प्रारम्भ है और अन्त तक बना रहेगा। ये दो लड़ने वाले प्रकाश और अधकार सच्चाई और झूठ नेकी और बुराई मे है। जब पूर्व में समुद्र की सतह पर सूरज का देवता सात घोडो के रथ पर सवार होता है तो अन्धेरे की हार होता हैं और अन्धेरा पश्चिम की ओर भागने लगता है।

बसु ने अपनी 36वीं वर्षगाठ पर विज्ञान मे शोध करने का वायदा किया। जिस समय उन्होंने ढग से रिसर्च प्रारम्भ किया उनके पास कोई प्रयोगशाला नहीं थी। किन्तु तीन महीने के भीतर ही उन्हे बिजली के प्रकाश की किरणो पर अपनी प्रथम खोज के सम्बन्ध में नए उपकरण बनाने मे सफलता प्राप्त हो गई रायल सोसाइटी ने एक वर्ष मे उनकी खोज के प्रकाशन की मन्जूरी भी दे दी जो ब्रिटेन की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक सस्था थी। 1896 ई मे लदन यूनिवर्सिटी ने उन्हे उनके शोध लेख डिफ्राक्टिग ग्रेटिंग के द्वारा बिजली की लहरो की लम्बाई पर डी एससी की डिग्री दी और उन्हे परीक्षा मे बैठाने की आवश्यकता भी नहीं महसूस की गई। लार्ड क्यूलवेन ने लिखा था कि बसु के कार्य ने उन्हे आश्चर्य व प्रसन्नता की मिश्रित भावना से सराबोर कर दिया है। फ्रासीसी एकेडमी ऑफ साइस के भूतपूर्व अध्यक्ष मिस्टर कास्तू ने भी उनकी प्रशसा करत हुए लिखा था कि ''आपने वैज्ञानिक उपकरणो को महारथ से उपयोग किया है। '

रेडियो और टेलीविजन के इस दौर मे हर शिक्षित व्यक्ति इलैक्ट्रो-चुम्बकीय लहरो या किरणो के नाम से परिचित है। प्रसिद्ध ब्रिटिश वैज्ञानिक क्लार्क मैकवेल ने इसकी व्याख्या करने की कोशिश की थी। अन्यथा बीती हुई शताब्दी के मध्य तक यह पूर्णत नया विषय था। उस म्मय तक प्रकाश की लहरो को इथर के कम्पन्न से समझा जाता था जो वातावरण मे विद्यमान रहते है। मैकवेल के अपने इलेक्ट्रो-चुम्बकीय दृष्टिकोण के अनुसार विद्युत लहरे इथर मे बारी बारी से पैदा होन वाले बहाव से प्राप्त होती हे। इस वैज्ञानिक ने गणित की सहायता से अपनी बात को सिद्ध किया और कहा कि इलैक्ट्रो चुम्बकीय लहरे एक जैसी होती हैं। उनमे प्रकाश की विशेषता पाई जाती है जैसे—परावर्तन, अपवर्तन इत्यादि।

बसु ने यह पता लगाया कि प्रकाश की लहरो की भाति ये लहरें भी सीधी रेखा में गुजरती ह फिर यह भी पता लगा कि प्रकाश दर्पण से परावर्तित होता है और स्वच्छ और चमकीले माध्यम से उसका अपवर्तन होता है। जगदीश ने बिजली के लहरो के सम्बन्ध में भी इम अनुभव को प्रस्तुत किया। कितु इनमे कुछ महत्त्वपूर्ण अन्तर है। यद्यपि पानी प्रकाश के लिए स्वच्छ हेंसियत रखता है कितु बिजली की लहरो के लिए ऐसा नहीं है। बल्कि इसके

विपरीत बिजली की लहरो को ईट तारकोल इत्यादि से गुजारा जा सकता है। जिस प्रकार से प्रकाश पानी मे अपवर्तित होता है उसी प्रकार इट म विद्युत लहरों का अपवर्तन होता है।

बसु के दूसरे शोध ने विज्ञान की दुनिया को आश्चर्यचकिन कर दिया। सामान्य ढग की प्रकाश की लहरें जब अनेक क्षेत्रो मे असामान्य ढग से गुजरती है तो प्रकाश की गति एकरुखी हो जाती है। एक प्रसिद्ध अमेरिकी भौतिकी वैज्ञानिक ने बसु क इस कारनामे के सम्बन्ध म यू कहा था कि– 'बसु ने बताया कि विद्युन लहरें प्रकाश की भानि परावर्तित, अपवर्तित यहा तक कि पूरी तरह परावर्तित व दोहरे अपवर्तन की विशेषता को प्रकट करती है।' यह शोध आधुनिक विज्ञान का हिस्सा बन गया है। लार्ड यले रायल सोसाइटी को इस शोध से अवगत कराते रह।

प्रारम्भ मे बसु का अध्ययन और उनकी शोध सम्बन्धी व्यस्तता मात्र भौतिकी तक ही सीमित थी किंतु बाद मे वह जीव विज्ञान की तरफ भी उन्मुख हुए। भौतिकी से जीव विज्ञान की ओर उनका यह रुझान परिस्थितियों के फलस्वरूप हुआ था। बाह्य देशो के भ्रमण के पश्चात वापस लौटने पर बसु अपने विद्युत सम्बन्धी शोध में व्यस्त रहे। इन शोधो के परिणाम उन्होने रायल सोसाइटी को भेजे थे। सोसाइटी ने 1897 ई से 1920 ई के दौरान उनके 6 लेख प्रकाशित किए। इन लेखो के प्रकाशन पर परमेशीगन, बेलफाइट और डबलन के भौतिक शास्त्रियों ने उन्हें अनेक प्रशसा भरे पत्र लिखे। 1899 ई मे बसु ने अनुभव किया कि जानवरो के शरीर की बनावट के कमजोर हिस्सो की भाति ही रिसीविंग यत्र, जो निर्जीव वस्तु से बना हुआ है को जब लगातार प्रयोग मे लाया जाता है तो वह कम सवेदनशील हो जाता है किन्तु कुछ समय बाद उसकी क्षमता पुन लौट आती है। इस स्थिति में बसु ने परमाणविक दबाव के नजरिए की ओर दिलचस्पी लेनी शुरू की।

बसु अनजाने में ही भौतिकी से फिजियालॉजी की ओर उन्मुख हुए और जिस ढग से उन्होंने कार्य किया उससे वह इस नतीजे पर पहुचे कि सजीव और निर्जीव के बीच बहुत ही मामूली अन्तर है। उनका विद्युतीय-लहरो की खोज का तत्र कोहरा और गुलवानों मीटर पर आधारित था। ये दोनो एक शुष्क सेल के माध्यम से तार से जुडे होते है। गुलवानो मीटर की सुई विद्युत लहरों की गति का रिकार्ड रखती है। स्पष्टत उसका सामना जानवरो के देखने के तत्र से किया जाता था। बसु ने कोहरा को आख और गुलवानो मीटर को मस्तिष्क और जुडे हुए तार को आप्टक गर्ग से नामित किया है। बसु ने निर्जीव और सजीव चीजो के अणुओ की सरचना का अध्ययन किया। लोहे के हल्के गर्म मैगनेटिक ऑक्साइड और शरीर के अगो में काफी समानता है। बसु ने इस तत्र का विस्तारपूर्वक तुलनात्मक अध्ययन किया। जिस तरह पुट्ठों में एक निश्चित सीमा के बाद चेतना समाप्त हो जाती है उसी प्रकार आयरन ऑक्साइड जो लोहे का खराब भाग है, उसे भी मसलकर या गर्म पानी से जिस तरह पुट्ठों की थकान को दूर किया जा सकता है समाप्त कर सकते है।

बसु के शोध का दूसरा स्तर अधिकाशत जीवो से सम्बन्धित रहा। भौतिकी के क्षेत्र मे उनके शोध ने उनकी दिलचस्पियों का रुख फिजियॉलॉजी की ओर मोड दिया। गलेना की कलमो से आख का मॉडल तैयार करने के अलावा सीलिनियम की विशेषता का आपने अध्ययन किया जो विद्युतीय क्षमता को परिवर्तित करती है। लेकिन इसका दारोमदार उस पर

पडने वाले प्रकाश की तीव्रता पर है। मीनियम इन दिनो सीलिनियम के साथ ट्रास्टर्स की तैयारी प्रयोग में की जा रही है और रेडियो मे वाल्वट्यूब्स और अन्य इलैक्ट्रानिक यत्रों के स्थान पर प्रयोग मे लाया जा रहा है। वर्तमान समय मे जितने बडे इलेक्ट्रानिक कन्ट्रोल मशीने है जैसे—रडार गाइडर मिसाइल्स और कम्प्यूटर इत्यादि इसे फिजियॉलॉजी की परिभाषा में मस्तिष्क श्रवण शक्ति और प्रतिक्रिया जैसे नाम दिए गये है।

कम्प्यूटर को अक्सर मैकेनिकल मस्तिष्क से नामित किया जाता है जिसके कुछ भाग याददाश्त के कामों को अजाम देते है। वास्तव मे इस मस्तिष्क के सचार और कट्रोल को सायब्रेनाटिक्स की आधुनिक विज्ञान पद्धति के रूप मे प्रस्तुत किया गया है।

इस दिशा में चिन्तन का जो इन्क्लाबी ढग अपनाया गया उसका सेहरा बसु के सिर पर है। यदि वे भौतिकी मे बुनियादी कार्य जारी रखते तो रेडियो-साइस और इलेक्ट्रानिक्स की उन्नतियो तथा आश्चर्यजनक आविष्कारों के जिम्मेदार होते। यह स्थिति कुछ अन्य लोगों के लिए सु खदायी नहीं रही किंतु हमने देखा कि बसु ने किस तरह अपने विषय का अध्ययन किया। उन्होने अपने शोध का विरोध करने वालो से अपने लगातार शोध कार्य के जरिए बदला लिया। यदि वे भौतिकी का गहन अध्ययन न करते तो बाद मे उन्हे फिजियालॉजी के अध्ययन मे काफी कठिनाई होती। वैसे वास्तविकता में उन्होंने सदैव भौतिकी का ही सहारा लिया। मानवीय चितन और याददाश्त के अध्ययन मे भी उनकी दिलचस्पी रही और बाद के उनके शोध इस बात के प्रमाण है।

पौधो मे गलफडो के बिना सास आमाशय के बिना पाचन और अगों के बिना गति रहती है तो फिर एक व्यवस्थित शारीरिक तत्र के बिना जोश और भावना क्यो नहीं होती? बसु ने पहली बार बताया कि जीवों की भाति इस तरह की गति विद्युत-करेट गुजारने से पौधों मे भी पैदा होती है। विद्युत पथ और मैकेनिकल प्रतिक्रिया में परिवर्तन को उन्होने अपने शानदार आप्टक लीवर के जरिए खोजा। बसु के प्रारम्भिक परिणाम इतने सफल थे कि रायल सोसाइटी ने यह निर्णय किया कि उन्हें आर्किब्ज में रखा जाए। सोसाइटी का यह निर्णय इस तर्क पर आधारित था कि बसु का यह शोध तत्कालीन दृष्टिकोण का विरोध करता है।

बसु ने मैमूसा की सरचना की विशेषता को प्रस्तुत किया। इस पौधे में हर पत्ते पर बरगुच्छे अच्छे ढग से जमे होते है और एक ही स्थान से इस तरह के कई पत्ते निकलते हैं। पत्ते तने की डठल से सहारा लिए होते है। बसु ने अनुभव किया कि जब उन्होंने तने पर विद्युत तार लगाया तो कुछ ही क्षणो मे तार के पास के डठल का निचला हिस्सा टूट गया और कुछ समय बाद डठल के दूसरे सिरे के पत्ते भी सिकुड गए। गलवानो मीटर को जोडने से डठल के निचले हिस्से के टूटने और पत्तो के मुरझाने के बीच जो विद्युत का फैलान हुआ उसे रिकार्ड किया। अगर इस सम्पूर्ण यूनिट को इसी स्थिति मे रखा जाए तो फिर वे अपनी पहले की अवस्था में लौट आएगे।

बसु ने बताया कि पौधे विशेष रूप से तापमान की अधिकता के कारण मरते है। इस बात का प्रयोग मेकेनिकल प्रभाव और विद्युत करेट की गति मे परिवर्तन के द्वारा किया गया। ये चीजें शोध के परिणाम को एक समान रूप से स्पष्ट करती है। पौधों के इस

मुरझाने की क्रिया मे तीव्र और प्रभावी विद्युत करेट भी साथ होता है। पेचीदे किस्म का तापमान जिससे मृत्यु होती है उसे खोजने के लिए बसु ने एक यत्र का आविष्कार किया जिसे मृत्यु का रिकार्डर कहा गया। बसु ने यह प्रयोग किया कि जहर देने या मुरझाने की क्रिया से उस रिकार्डर की सुई नीचे गिरने लगती है तथा पौधो मे मृत्यु की प्रक्रिया हर दृष्टिकोण से जानवरो की ही भाति होती है।

बसु ने पौधो की सरचना के विषय मे भी महत्त्वपूर्ण कार्य किया। पौधो मे एक हरित पदार्थ क्लोरोफिल पाया जाता है जो सूर्य के प्रकाश के प्रभाव से कार्बन डाइआक्साइड और पानी को ग्लूकोज और स्टार्च मे परिवर्तित कर देता है जो पौधो के लिए शक्ति का स्रोत है और ये ही चीजे जीवो को भी शक्ति प्रदान करती है जिसका सबध पूर्ण रूप से पौधो के जीवन से है। बसु ने ग्लूकोज की सरचना के विश्लेषण के लिए पौधो द्वारा अवशोषित किए गये प्रकाश को सही ढग से मालूम करने की दिशा मे उल्लेखनीय काम किया। उन्होने एक अति सवेदनशील यत्र तैयार किया जिससे पौधो की उपरोक्त क्रिया की जानकारी प्राप्त की जा सके। पौधे आक्सीजन की जितनी मात्रा उत्सर्जित करते है और जो अवशोषित की गई कार्बन डाइआक्साइड के बराबर होती है, उन्हे इसी यत्र के माध्यम से रिकार्ड किया जाता है।

1914 ई मे बसु अपने वैज्ञानिक मिशन पर विदेश रवाना हुए। इस बार वे अपने साथ मैमोसा डिस्मोडेम के पौधे और कई यत्र भी ले गये। पूरी सावधानी के बावजूद भी यात्रा मे कुछ ही पौधे ठीक रहे। लन्दन में कई विशिष्ट वैज्ञानिक जिनमे सर विलियम क्रोकश, जो उन दिनो रायल सोसाइटी के अध्यक्ष भी थे, मायरा वेल पर बसु की प्रयोगशाला देखने आए। इन वैज्ञानिको मे एक प्रसिद्ध जीव वैज्ञानिक भी थे जिन्होने बसु से पूछा कि क्या वे जानते है कि रायल सोसाइटी मे उनके लेखो को प्रकाशित न करने की सलाह किसने दी थी। फिर इस बात का यू जवाब दिया—"वह व्यक्ति मै ही था। मुझे विश्वास नहीं था कि इस तरह की बात सम्भव भी है और मेरा यह विचार था कि आपकी पूर्वी विचारधारा ने आपको गुमराह कर दिया है। अब मै यह पाता हू कि आप पूर्णत सही थे।"

बसु की इच्छा थी कि रायल इन्स्टीट्यूट लन्दन की ही भाति, जहा वे काम कर चुके थे और लैक्चर्स व अपने अनुभव भी प्रस्तुत कर चुके थे, की तरह भारत मे भी एक साइस इन्स्टीट्यूट स्थापित किया जाए। यह विचार उनके मस्तिष्क मे उसी वक्त से ही मचल रहा था। उनके मस्तिष्क में विदेशी वैज्ञानिको और दूसरे व्यक्तियो का यह दृष्टिकोण भी चुभ रहा था कि भारतीय लोग काल्पनिक होते है। इसीलिए वे वैज्ञानिक कार्यो व शोध के लिए योग्य नहीं है। फिर पश्चिम की तुलना मे उनके पास अन्वेषण प्रयोगशालायॅ भी नहीं है और वे उच्चस्तरीय यत्रो को बनाने की योग्यता और क्षमता भी नहीं रखते। जगदीश चन्द्र बसु इस बात के उत्सुक थे कि कोई ठोस कदम उठाया जाए और इन लोगो की गलत विचारधारा का जवाब दिया जाए। उनके (बसु) मस्तिष्क में ऐसी सस्था की कल्पना थी जो उच्चस्तरीय शोध कार्यो के लिए सुविधाए उपलब्ध कराए और लैक्चर्स तथा अनुभवो के द्वारा उन शोधो के परिणामो को जन-सामान्य तक लाने मे सहायक हो।

1917 ई तक ऐसी सस्था की स्थापना के लिए 11 लाख रुपये जमा हो गये। वार्षिक एक लाख रुपये की सहायता के अतिरिक्त भारत सरकार ने अपर सर्क्युलर रोड पर बसु के मकान से लगी हुई एक जमीन को प्राप्त करने के मामले मे भी उनकी सहायता की। इस तरह बसु इन्स्टीट्यूट अस्तित्व में आया। यह दिन बसु का जन्म-दिन था। उसी समय मे इस इन्स्टीट्यूट को भारत सरकार की सहायता मिल रही है और अब तो देश की प्रसिद्ध रिसर्च सेन्टर की हैसियत मिल चुकी है।

सर जगदीश ने इस प्राचीन भारतीय परम्परा को पुनर्जीवित किया कि एकता उसी समय स्थापित हो सकती है जब विभिन्नता समाप्त हो जाए और मस्तिष्क सतोष के साथ एक विशेष बिन्दु तक पहुच जाए। बसु इन्स्टीट्यूट को विदेशो मे बहुत शोहरत मिली और कई विदेशी मेहमान यहा आए और विशेष रूप से बसु के जीवन के अन्तिम वर्षो मे इस इन्स्टीट्यूट की गिनती जब विश्व के महान शोध सम्बन्धी केन्द्रो मे होने लगी तो कई बाहरी विशेषज्ञो ने इस इन्स्टीट्यूट का सर्वेक्षण किया, जिनमे अमेरिका के डा मैगन, हर्षफील्ड और डॉ जार्ज सी वार्ड, रूसी फिजियालोजिस्ट प्रो वारतोफ, ब्रिटेन की प्रसिद्ध वैज्ञानिक पत्रिका 'नेचर' के सम्पादक सर रिचर्ड ग्रेगरी शामिल है। हेक्सले ने भी इस इन्स्टीट्यूट का सर्वेक्षण किया और वे बसु के शोध से बहुत प्रभावित हुए। उन्होने इसके बाद एक लेख लिखा जिसमे उन्होने लिखा है कि बसु के सजीवो के जीवन के बारे मे जो दृष्टिकोण को उन्हे परिवर्तित कर दिया है।

जगदीश की उपलब्धियो और कारनामो ने उन्हे कई पुरस्कारों से सम्मानित कराया। सरकार ने उन्हे सी आई ई बनाया यानि उन्हें इडियन इम्पायर की मित्रता का अवसर मिला। उन्होने टैगोर को भी लिखा था कि "मुझे दुमछल्ला मिला है" और बाद में जार्ज पचम के राज्यारोहण के अवसर पर उन्हे स्टार ऑफ इडिया की कमीशनशिप की उपाधि मिली। कलकत्ता विश्वविद्यालय ने उन्हे 1912 ई मे डी एससी की डिग्री प्रदान की। 1927 ई मे वे इडियन साइस काग्रेस के जनरल प्रेसीडेसी नियुक्त हुए। 1931 ई मे कारपोरेशन ऑफ कलकत्ता मे भी उन्हे सम्मान दिया और कारपोरेशन के मि सुभाष चन्द्र बसु ने भी उनसे अपनी मित्रता की इच्छा प्रकट की। उनके लाखों हमवतनो की ओर से प्रेम और आदर की भावना का समर्पण आचार्य का खिताब है जो उन्हे पेश किया गया था।

1937 ई मे बसु कलकत्ता वापस जाने की तैयारिया कर रहे थे ताकि इन्स्टीट्यूट के वार्षिक समारोह मे भाग ले सके। किंतु 29 नवम्बर की सुबह जब वे स्नान कर रहे थे, उनको दिल का दौरा पडा और उनकी मृत्यु हो गयी। यह एक बहुत ही अचानक खामोश मौत थी। उस समय उनके 79वीं जन्मदिवस मे मात्र 7 दिन शेष रह गये थे जिनकी तैयारिया जारी थीं। किन्तु केवल उनका मृत शरीर ही कलकत्ता पहुच सका। अंतिम सस्कार के अवसर पर शोक सतृप्त लोगों का विशाल जन-समूह उनके साथ था जिन्होने उन्हे विदा किया जैसे कि बसु एक राष्ट्रीय नायक थे और शोककर्त्ता हजारो-लाखो भारतीय।

मृत्यु से एक दिन पहले शाम को जगदीश ने अपने एक रिश्तेदार को जो बसु इन्स्टीट्यूट मे सुपरिन्टेन्डेन्ट थे, को एक निर्देश दिया था और कहा था उनकी व्यक्तिगत सम्पत्ति जो साढे चार लाख रुपये थी, को उनकी मृत्यु के पश्चात भलाई के कामों में खर्च

किया जाए। अन्तिम रस्म के बाद उनकी विधवा ने, जिनका बसु की सफलता और प्रसिद्धि मे महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है बसु के निर्देशानुसार पूरी सम्पत्ति को विभिन्न समाजसेवी सगठनो मे बाट दिया। उनके यहा सिर्फ एक पुत्र पैदा हुआ था किन्तु बचपन मे ही उसकी मृत्यु हो गई थी।

जगदीश चन्द्र बसु का जीवन एक आदर्श जीवन था, एक ऐसा जीवन जिस पर भारतीय गर्व कर सकता है। यदि हर भारतीय इस ढग की जीवन शैली अपना ले तो देश का कल्याण हो जाए। इसमे कोई सन्देह नहीं कि बसु जैसे वैज्ञानिक हर व्यक्ति नहीं हो सकता। आप बिल्कुल साधु जैसे व्यक्ति थे। वे अध्ययन व अध्यापन के आशिक, वैज्ञानिक लगन के पक्के और राष्ट्र की उन्नति के इच्छुक थे। त्याग उनके जीवन का सिद्धान्त रहा। वे कहा करते थे—''सस्ती शोहरत और रुपया पैसा न कमाना ही असली त्याग है और जब शोहरत हासिल करने और रुपया कमाने की योग्यता विद्यमान हो और कोई न कमाए तो उससे बडा कोई त्याग नहीं।'' अग्रेजी की प्रसिद्ध अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक 'इनसाइक्लोपीडिया' ने बसु का इस ढग से परिचय दिया है—''बसु अपने समय से बहुत आगे थे, इतने आगे कि उनके शोध व व्यक्तित्व का सम्पूर्ण जायजा नहीं लिया जा सकता।''

बसु ने अपने वैज्ञानिक कारनामो की बदौलत आइन्स्टीन, रवीन्द्रनाथ टैगोर कई प्रसिद्ध यूरोपीय वैज्ञानिकों और महात्मा गाधी से इज्जत प्राप्त की, जो उनके उच्च्व चरित्र शोध सम्बन्धी योग्यता और निष्कपट व्यक्ति होने का परिचायक है।

## डॉ. प्रफुल्ल चन्द्र राय (1861 - 1944)

### रसायन विज्ञान के प्रसिद्ध आचार्य

बगाल के खुलना जिले के एक छोटे से गाव 'रूकती अरौली' में 2 अगस्त 1861 ई को प्रफुल्ल चन्द्र का जन्म हुआ। इनके पिता हरीश चन्द्र गाव मे ही एक स्कूल चलाते थे। यह स्कूल प्रारम्भ मे आठवीं कक्षा तक था जो बाद मे हाई स्कूल हो गया। प्रफुल्ल चन्द्र ने इसी स्कूल मे अपनी प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की और इसके पश्चात कुछ वर्षों तक कलकत्ता मे पढे। बचपन में प्रफुल्ल को पेचिश की बीमारी हो गई जिसके कारण उन्हे कुछ अवधि के लिए पढाई छोडनी पडी, किन्तु प्रफुल्ल को पढाई का इतना शौक था कि बीमारी की स्थिति मे भी वह बिस्तर पर लेटे-लेटे घटो तक पढते रहते। उनके पिता की एक छोटी सी लाइब्रेरी थी जहा बीसियों किताबें प्रफुल्ल चन्द्र राय ने बचपन मे ही पढ डालीं। प्रफुल्ल ने बचपन मे ही जार्ज इलियट और डिकेन्स के नावेल, गोल्ड स्मिथ और एडीसन के निबन्ध पढ डाले। यह बहुत प्रशसनीय बात है कि इतिहास, भूगोल और साहित्य सम्बन्धी पुस्तके पढना उनका शौक था और प्रतिदिन समाचार-पत्र तो वह पढा ही करते थे। विशेष रूप से बेजामिन फ्रैकलिन की जीवनी उन्हे बहुत पसन्द थी।

गाव के स्कूल मे 1879 ई मे मैट्रिक के बाद प्रफुल्ल ने मेट्रो यूनियन कालेज कलकत्ता मे प्रवेश ले लिया। उन दिनो उस कालेज मे विज्ञान की पढाई का प्रबन्ध नहीं था, इसीलिए प्रफुल्ल को प्रेसीडेन्सी कालेज जाना पडा। उन्हे अपनी अद्वितीय प्रतिभा के कारण कई वर्षो तक छात्रवृत्तिया मिलती रहीं। उन्हे सुरेन्द्रनाथ बनर्जी जैसे गुरुओ का शिष्यत्व प्राप्त करने

का अवसर मिला जिसके कारण उनका मिजाज देशभक्तिपूर्ण और स्वदेशी की ओर उन्मुख हुआ। प्रफुल्ल चन्द्र 1882 ई मे उच्च शिक्षा के लिए लन्दन गये और 6 वर्षो तक एडमबरा विश्वविद्यालय मे उन्होने रसायन विज्ञान, फल-पौधो और जीव विज्ञान की शिक्षा प्राप्त की। उन्हीं दिनो विश्वविद्यालय मे निबन्ध लेखन की एक प्रतियोगिता आयोजित की गई जिसमे विषय था—"क्रान्ति के पूर्व और पश्चात का भारत।"

प्रफुल्ल चन्द्र यद्यपि विज्ञान के छात्र थे किन्तु उनमे राजनीतिक विवेक भी था। विज्ञान के साथ उन्हे दूसरे विषयो का भी ज्ञान था। इसीलिये प्रोफेसर लोगो ने प्रफुल्ल चन्द्र को उनके इस लेख पर बहुत शाबाशी दी। एक के बाद एक, उनके कई लेख लन्दन की पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए जिससे प्रफुल्ल की शोध व अन्वेषण सम्बन्धी योग्यता की धाक जम गई। 1885 ई मे प्रफुल्ल ने बी एससी की परीक्षा उत्तीर्ण की। एडमबरा मे उन्हे बहुत योग्य प्रोफेसरो के निर्देशन मे शोध व शिक्षा-प्राप्ति का अवसर प्राप्त हुआ। विशेष रूप से प्रो ब्राउन के निर्देशन मे आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र ने बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य किया। प्रारम्भ मे आचार्य को अनेक कठिनाइयो का सामना करना पडा। किन्तु उनकी लगन और कठिन परिश्रम से मभी मुश्किलें हल हो गई। प्रफुल्ल चन्द्र बहुत प्रतिभाशाली और बुद्धिमान तो थे ही दूसरे छात्रो से भी वे काफी आगे और भिन्न थे। इसी कारण विश्वविद्यालय और गिलक्राइस्ट फाउन्डेशन की ओर से उन्हें पुरस्कार प्राप्त हुए। रसायन के विषय मे प्रफुल्ल ने विशेष शिक्षा प्राप्त की और बाद मे इस विषय के सम्राट कहलाए।

प्रफुल्ल चन्द्र जिस कार्य को हाथ मे लेते उसे अन्त तक पहुचाकर ही दम लेते चाहे कितनी भी कठिनाइया सम्मुख आये। वह कहा करते थे कि "काम तपस्या है। यदि पूरी भावना, दिलचस्पी और लगन से किया जाए तो कोई कारण नहीं कि इसमे सफलता प्राप्त न हो।" वे एकात मे रहना अधिक पसद करते थे और धुन के बडे पक्के थे। उनकी धुन और एकातता की यह स्थिति थी कि जब वे अपनी प्रयोगशाला मे शोध व अन्वेषण का कार्य करते तो उन्हे अपनी खबर तक न रहनी थी।

1888 ई मे इग्लैण्ड से वापस लौटने के पश्चात प्रफुल्ल चाहते थे कि उन्हें इडियन एजूकेशन सर्विस मे ले लिया जाए। वास्तव मे इस पद के लिए वे पूर्णत योग्य व्यक्ति थे। किन्तु अग्रेजी साम्राज्य उन दिनो भारतीयो को इस तरह के उच्च पद नहीं प्रदान करता था, इसीलिए प्रफुल्ल की यह इच्छा पूरी न हो सकी और उन्होने 1889 ई मे प्रेसीडेन्सी कालेज मे सहायक प्रोफेसर की नौकरी स्वीकार कर ली। यहा प्रफुल्ल को बहुत मेहनत करनी पडी। शोध व अन्वेषण के कार्य मे उन्होने अपनी योग्यता का पूर्ण परिचय दिया जिससे विज्ञान के क्षेत्र मे उनकी धाक जम गई, हालाकि उनकी मासिक तनख्वाह मात्र 250 रुपये थी। 1916 ई मे वे प्रेसीडेन्सी कालेज मे रजिस्ट्रार बन गये। आचार्य ने कलकत्ता विश्वविद्यालय मे लगभग 20 वर्षो तक नौकरी की और 1926 ई मे वहा से अवकाश प्राप्त कर लिया। वे विश्वविद्यालय मे केवल एक कमरे मे रहा करते थे। बहुत ही सादा जीवन व्यतीत करते थे। बातचीत मे सादगी, रहन-सहन के ढग में सादगी और उनकी हर बात मे सादगी थी। यह सादगी उनके सम्पूर्ण जीवन मे उनके साथ रही।

रसायन-विज्ञान के एक विशेषज्ञ डॉ करतार सिह लिखते है—'प्रेसीडेन्सी कालेज मे डॉ प्रफुल्ल चन्द्र राय के आने से बगाल प्रान्त मे जो कामयाबी के बीज बोये गये उससे रसायन की फसल को बहुत उन्नति प्राप्त हुई। यानि रसायन पर शोध-कार्य को बहुत बढावा मिला। यद्यपि डॉक्टर का बुनियादी कार्य रसायन के विषय पर ही रहा किन्तु इसके साथ-साथ भारत के प्राचीन रसायन विज्ञान सम्बन्धी विषयों में उनकी बहुत दिलचस्पी थी। उन्होने फ्रासीसी वैज्ञानिक वर्थलाट की महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'ग्रीक अलकीमी' का गहन अध्ययन किया। इसके पश्चात हिन्दू शास्त्रों मे से रसायन के विषय पर चुन-चुन कर, विशेष रूप से सस्कृत, पाली, बगला और अन्य कई भाषाओ की महत्त्वपूर्ण पुस्तके पढ डालीं। आठवीं शताब्दी के प्रसिद्ध वैद्य नागार्जुन की एक पुस्तक को आधार बनाते हुए उन्होने एक लेख लिखा और उसे वर्थलाट के पास प्रकाशित करने के उद्देश्य से भेजा जो छपा, और इस लेख पर आचार्य को काफी प्रशसा और प्रसिद्धि मिली।

प्रफुल्ल ने प्राचीन काल के प्रसिद्ध रसायनविदों की पुस्तकों का अध्ययन करके यह सिद्ध कर दिया कि भारत मे रसायन विज्ञान पर बहुत सामग्री विद्यमान है यद्यपि अधिकाश लोग इससे अनभिज्ञ है। आवश्यकता इस बात की है कि अपनी वैज्ञानिक परम्परा को समझा जाए और उसकी महत्ता तथा उपयोगिता पर और काम-काज किया जाए जिससे रसायन के क्षेत्र मे हमारी शाख और मजबूत हो।"

1894 ई मे प्रफुल्ल ने सबसे पहली खोज 'पारे' पर की। यू कहिये 'मरक्यूरियल नाइट्रेट की खोज की। यह खोज अनेक वर्षो के लगातार और कठिन परिश्रम से सामने आयी। इससे एक लाभ यह हुआ कि आचार्य को एक स्पष्ट शोध सम्बन्धी विषय को और आगे बढाने का अवसर प्राप्त हुआ। इस खोज की प्रशसा भारत और यूरोप के कई देशों मे की गई। इस पर बगाल सरकार ने प्रसन्न होकर आचार्य को यूरोप की कई महत्त्वपूर्ण प्रयोगशालाओ मे जाने के लिए चुन लिया। प्रफुल्ल का यह यूरोपीय दौरा बहुत उपयोगी रहा। इसके दो लाभ हुए—एक तो स्वय प्रफुल्ल की नये-नये क्षेत्रो मे प्रतिष्ठा बढी, दूसरे उन्हे कई नई शोध सम्बन्धी बातो का ज्ञान हुआ और उनके शोध और ज्ञान का भण्डार कुछ और विस्तृत हो गया।

प्रफुल्ल एक मच्चे भारतीय थे। वह चाहते थे कि कोई ऐसी पुस्तक लिखी जाये जिससे भारत की प्रतिष्ठा बढे। इसीलिए वर्षो के अध्ययन और शोध के पश्चात उन्होने एक पुस्तक—'भारतीय रसायन का इतिहास' लिखी। इस पुस्तक के प्रकाशित होते ही वैज्ञानिको मे प्रफुल्ल के नाम की धूम मच गई। जर्मनी के एक प्रसिद्ध प्रोफेसर की राय मे "इस किताब से यह स्पष्ट होता है कि 13वीं और 14वीं सदी मे भारतीय विज्ञान यूरोप के विज्ञान से बहुत आगे था। ' इस पुस्तक की लोकप्रियता की स्थिति यह थी कि 1956 ई मे इडियन केमिकल सोसाइटी ने इसे दुबारा 'हिस्ट्री ऑफ केमेस्ट्री इन एन्सिएण्ट एण्ड मॉडर्न इडिया' के नाम से प्रकाशित किया। यह पुस्तक प्राचीन भारत के रसायन के विषय के सम्बन्ध मे बहुमूल्य जानकारी प्रदान करती है।
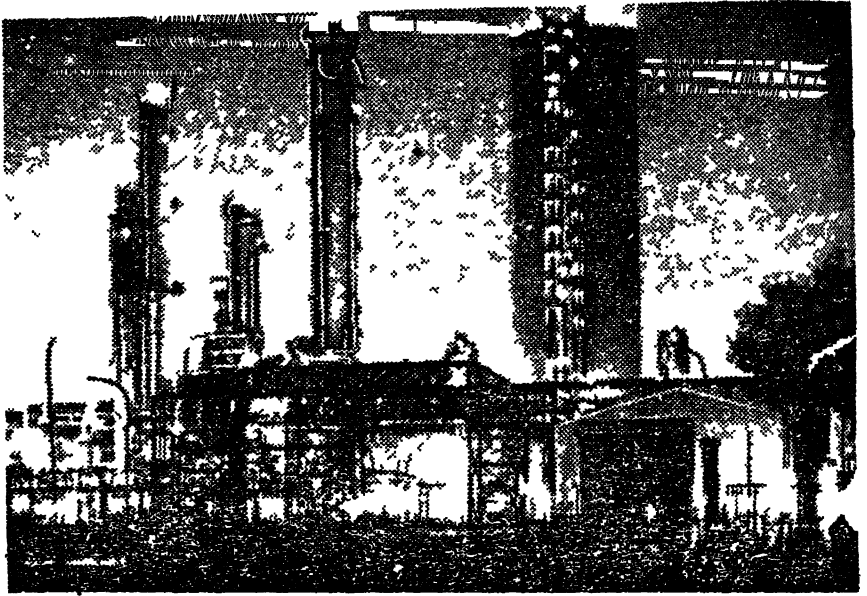
इस पुस्तक का अनुवाद कई यूरोपीय भाषाआ म किया गया। दिरहम विश्वविद्यालय ने प्रफुल्ल चन्द्र को इस पुस्तक को लिखने के कारण डी एससी की डिग्री प्रदान की। 1914 ई में प्रफुल्ल चन्द्र यूनिवर्सिटी साइस कॉलेज के सचालक नियुक्त हुए। 1920 ई मे वे भारतीय साइस कालेज के अध्यक्ष चुने गये। प्रफुल्ल बहुत दयालु किस्म के मनुष्य थे। 1920 ई से 1934 ई तक जो मासिक तनख्वाह उन्हें मिला करती थी उसे वह विश्वविद्यालय को दान कर दिया करते थे जिससे शोध व अन्वेषण का कार्य अबाध गति से चलता रहे। 1934 ई मे प्रफुल्ल लन्दन की केमिकल सोसाइटी के फेलो चुन लिए गये। 1936 ई में कलकत्ता विश्वविद्यालय ने उन्हे एक उपाधि प्रदान की। इस दौर में चारों ओर से इज्जत पुरस्कार तथा उपाधियो की प्रफुल्ल पर बारिश होने लगी। 1911 ई में ब्रिटिश सरकार ने प्रफुल्ल को सी आई ई और 1919 ई मे 'सर' की उपाधि से सम्मानित किया। 1961 ई में नये भारत ने प्रफुल्ल के जन्मदिवस पर उनके सम्मान मे एक डाक टिकट जारी किया तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय में आपके नाम एक लाख रुपये के खर्च से विज्ञान का एक ट्रस्ट स्थापित किया। प्रफुल्ल ने 1924 ई मे बगाल केमिकल एण्ड फार्मास्युटिकल वर्क्स की आधारशिला रखी और अपने जीवन का बचा हुआ समय इसी की सेवा और देखरेख में खर्च करते रहे। हालाकि उन दिनों स्थितिया इतनी अनुकूल नहीं थीं कि यह सोसाइटी स्थापित हो सकती किन्तु आचार्य ने पूरी हिम्मत से काम लेकर इस सोसाइटी की स्थापना की।

आचार्य चाहते थे कि भारताय जडी-बूटियों से दवायें तैयार की जाए। इस कार्य में उन्हे इतनी सफलता प्राप्त हुई कि आज यह सस्था करोडो रुपयों की लागत से भारत मे दवाओं का उत्पादन कर रही हैं और दिन-दूनी रात चौगुनी उन्नति के पथ पर अग्रसर है। देश की सेवा के क्षेत्र मे भी डॉ प्रफुल्ल बहुत लगन से कार्य करते थे। 1931 ई में प्रफुल्ल ने राष्ट्र की आवश्यकताओ को ध्यान में रखने हुए 'स्वदेशी' का बहुत प्रचार किया। वे एक सच्चे देशभक्त थे और उन्हे अपने देश की हर चीज से प्रेम था। वास्तव में स्वदेशी के दृष्टिकोण मे ही देश-भक्ति की भावना छिपी होती है। 1951 इ मे उनकी मुलाकात गोपालकृष्ण गोखले क निवास पर महात्मा गाधी से हुई जिसका आचार्य के विचारों पर बहुत प्रभाव पडा।

चरखा और खादी आचार्य के लोकप्रिय नारे थे। वह कहा करते थे कि देश की आजादी के लिए मै अपना शोध कार्य बन्द कर सकता हू। उन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन अध्ययन शोध-कार्य, दान देश-भक्ति, समाज-सुधार वैज्ञानिक कार्यों और उद्योगो की उन्नति मे व्यतीत किया। उन्होंने कई प्रकार की सामाजिक सस्थाए भी स्थापित कीं। विशेषरूप से महिलाओं के उत्थान के लिए एक सगठन स्थापित किया और जीवनपर्यन्त उसके सर्वेसर्वा रहे। ऐसे सामाजिक कार्यो के कारण प्रफुल्ल ने काफी प्रतिष्ठा पाई और यही कारण है कि हर भारतीय दिलोजान से उनकी इज्जत करता है। रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार "प्रफुल्ल का व्यक्तित्व कई गुणो और विशेषताओ का समन्वित रूप था और उनकी यह विशेषता उनके शिष्यो के जीवन का भी हिस्सा बन गयी।'

1906 ई मे आचार्य ने यूरोप का दौरा किया जिसमें ब्रिटेन, जर्मनी और फ्रास के विश्वविद्यालयो मे उन्हे लैक्चर देने का अवसर भी प्राप्त हुआ। इन विश्वविद्यालयों ने

आचार्य का बहुत इज्जत प्रदान की। 1912 ई मे आचार्य ने लदन विश्वविद्यालय में भारत की ओर से साइस काग्रेस मे हिस्सा लिया। प्रफुल्ल की आत्मकथा—''एक बगाला रसायनविद् का जीवन और अनुभव से उनकी प्रतिभा, योग्यता और वैज्ञानिक सूझ बूझ का पूरा अदाजा हो जाता है। 2 अगस्त 1941 ई को प्रफुल्ल का 80वा जन्मदिवस मनाया गया जिसमे उनकी सेवाओं का जायजा लिया गया। इस अवसर पर स्वागत भाषण के प्रत्युत्तर में प्रफुल्ल ने कहा, 'मै अपनी मृत्यु के बाद भी उन मनुष्यो के रूप में जीवित रहूगा जो अशिक्षा अन्याय और दु खों से निजात दिलाने में सदैव व्यस्त रहते है।'

6 जुलाई 1944 ई को प्रफुल्ल इस दुनिया से चल बसे लेकिन रसायन की दुनिया का इतना बडा अन्वेषक इतिहास मे अपना नाम इस तरह छोड गया जो रहती दुनिया तक याद किया जायेगा। प्रफुल्ल की सादगी कई बार उनके व्यक्ति के सम्बन्ध में गलतफहमी पैदा कर देती थी। गरीबी और सादगी दोनों से वे बिल्कुल नहीं घबराते थे। वह कहा करते थे—''गरीबी एक कालेज की भाति है। इस कालेज की पढाई बहुत कडवी और लम्बी होती है, किन्तु इस कालेज से जो ग्रेजुएट निकलते है वे हर प्रकार की कठिनाइया सहन करने की क्षमता रखते है।' प्रफुल्ल चन्द्र जीवन और दु ख को एक ही रूप में देखते थे और जीवन भर इस सूत्र को स्वीकार करते रहे। इस सिद्धान्त पर अटल रहने से उन्हें बहुत चारित्रिक और मानसिक शक्ति प्राप्त होती थी।

आचार्य से एक बार एक व्यक्ति ने प्रश्न किया कि इस जीवन मे सबसे ज्यादा व्यस्त आप कब रहे? इस पर आचार्य ने उत्तर दिया—''सुस्त व्यक्ति तो अपने दैनिक और आवश्यक कार्यों के लिए भी समय नहीं निकाल सकता, किन्तु व्यस्त व्यक्ति अपनी व्यस्तता के बावजूद हर वह कार्य जिसे उसे करना होता है, कर डालता है। वास्तव में मेरे जीवन मे सर्वाधिक व्यस्तता का समय मेरे प्रारम्भिक 60 वर्ष पार कर लेने के बाद रहा है। इस दौर मे मुझे अपने देश मे स्वदेशी के प्रचार के लिए लगभग दस लाख मील की यात्रा तय करनी पडी। दो बार यूरोप गया, इसके बावजूद भी मैंने अपने वैज्ञानिक व शोध सम्बन्धी कार्य मे कभी कोई रुकावट या अडचन महसूस नहीं की। बस यू समझिये कि कुछ काम दिन-प्रतिदिन की जिन्दगी मे और कुछ छुट्टियों में होता रहा। '

आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय ने हमारे प्राचीन रसायन सम्बन्धी ज्ञान से पूरा-पूरा लाभ उठाया। नई रोशनी और ज्ञान के सहारे आपने आधुनिक विज्ञान के क्षेत्र मे भी कमाल पैदा किया। फल यह हुआ कि उनकी प्रतिष्ठा प्राचीन और नये विचार के लोगो में उत्कर्ष पर पहुच गई। उनकी देशभक्ति सादगी निष्कपटता और आलोचक दृष्टि ने उन्हें भारतीय वैज्ञानिको मे विशेष रूप से रसायन विज्ञान क क्षेत्र मे, एक महत्त्वपूर्ण और उच्च स्थान पर पहुचा दिया जिस स्थान पर शायद ही कोई वैज्ञानिक पहुचा होगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वे ''रसायन विज्ञान के आचार्य थे।

# डॉ. होमी जहांगीर भाभा (1909-1966)

## भारत मे परमाणु शक्ति के सस्थापक

स्वतत्र भारत के उन वैज्ञानिको में जिन्होने हमारे देश का सिर गर्व से ऊचा किया है, डॉ होमी जहागीर भाभा का नाम सदैव स्मरण किया जायेगा। आप 30 अक्टूबर 1909 ई को एक पारसी परिवार मे पैदा हुए। आपने प्रारम्भिक शिक्षा मुम्बई कैथेडरल और जॉन काटन स्कूल मे प्राप्त की। आप लिखने-पढने में बहुत मेहनती और प्रतिभाशाली थे, यही कारण है कि 15 वर्ष की अल्पायु मे ही आपने सीनियर कैम्ब्रिज की शिक्षा समाप्त कर ली। इतनी कम आयु मे ही यह परीक्षा उत्तीर्ण करने से एक समस्या यह उत्पन्न हो गई कि उन्हे उच्च शिक्षा के लिए प्रवेश मिलना कठिन हो गया। बहरहाल, आपने एलफिस्टन कॉलेज बम्बई से 12वीं कक्षा 1926 ई मे उत्तीर्ण कर ली और 1930 ई में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से बी ए की डिग्री प्राप्त की। इसके पश्चात आपने रॉयल इन्स्टीट्यूट ऑफ साइस से एक और परीक्षा उत्तीर्ण की और फिर उच्चतर शिक्षा के लिए पुन कैम्ब्रिज चले गये जहा 1934 ई मे आपने पीएच डी की डिग्री प्राप्त की।

कैम्ब्रिज मे आपकी योग्यता और शैक्षिक क्षमना का यह प्रभाव था कि दो वर्षो तक विश्वविद्यालय से छात्रवृत्ति प्राप्त होती रही। इसके पश्चात ट्रेन्टी कॉलेज में उन्हें प्रवेश मिला और छात्रवृत्ति भी मिलती रही। इस छात्रवृत्ति की बदौलत भाभा को यूरोप के कई देशो की सैर करने का अवसर प्राप्त हुआ। इसके साथ-साथ उन्होने अपनी शिक्षा पूर्ण करने

का मसूबा भी कायम रखा और लगातार कामयाब होते रहे। भाभा ने अपने शिक्षा-प्राप्त करने के समय मे रोम और स्विट्जरलैण्ड से गणित विषय मे शिक्षा प्राप्त करना भी जारी रखा।

भाभा यूरोप में अपनी शिक्षा पूर्ण करके 1940 ई मे भारत वापस आये और आते ही बगलौर मे उन्हे रीडर की जगह मिल गई। दो वर्ष के पश्चात आप वहीं प्रोफेसर के पद पर नियुक्त हो गये। 1941 ई से 1945 ई तक आप बम्बई में टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ फन्डामेन्टल रिसर्च के डायरेक्टर बना दिये गये।

वास्तव में, इस सस्था की नींव डॉ होमी जहागीर भाभा ने ही रखी। टाटा खानदान से उनके पुराने सम्बन्ध थे। इस दृष्टिकोण से उन्होने टाटा को इस ढग की एक अन्वेषी सस्था खोलने को राजी कर लिया जो आने वाले वर्षो मे भारत मे वैज्ञानिक शोधो में बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ।

डॉ भाभा एक वैज्ञानिक के रूप में बहुत दूरदृष्टि रखते थे और जानते थे कि परमाणु शक्ति के लिए टाटा की सहायता से यदि कोई सस्था स्थापित की गई तो भारत की प्रगति मे उसका बहुत योगदान होगा। दूसरे, भारत सम्भवत राष्ट्रीय स्तर पर और कई वर्षों तक इस ढग की सस्था स्थापित करने मे सफल नहीं हो पाता। डॉ भाभा का भारत पर यह बहुत बडा एहसान है और रहेगा।

परमाणु-शक्ति देश की प्रगति और निर्माण मे बहुत सहायता करती है। वैसे, शक्ति, गर्मी प्रकाश, बिजली और ध्वनि से प्राप्त की जाती है। गर्मी सीधे सूर्य से या किसी वस्तु को जलाने से मिलती है। प्रकाश के स्रोत सूर्य और तारे है। बिजली हम डायनमो से पैदा करते है। कई बार हम आवश्यकतानुसार गर्मी को बिजली या प्रकाश में परिवर्तित कर लेते है। इससे स्पष्ट होता है कि प्रकृति द्वारा दी हुई शक्तियो के अतिरिक्त हम कुछ पदार्थों से भी शक्ति प्राप्त कर लेते है। इस शक्ति से ही आज तक मनुष्य लाभ प्राप्त करता रहा है। कारखाने, मिलें, मशीनें, कारें, लारिया, हवाई जहाज और समुद्री जहाज इत्यादि सच पूछिये तो आज के मशीनी युग मे मनुष्य के जीवन की सारी गति व उन्नति के कारण ही है। यद्यपि मनुष्य ने अपनी खोज से भूमि, हवा, पानी, सूर्य, कोयला और तेल से कम से कम मेहनत पर और सस्ते से सस्ते तरीको से कुछ और शक्ति प्राप्त करने की कोशिश की है किन्तु इसके बावजूद भी मनुष्य ने एक दिन यह अनुभव किया कि एक निश्चित सीमा से अधिक शक्ति प्राप्त नहीं हो सकेगी। दूसरे यह कि यह शक्ति उस शक्ति से बहुत कम है जिसकी मनुष्य को बहुत अधिक आवश्यकता है, और इसका एहसास डा भाभा को हुआ।

इस एहसास के कारण भारत मे 1948 ई में प नेहरू के निर्देश पर एटामिक एनर्जी एक्ट की नींव पडी और इस कमीशन के इन्चार्ज डॉ भाभा नियुक्त हुए। वे समय-समय पर प नेहरू को शोध सम्बन्धी कार्यो से अवगत कराते रहते थे और टाटा इन्स्टीट्यूट तथा एटामिक एनर्जी कमीशन दोनो का नेतृत्व भी करते थे। विशेष रूप से यह बात प्रशसनीय है कि प नेहरू को उनके काम-काज पर बहुत विश्वास था। डॉ भाभा परमाणु विज्ञान के क्षेत्र मे नोबेल पुरस्कार प्राप्तकर्ता डॉ ड्रॉक के कद्रदान (प्रशसक) रहे है।

डॉ भाभा एक सामान्य मनुष्य के रूप मे बहुत हसमुख थे। उन्हे सगीत से बहुत लगाव था। वे भारतीय और यूरोपीय राग और रग की गहराइयो और बारीकियो से अवगत थे। इसी प्रकार नृत्य से उन्हे दिलचस्पी थी बल्कि इस कला के सम्बन्ध मे वे काफी जानकारी रखते थे। इससे स्पष्ट है कि वैज्ञानिक क्षेत्र और शोध-सम्बन्धी योग्यता के साथ-साथ उनका सौन्दर्यबोध भी बहुत शक्तिशाली था। सगीत और नृत्य जीवन मे ताजगी व प्रसन्नता कायम रखने मे बहुत सहायक सिद्ध होता है। एक समीक्षक के अनुसार, "यदि भाभा बहुत बडे वैज्ञानिक न बनते तो उसमे आश्चर्य की कोई बात नहीं होती। वे एक दिन सगीत के माहिर बनने मे अवश्य कामयाब हो जाते।"

कॉस्मिक किरणो पर भाभा के शोध-कार्य ने उन्हे वैज्ञानिक बना दिया। इसी काम की बदौलत 1941 ई मे वे रॉयल सोसाइटी के मेम्बर चुन लिये गये। इस विषय पर अन्वेषण के कारण उन्हे "एडम्स" पुरस्कार भी प्राप्त हुआ।

डॉ भाभा के इस सिद्धान्त को कॉस्मिक किरणो की कॉस्किड थ्यूरी का नाम दिया गया है। इसके पूर्व कॉस्मिक किरणो के इस सिद्धान्त को बहुत अस्पष्ट और बारीक समझा जाता था, किन्तु भाभा के शोध ने विज्ञान की दुनिया मे इसकी व्याख्या इस ढग से की कि आज वैज्ञानिक भाभा का नाम भूल नहीं सकते। विज्ञान की दुनिया मे कॉस्मिक किरणो को दो प्रकार का समझा जाता है, एक वे किरणे जिन्हे बुनियादी किरणे कहते है और जो प्रकाश से हाइड्रोजन एटम की भाति जमीन की ओर चलती रहती है। जब उनमे से कुछ किरणे वातावरण मे प्रवेश करती है तो उनका टकराव वातावरण मे पाये जाने वाले विभिन्न कणो से होता है। इसी से नये न्यूक्लीयर कणो का जन्म होता है। इन्हे दूसरे ढग की कॉस्मिक किरणे कह सकते है। इनको और दो किस्मो मे बाटा जा सकता है। एक वे किरणे जो छह इच की मोटाई वाले शरीर या इतनी ही मोटी किसी वस्तु को पार करती हुई गुजर सकती है तथा दूसरी वे जो इन दोनो स्थितियो मे बिल्कुल भी पार नही कर सकतीं। भाभा का सिद्धात इन पार न कर सकने वाली किरणो से सम्बन्धित है और इसे कॉस्मिक किरणो की आबसारी थ्यूरी का नाम दिया गया है।

डॉ जगजीत सिह इसे एक उदाहरण से यू स्पष्ट करते है—आदम व इव से मनुष्य की नस्ल बढी, यानि एक पीढी से दूसरी पीढी, फिर इससे तीसरी पीढी और फिर इसी तरह नस्ले फैलती गई। इन नस्लो मे कुछ विशेषताये आपस मे मिलती जुलती है। किन्तु एक के बाद दूसरी नस्ल मे कुछ विशेषतायें ऐसी होती है जो भिन्न होती है।

1948 ई मे डॉ भाभा को हाकन्ज पुरस्कार प्राप्त हुआ। 1954 ई मे उन्हे पद्म भूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया और उन्हे जेनेवा मे होने वाली परमाणु शक्ति कान्फ्रेस का अध्यक्ष चुना गया। भाभा 1964 ई में मैड्रिड की रायल एकेडमी ऑफ साइस के सदस्य चुने गये। वे 1941 ई मे रॉयल सोसाइटी के फेलो बने तथा 1957 ई मे रायल सोसाइटी एडेनबर्ग के मानद फेलो। डॉ भाभा तीन पुस्तको के लेखक थे जिनके कारण उन्हे बहुत ख्याति प्राप्त हुई। ये पुस्तके इस प्रकार है– (1) क्वान्ट्रम थियरी, (2) एलीमेन्ट्री फिजिकल पार्टिकिल्स, (3) कॉस्मिक रेडिएशन।

डॉ भाभा भारत में ट्राम्बे (बम्बई) में परमाणु शक्ति का एक केन्द्र स्थापित करने में कामयाब हुए। वास्तव में यह योजना उन्हीं की थी और आज तक भारत इस दिशा में शोध-कार्य मे लगा हुआ है। भाभा के नेतृत्व में ही यह केन्द्र काफी तीव्र गति से कार्य कर सका। ट्राम्बे के केन्द्र मे आजकल करीब 8000 वैज्ञानिक कार्य कर रहे है। इसमें ऑफिस सम्बन्धी कार्य करने वाले व्यक्ति भी सम्मिलित है। इस केन्द्र में परमाणु ऊर्जा से लाभ उठाने के लिए कई योजनाए बनाई गई है, विशेष रूप से औद्योगिक काम-काज मे। औद्योगिक उन्नति के लिए हमें लाखों किलोवाट बिजली की आवश्यकता है। बिजली वैसे भी पानी और कोयले से पैदा की जाती है। किन्तु इसमे एक समस्या यह है कि पानी से एक मीमा तक ही बिजली पैदा की जा सकती है। स्पष्ट है कि इतनी बिजली हमारी आवश्यकता की तुलना मे बहुत कम होती है। यही स्थिति कोयले से बिजली उत्पन्न करने मे है क्योकि कोयला केवल खानों से निकाला जा सकता है जिसे हम अपनी सम्पूर्ण आवश्यकता के अनुरूप नहीं हासिल कर सकते।

डॉ भाभा के कारण परमाणु ऊर्जा आयोग मे देश की आवश्यकताओ की पूर्ति सम्बन्धी कई योजनाये सम्मिलित है। एक योजना के अनुसार तारापुर में परमाणु ऊर्जा का एक केन्द्र 51 करोड रुपये की लागत से स्थापित करने का उद्देश्य है जिसकी बदौलत यूरेनियम के माध्यम से बिजली पैदा की जायेगी। इस वैज्ञानिक की बदौलत एक एटमी बिजलीघर भारत और कनाडा के सहयोग से काम कर रहा है। याद रहे कि तारापुर का एटमी बिजलीघर एशिया का सबसे बडा और अपने ढग का पहला और आधुनिक बिजलीघर है।

डॉ भाभा वास्तव में तीन प्रकार के ऐसे रिएक्टर स्थापित करना चाहते थे जो बिजली पैदा करने के अतिरिक्त दूसरे रिएक्टरो के लिए ईंधन भी पैदा कर सकें। पहले स्तर पर प्राकृतिक यूरेनियम को पूरा साफ करने के बाद ईंधन के रूप में प्रयोग किया जायेगा। इससे परमाणु शक्ति के अलावा एक नया न्यूक्लियर ईंधन प्राप्त हो सकेगा जिसे दूसरे स्तर पर मीलोटोनियम एक अन्य रियक्टर में एक और प्रकार के ईंधन का कार्य करेगा जिसके आसपास थोरियम का इस्तेमाल किया जायेगा। इससे एक प्रकार का ईंधन बनाम यूरेनियम मिल सकेगा जिसे तीसरे स्तर पर प्रयोग किया जायेगा। इस तरह भाभा ने इन ईंधनों के प्रयोग से तीस गुना अधिक बिजली प्राप्त करने की योजना बनाई जो एक बहुत गर्व की बात है।

डॉ भाभा परमाणु शक्ति को बडे पैमाने पर उत्पन्न करने की कल्पना करते थे और कल्पना को वास्तविकता में बदलने की योजनाए बनाते थे। उनका अनुमान था कि भारत लगभग 20 वर्षो में विस्तृत पैमाने में परमाणु शक्ति पैदा कर सकेगा। याद रहे कि परमाणु शक्ति पैदा करने मे और परमाणु सम्बन्धी प्रयोगो को करने में एक रेडियाई वातावरण बन जाता है जो मनुष्यो, जीवो तथा वनस्पतियों के लिए हानिकारक होता है। इस दृष्टिकोण से भाभा परमाणु ऊर्जा को केवल निर्माण सम्बन्धी कार्यो में प्रयोग करने के पक्ष में थे न कि विनाश सम्बन्धी कार्यों में।

भारत मे परमाणु शक्ति से सम्बन्धित कार्यों के बारे मे उनका दृष्टिकोण था—

"जो ज्ञान भारत को प्राप्त हो चुका है वह वापस नहीं किया जा सकता। भारत 20

वर्षो तक इतनी बिजली पैदा कर सकेगा कि हमारे लिए बिजली की कोई समस्या नहीं रहेगी क्योकि तब तक हमे इतना ईंधन प्राप्त हो जाएगा जितनी कि हमे आवश्यकता है।''

24 जनवरी 1966 ई को डा भाभा हवाई जहाज से यूरोप जा रहे थे। रास्ते में उनका जहाज माउन्ट ब्लैक से टकरा गया और इस तरह भारत के एक महान वैज्ञानिक की मृत्यु हो गई। आज डॉ भाभा शारीरिक रूप से हमारे बीच उपस्थित नहीं है किन्तु उनका दिया हुआ विचार और लगन आज भी ट्राम्बे मे कार्य करने वाले वैज्ञानिको के दिलो में धडकता है।

डॉ भाभा भारतीय विज्ञान के भविष्य के सम्बन्ध मे बहुत आशान्वित थे। आपने एक बार कहा—''आज हमारे वैज्ञानिक-शोध बहुत ही निम्न स्तर के कहे जाते है। इसका प्रमुख कारण यह है कि हमारे यहा वैज्ञानिको को शोध के लिए पूरी सुविधाए व अवसर प्राप्त नहीं हो पाते जिसकी बदौलत वैज्ञानिक अच्छा कार्य कर सके। लेकिन याद रहे कि एक-दो दशकों के पश्चात जब भारत बडे पैमाने पर बिजली पैदा कर सकेगा तब भारत के वैज्ञानिको को समुद्र पार के देशो का मुह नहीं देखना पडेगा, बल्कि भारत को अपने देश में ही हर किस्म के वैज्ञानिक तैयार मिलेंगे।''

डॉ भाभा ने अपनी योग्यता का परिचय देते हुए ट्राम्बे मे एक बगीचा स्थापित करवाया। इसमे फूल-पौधे, क्यारिया और फल इस ढग से लगवाये गये कि ट्राम्बे के चारों ओर गुलजार कर दिया। इसी तरह उन्होने टाटा इन्स्टीट्यूट को भी बडी खूबसूरती से स्थापित करवाया और इस ढग की सजावट मे भरपूर दिलचस्पी दिखाई। आप खूबसूरती और सजावट के पक्षधर थे और वातावरण को खूबसूरत बनाने के शौकीन थे।

वैज्ञानिको के शात कार्य के पीछे बडी लगन, योग्यता और भावना काम करती है। यदि राष्ट्रीय स्तर से जाचा जाए तो वैज्ञानिको का अन्वेषण राष्ट्र के निर्माण मे बहुत सहायक होता है। भारत में ऐसे वैज्ञानिको की कमी नहीं और इनमे होमी जहागीर भाभा वास्तव मे एक महान व्यक्तित्व के धनी थे। परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र मे जो भी प्रशसनीय और महत्त्वपूर्ण कार्य भारत करेगा वह भाभा के ही अधूरे कार्य की दूसरी कडिया समझी जायेगी। ऐसे वैज्ञानिक हर दिन पैदा नहीं होते। इसमे कोई सन्देह नहीं कि डॉ भाभा विज्ञान, कला, खूबसूरती और शोध सम्बन्धी कार्यो के पुजारी थे।

# डॉ. मेघनाथ साहा (1893–1956)

## प्रसिद्ध खगोल शास्त्री

इकबाल की पक्ति 'सितारो से आगे जहा और भी है' के रहस्य को डॉ साहा ने पूरी तरह समझा और उन्होंने अन्तरिक्ष विज्ञान, भौतिक विज्ञान और ज्योतिष विज्ञान के विषय पर ऐसा प्रशसनीय शोध किया कि एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर चार्ल्स को मजबूर होकर यह कहना पडा कि 1596 ई में एक वैज्ञानिक फिबरिशियन के बाद इस विषय पर इतना उच्च स्तरीय शोध सैकडो वर्षो पश्चात एक भारतीय वैज्ञानिक डॉ साहा के हाथों अमल में आया। इससे पहले अतरिक्ष में प्रकाशवान तारों (जो हमसे सैकडो मील दूर होते हैं) को सामान्य आखों से देखने के लिए दूरबीन ही एकमात्र यत्र था जिसके माध्यम से हम तक उनकी तस्वीर पहुचती थी। ये स्याह और लाल रग से लेकर भूरे रग तक की लाइनें और लकीरें हुआ करती थीं। अब जैसे-जैसे दूरबीन की क्षमता और ताकत बढती गई तो यह अधिक अच्छे ढग से काम करने लगी। इस प्रकार वैज्ञानिको को यह भी मालूम होने लगा कि सूर्य और उसके सौर मण्डल से जो प्रकाश हम तक जमीन पर पहुचता है उसकी क्या स्थिति होती है।

याद रहे कि पिछली सदी में वैज्ञानिक गैलीलियो की दूरबीन के अतिरिक्त शीशे के टुकडों द्वारा अन्तरिक्ष का अवलोकन किया करते थे। ये शीशे के टुकडे 'प्रिज्म' की भाति होते थे। प्रकाश प्रिज्म से होकर जिस ढग से गुजरता है उसे तिर्यक-पात कहते है। स्मरणीय है कि प्रकाश सामान्यत सरल रेखा में गति करता है। जब प्रकाश की किरणें एक माध्यम से दूसरे माध्यम मे प्रवेश करती है तो दोनो माध्यमों के किनारों की सतह पर प्रकाश का

कुछ न कुछ भाग परावर्तित हो जाता है और शेष भाग दूसरे माध्यम में चला जाता है और जो भाग दूसरे माध्यम में प्रवेश करता है उसकी दिशा परिवर्तित हो जाती है। इसीलिये दूसरे माध्यम मे प्रकाश की चाल की दिशा पहले माध्यम से भिन्न होती है और इस ढग से प्रकाश की किरणो के जुडने को तिर्यक-पात कहते हैं।

प्रकाश क्या है? न्यूटन के अनुसार सूर्य या अन्य ऐसी चीजे जिनसे प्रकाश निकलता है, के छोटे-छोटे अणुओ की धारा ही प्रकाश है जो लगातार निकलती रहती है। जब ये अणु आखों से टकराते है तो हमें प्रकाश का अनुभव होता है। बाद मे एक वैज्ञानिक हाइगिन्ज ने न्यूटन के विचार को गलत बताते हुए यह कहा कि प्रकाश उत्पन्न करने वाली चीजो से प्रकाश लहरो के रूप में उत्पन्न होता है। वास्तव मे, प्रकाश दिखाई नहीं देता बल्कि जिस वस्तु पर प्रकाश पडता है वह वस्तु हमे दिखाई देने लगती है। यह दृष्टिकोण आजकल स्वीकार कर लिया गया है।

वातावरण मे हवा का घनत्व भूमि-सतह से इसकी ऊचाई पर निर्भर करता है। जैसे-जैसे यह ऊचाई बढती जाती है, वैसे-वैसे हवा का घनत्व कम होता जाता है। इसीलिये कई ग्रह और उपग्रह जैसे सूर्य या तारे इत्यादि से प्रकाश की किरणे वातावरण के भिन्न-भिन्न घनत्व वाले भागो से गुजरती हुई (तिर्यक वर्तन करती हुई) लम्बवत मुड जाती है। वातावरण मे ऐसी किरणे सदैव अपनी दिशा परिवर्तित करती रहती है और किसी विशेष दिशा मे देखने वाली आख तक प्रकाश सदैव एक समान रूप से नहीं पहुच पाता। यही कारण है कि अधिक प्रकाश वाले तारे चमकते है और कम प्रकाश वाले धुधले दिखाई देते है क्योकि प्रकाश के पैमाने और दिशा मे लगातार परिवर्तन होता रहता है। इसीलिए तारे टिमटिमाते रहते है।

जब प्रकाश प्रिज्म से होकर गुजरता है तो इन्द्रधनुष की भाति सात रगो मे बिखर जाता है। ऐसा प्रकाश जो प्रिज्म से बिखर कर हम तक आता है उसे स्पेक्ट्रम कहते है और जो यन्त्र इस प्रकाश का अवलोकन और अध्ययन करने मे मनुष्य की सहायता करता है उसे स्पेक्ट्रोस्कोप कहते है। स्वय इन्द्रधनुष वर्षा की बूदों से होकर प्रकाश का बिखराव है और यह स्पेक्ट्रम का एक अच्छा उदाहरण है। इसी भाति वातावरण मे तारों का जो प्रकाश प्रिज्म की ऐसी प्रक्रिया को पूरा करता हुआ जमीन तक पहुचता है, उसके सम्बन्ध मे डॉ साहा ने एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया।

स्मरणीय है कि विज्ञान के इतिहास मे सर्वप्रथम गैलीलियो ने 1609 ई मे दूरबीन का आविष्कार किया जिससे तारो का अवलोकन करने की दिशा मे उन्नति हुई। इसके पश्चात स्पेक्ट्रोस्कोप का आविष्कार हुआ। डॉ साहा ने सूर्य की किरणो की गति पर जो कार्य किया उनके उपरान्त दूसरे वैज्ञानिको ने उस काम को आगे बढाया।

डॉ साहा की गहरी नजर आकाश से सम्बन्धित चीजों तक पहुची और उन्होंने एक नये विषय पर शोध किया। पृथ्वी से ऊपर अन्तरिक्ष की ओर 40 मील से लेकर 400 मील तक पायी जाने वाली सूर्य की किरणों का उन्होने विश्लेषण किया और उन्हीं के नजरिये से बाद मे रेडियो-एक्टिव तरगो, किरणो के फैलाव और धमाको की प्रतिक्रिया से सम्बन्धित कई बातें
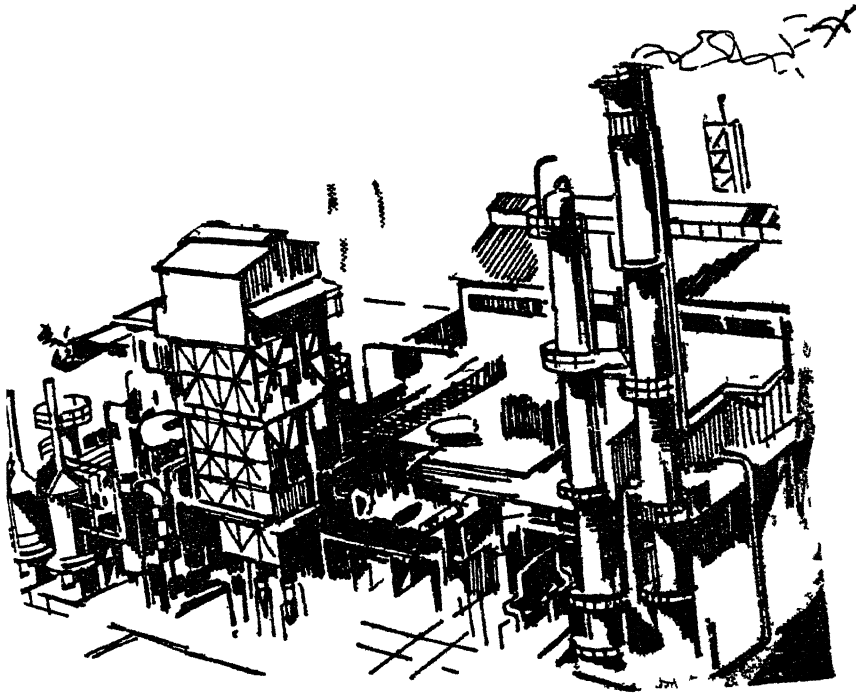
वैज्ञानिको को मालूम हुई। ऊपरी वातावरण से जमीन की ओर चलने वाली रेडियो एक्टिव तरंगें डॉ साहा का मुख्य विषय रहा और उनके बहुमूल्य सिद्धान्त की बदौलत कई तकनीकी कामों मे बहुत लाभ पहुचा। एटम, तारों और सूर्य पर उनका शोध उल्लेखनीय है।

डॉ साहा ने आइन्स्टीन के 'थियरी ऑफ रिलेटिविटी' से पूरा-पूरा लाभ उठाया। 'थियरी ऑफ रिलेटिविटी' क्या है? इस सिद्धान्त की व्याख्या करना बहुत कठिन है। इसको समझने के लिए गणित और भौतिकी का गहरा ज्ञान होना आवश्यक है। इसके सम्बन्ध मे एक कहानी प्रसिद्ध है। 1919 ई में यह सूचना प्राप्त हुई कि आइन्स्टीन का 'थियरी ऑफ रिलेटिविटी' का सिद्धान्त सही सिद्ध हुआ है। जिस सिद्धान्त का अनुमान उन्होने गणित लगाकर बताया था वह सही सिद्ध हो गया। यानि ऐसा प्रकाश जो किसी तारे से निकलकर आता है, जब सूर्य के पास से गुजरता है तो वह कुछ विचलित (तिरछा) हो जाता है।

ऐसा किस प्रकार होता है और इसका तात्पर्य क्या है? हर व्यक्ति के लिए यह समझना मुश्किल था। यह सूचना तार के माध्यम से ब्रिटेन से कलकत्ता के समाचार-पत्र स्टेट्समैन के दफ्तर मे आयी तो उनके लिए इस सिद्धान्त को समझे बिना प्रकाशित करना कठिन हो गया। अखबार वालों ने भाग दौड की कि उस सिद्धान्त पर कोई रोशनी डाल सके। सौभाग्य से उनकी भेट प्रेसीडेसी कालेज मे डॉ मेघनाथ से हुई। उन्होने प्रकाश के विचलन के सिद्धान्त की व्याख्या की और अगले दिन स्टेट्समैन में प्रो मेघनाथ साहा का समाचार सम्बन्धी यह लेख छप गया।

'थियरी ऑफ रिलेटिविटी' के अनुसार प्रकाश एक साक्षात वस्तु है, ठीक वैसे ही जैसे कोई अन्य पदार्थ या पत्थर का कोई अति सूक्ष्म कण। ऐसी स्थिति में गुरुत्वाकर्षण बल के सिद्धान्त के अनुसार प्रकाश का खींचा जाना स्वाभाविक है। यदि एक पत्थर का टुकडा ऊपर आसमान की ओर फेका जाए तो वह ऊपर ही ऊपर नहीं चला जाता, बल्कि नीचे की ओर खिचा आता है और गुरुत्वाकर्षण बल के कारण पृथ्वी पर आ गिरता है। आइन्स्टीन ने यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया कि प्रकाश भी एक वस्तु की ही भाति है और इसीलिये उस पर भी गुरुत्वाकर्षण बल का प्रभाव होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार यदि हम एक टार्च का प्रकाश सामने की दीवाल पर समानान्तर दिशा मे डालें तो वह प्रकाश ठीक सामने की दीवाल पर नहीं बल्कि जमीन पर टकराएगी, किन्तु ऐसा घटित होते नहीं देखा गया। तो क्या आइन्स्टीन को धोखा हुआ है? नहीं, बिल्कुल नहीं। इसकी व्याख्या कुछ इस प्रकार है। जब हम कोई पत्थर का टुकडा दूर फेंकते है तो वह थोडी दूर जाकर जमीन पर गिर पडता है क्योकि उसकी गति बहुत कम होती है। किन्तु यदि हम बन्दूक से कोई गोली छोडे तो वह जमीन पर गिरने से पहले बहुत दूर चली जाती है क्योंकि उसकी गति बहुत तेज होती है। प्रकाश की गति आप जानते ही है, यह कोई तीन लाख किलोमीटर प्रति सेकेण्ड या 1,86,000 मील प्रति सेकेण्ड होती है। पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति इतनी अधिक नहीं होती कि वह प्रकाश की किरणों को इतना झुका दे कि उसका झुकाव आखों से स्पष्ट रूप से दिखाई दे। यह झुकाव बहुत कम होता है। यदि जमीन का विस्तार अधिक होता तो उसके आकर्षण की शक्ति तुलनात्मक रूप में उतनी ही अधिक होती कि प्रकाश किरणो का झुकाव स्पष्ट रूप से दिखाई पडता।

कोई चीज जितनी ही बडी होगी उसका खिचाव उतना ही अधिक होगा। सूर्य पृथ्वी की तुलना में तीन लाख तीस हजार गुना अधिक है और उसके खिचाव की शक्ति भी उतना ही अधिक है। वह किसी तारे से निकलते हुए प्रकाश को अपनी ओर इस ढग से खींच सकता है कि उसका खिचाव दिखाई दे सके। तुलनात्मक रूप से अन्य तारों की अपेक्षा सूर्य हमारे अधिक नजदीक है। यदि दूर से कोई तारा सूर्य की पीठ पर बैठा हुआ हमारी ओर देख रहा हो तो वह हमें सूर्य के साथ खडा दिखाई देता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि उसका प्रकाश सूर्य के पास से गुजरकर हमारे पास आया है। आइन्स्टीन ने यह घोषणा की कि ऐसा 'थियरी ऑफ रिलेटिविटी'' के कारण होता है। तारे का प्रकाश सूर्य की ओर झुक जाता है और वह तारा हमें कुछ ऊपर उठा हुआ दिखायी देता है, किन्तु समस्या यह है कि सूर्य का प्रकाश इतना तेज और चमकीला होता है कि हम तारों को सूर्य के साथ नहीं देख सकते। हम तारों को उसी उसी समय  देख सकते है जब पूर्ण सूर्यग्रहण होने के कारण सूर्य का प्रकाश समाप्त हो जाता है। 29 मई 1919 ई  को जब पूर्ण सूर्यग्रहण लगा तो आइन्स्टीन के सिद्धान्त का स्पष्टीकरण हो गया।

आइन्स्टीन ने यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया कि प्रकाश एक वस्तु की भाति है और जब वह किसी सतह से टकराता है तो उस चीज को धकेलता है या उस पर दबाव डालता है। इससे पूर्व जेम्स क्लार्क मेक्सल ने भी प्रकाश के दबाव के इस सिद्धान्त को प्रस्तुत किया था। मेक्सल और आइन्स्टीन ने प्रकाश के दबाव का अनुमान गणित के सिद्धान्तों के माध्यम से लगाया था किन्तु कोई भी व्यावहारिक रूप से इस दबाव को स्पष्ट नहीं कर सका क्योकि प्रकाश का दबाव इतना हल्का होता है कि यह मेज पर पडे एक छोटे से तिनके को भी नहीं हिला सकता। सन 1900 ई  से 1902 ई  के बीच अमेरिकी और रूसी वैज्ञानिको ने प्रकाश का दबाव ज्ञान करने सम्बन्धी शोध किए किन्तु वे सफल नहीं हो सके।

मेघनाथ साहा पहले वैज्ञानिक थे जिन्होने एक ऐसा सवेदनशील यत्र तैयार किया जिसके माध्यम से व्यावहारिक रूप से प्रकाश का दबाव ज्ञात किया जा सकता था। साहा ने इसकी नाप भी कर ली। इससे इस सिद्धान्त की स्पष्ट व्याख्या हो गयी कि प्रकाश सतह पर दबाव डालता है। उनके इस काम के कारण कलकत्ता विश्वविद्यालय की ओर से उन्हें डॉक्टर ऑफ साइस (D Sc) की डिग्री प्रदान की गई। साहा उस समय मात्र 25 वर्ष के थे, इसीलिए यह एक बहुत ही गर्व की बात है।

डॉ  साहा मात्र सिद्धान्तो के ही वैज्ञानिक नहीं सिद्ध हुए बल्कि उन्होंने अपने सम्मुख इसका एक सामाजिक लक्ष्य भी रखा ताकि देश की प्रगति सम्बन्धी योजनाओं में भारत विज्ञान से लाभ उठा सके। वे कहा करते थे—''आजादी के पश्चात भारत के वैज्ञानिकों को तकनीकी बातों की जानकारी को अधिकाधिक देशों में फैलाना चाहिए ताकि हम अपनी आर्थिक प्रगति के रास्ते पर तेजी से चल सकें।'

डॉ  साहा के सिद्धान्त से कई वैज्ञानिकों ने जैसे फाउलर और मिलने ने बहुत लाभ उठाया और उनका सिद्धान्त आज भी हर वैज्ञानिक समग्र रूप से स्वीकार करता है। वे प्रकाश के वैज्ञानिक और प्रकाशित मस्तिष्क वाले व्यक्ति थे तथा विज्ञान के प्रकाश से

अशिक्षा का अधेरा दूर करना चाहते थे। प्रो फाउलर स्पेक्ट्रोस्कोप के प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे। डॉ साहा की भी इस विषय में बहुत दिलचस्पी थी। इसीलिए दोनों के आपसी सहयोग से एक शोध अस्तित्व में आया। इसके अतिरिक्त, डॉ फाउलर ने इस विषय पर बहुत कुछ लिख रखा था। दोनों ने मिल कर इस लिखित सामग्री का पुन गहन अध्ययन किया। जब दोनो ने मिल कर कार्य किया तो डॉ साहा का ज्ञान और गहरा हो गया तथा उनकी थर्मल थियरी एक मजबूत मुकाम पर पहुच गयी।

डॉ साहा सही मायने में एक वैज्ञानिक थे और अपने विचार तथा दृष्टिकोण मे प्राचीन विचारो के नहीं बल्कि प्रगतिशील विचारों के वाहक थे। एक बार उनके घर पर उन्हीं के मुहल्ले के कुछ बच्चे सरस्वती पूजन के लिए चदा लेने आये। सरस्वती को ज्ञान की देवी माना जाता है डॉ साहा ने बच्चो से पूछा "आप लोग यह त्यौहार किस प्रकार मनाते है?" बच्चो ने बहुत मासूमियत से उत्तर दिया कि "हम सरस्वती देवी की एक बडी प्रतिमा बनायेगे, उसे माला पहनायेंगे और उसकी आरती उतारेंगे। लाउड स्पीकर लगवाकर राग-रग का प्रोग्राम प्रस्तुत करेगे। शायद एकाध ड्रामा भी खेलें।"

यह उत्तर सुनकर डॉ साहा मुस्कराये और बच्चों से कहा, "आओ मेरे साथ, मै आपको दिखाऊ कि मै किस तरह ज्ञान की देवी की पूजा करता हू।" बच्चे डॉ साहा के साथ उनके ड्राइगरूम मे गये। वहा चारो तरफ अलमारियो में विज्ञान, इतिहास, दर्शन और धर्म सम्बन्धी पुस्तकें भरी पडी थीं। मेज पर कुछ कागज, कलम, दवात और पेन्सिल रखी हुइ थीं। बच्चों का ध्यान अपनी ओर खींचते हुए डॉ साहा ने कहा, "अगर आपको सही मायने मे ज्ञान प्राप्त करना हो तो जी-तोड मेहनत करो। इसमें ज्ञान की देवी का सम्मान भी हो जाएगा और यही ज्ञान की देवी की पूजा भी है।"

डॉ साहा विज्ञान के सामाजिक पहलू पर अधिक ध्यान देते थे। उन्होने ऐसे कई बहुमूल्य लेख लिखे जिसमे विज्ञान के सामाजिक पहलू पर प्रकाश डाला गया। ऐसे लेखों और विचारो के कारण आप राष्ट्र के एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति बन गये। वह सदैव यह चाहते थे कि भारत में शिक्षा और उद्योग सम्बन्धी काम-काज, राष्ट्रीय योजनाओं, समुद्री योजनाओं, समाजवाद और कृषि की कोआपरेटिव सोसाइटियों की ओर विशेष ध्यान दिया जाए। वे समाजवाद के प्रबल समर्थक थे और भारत को खुशहाल तथा आत्मनिर्भर बनाने के बहुत उत्सुक थे।

उन्होंने भारत सरकार के लिए द्वितीय और पचवर्षीय योजनाओ मे राष्ट्र की तकनीकी प्रगति के लिए नयी योजनाए प्रस्तुत कीं। विशेष रूप से उद्योगो की वृद्धि के लिए और देश के लिए आपके दिल में बहुत प्रेम था। आप एक सच्चे देश-भक्त थे। 1938 ई में एक बार उन्होंने यू लिखा—"अगर हम भारत की गरीबी और भुखमरी का सामना करना चाहते हैं (हमारी आबादी के लगभग 90 प्रतिशत लोग जिसका शिकार हैं) और चाहते है कि एक मजबूत और प्रगतिशील भारत का निर्माण किया जाए तो हमें अपनी योग्यता और ज्ञान से पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए जो हमें प्रकृति ने प्रदान किया है।" उनके अनुसार हर भारतीय को विज्ञान की उपलब्धियों से अवगत होना चाहिए। देश में ऐसा ही एक वातावरण तैयार

करने के लिए इन्डियन साइस न्यूज और एक मासिक साइस मैगजीन की बुनियाद रखी गयी। इन पत्रिकाओं मे डॉ साहा कई वर्षों तक जानकारी पूर्ण लेख लिखते रहे।

साहा कई वर्षों तक लोकसभा के सदस्य रहे और वह भी निर्दलीय। यह इज्जत बहुत ही कम भारतीय वैज्ञानिको को प्राप्त हुई है। आप लोकतन्त्र के समर्थक और पूजीवाद के विरोधी थे। उनमे एक तडप विद्यमान थी, वह यह कि लोकतान्त्रिक तरीको और विज्ञान के माध्यम से ही भारत उन्नति के रास्ते पर चल सकता है।

डॉ साहा 6 अक्टूबर 1893 ई को ढाका के एक गाव ओढतालो मे पैदा हुए थे। उनके पिता जगन्नाथ साहा एक मामूली दुकानदार थे और स्वय मेघनाथ अपने पिता के कामों मे हाथ बटाते। साहा ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा गाव के ही एक स्कूल मे प्राप्त की। घर की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी, किन्तु इस प्रतिभाशाली बालक के अध्यापक बहुत हमदर्द निकले। उनके जोर डालने पर मेघनाथ ने ढाका में मिडिल परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास कर ली। 1909 ई मे आपने कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया और इण्टर की परीक्षा में आप पूर्वी बगाल में प्रथम रहे और फिर छात्रवृत्ति की बदौलत उसी विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त की। आप सदैव अच्छे नम्बरों से पास होते रहे विशेषकर गणित साहित्य और विज्ञान मे आप पूर्वी बगाल मे सदैव अव्वल रहे। सौभाग्य से आपको जगदीश चन्द्र बसु और आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय जैसे योग्य आचार्यो से गणित और विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ, जिससे उनकी मानसिक योग्यता को बहुत मदद मिली। दूसरे, एस एन बोस जैसे प्रसिद्ध वैज्ञानिक भी साहा की ही कक्षा मे थे। 1915 ई मे आपने एम एससी गणित से पास किया और इसके दो वर्ष पूर्व (1913 ई में ) बी एससी (भौतिकी और गणित मे) पास की तथा दोनो परीक्षाओं में गणित में आपने सारे विश्वविद्यालय में द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

1919ई में डॉ साहा को "प्रेमचन्द रायचन्द" छात्रवृत्ति मिल गई जिसके कारण आप शोध कार्य के उद्देश्य से यूरोप चले गये। 1917 ई मे साहा को पहला शोध-लेख लन्दन की एक प्रसिद्ध पत्रिका "फिलासफिकल मैगजीन" में प्रकाशित हुआ।

साहा का गरीबी से चोली दामन का साथ था। जहा उन्हे अपनी पढाई का खर्च स्वय वहन करना पडता था वहीं साथ ही अपने छोटे भाइयो के रहन-सहन और उनकी शिक्षा का भार भी उन्हें ही उठाना पडता था।

इसके अतिरिक्त डॉ साहा की विज्ञान मे बहुत गहरी दिलचस्पी थी। उनका विचार था कि वे विज्ञान के शोध-कार्य को जारी रखेंगे और सियासी सरगर्मियों में पडकर अपना समय नष्ट नहीं करेंगे। उन दिनों उनकी आय का एकमात्र साधन ट्यूशन था। वह कलकत्ता शहर के विभिन्न भागो मे लडकों को पढाने जाया करते थे। एक ओर शाम बाजार में दूसरी ओर भवानीपुर मे। इस तरह प्रतिदिन आने-जाने में उनका बहुत समय बर्बाद होता था। उनकी आर्थिक स्थिति इतनी भी मजबूत न थी कि वे अपने छात्रों के घर तक जाने के लिए ट्राम का खर्च वहन कर सकते इसीलिए या तो वह पैदल जाते या साइकिल स।

मेघनाथ साहा सिर्फ पुस्तकों के ही धनी नहीं थे और केवल विश्वविद्यालय परीक्षाओ

को ही अव्वल श्रेणी में पास करके सतुष्ट नहीं होते थे बल्कि उनकी दिलचस्पी शिक्षा के दायरे से भी बाहर थी। वह जनसेवा के कार्यों मे एक छात्र की हैसियत से कई क्षेत्रों में बहुत प्रसिद्ध थे। स्मरणीय है कि कलकत्ता विश्वविद्यालय ने डॉ राजेन्द्र प्रसाद और सुभाष चन्द्र बोस जैसी महान प्रतिभाओ को भी शिक्षा प्रदान की है।

डॉ साहा 1921 ई से 1932 ई तक कलकत्ता विश्वविद्यालय में फिजिक्स के प्रोफेसर रहे। इसके पश्चात 5 वर्षो के इस समय मे आपने बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य किया। 1938 ई से 1952 ई तक आप फिजिक्स के सहायक प्रोफेसर के रूप में कलकत्ता विश्वविद्यालय मे नियुक्त रहे और इसके पश्चात कुछ वर्षो के लिए इमीरिटस प्रोफेसर बन गये। उस समय तक एटम की खोज की जा चुकी थी और एटम मे छिपी महान शक्ति का एहसास वैज्ञानिको को हो चुका था। इसलिए डॉ साहा ने इस बात पर जोर दिया कि एटमी ऊर्जा से उन्नति का मार्ग विस्तृत किया जाए और उसे राष्ट्र की योजनाओ के लिए प्रयोग में लाया जाए। 1955 ई में वह इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइस, कलकत्ता के निदेशक नियुक्त किए गये।

डॉ साहा लन्दन की रायल सोसाइटी के मेम्बर, अमेरिका की साइस और आर्ट एकेडमी के फेलो मेम्बर और फ्रान्स की अतरिक्ष सम्बन्धी एक अतर्राष्ट्रीय सस्था के फेलो मेम्बर थे। यह बहुत प्रशसनीय बात है कि डॉ साहा मात्र 33 वर्ष की आयु मे ब्रिटेन की रायल सोसाइटी के मेम्बर बन गये। उन्होंने विज्ञान पर कई महत्त्वपूर्ण पुस्तके लिखीं।

डॉ साहा मात्र सिद्धान्तों के ही वैज्ञानिक नहीं थे बल्कि एक हमदर्द और निष्कपट व्यक्ति भी थे। वे विज्ञान को मनुष्य का सेवक मानते थे। 1943 ई में दामोदर नदी के जलप्लावन से बहुत तबाही हुई और हजारों व्यक्ति इस तबाही का शिकार हो गये। जान-माल का बहुत नुकसान हुआ किन्तु वैज्ञानिकों के अनुसार मात्र चन्दा इकट्ठा करके तबाह हुए लोगो की सहायता अधिक देर तक नहीं की जा सकती थी। डा साहा ने ऐसे हादसे का हल तलाश किया और उन्होने "माडर्न रिव्यू" और दूसरे कई पत्र-पत्रिकाओं में बीसियों लेख लिखे जिनमे लोगो का बताया गया कि जर्मनी, अमेरिका और रूस ने किस तरह ऐसी समस्याओ से निजात पाई है।

साहा जिस क्षेत्र मे पैदा हुए थे वह क्षेत्र एक नदी के पास है, इसीलिए वह एक अच्छे तैराक थे और उन्हे नदियो से बहुत प्रेम था। वे यह जानते थे कि नदिया कितनी लाभदायक होती है। एक वैज्ञानिक की हैसियत से नदियो को वैज्ञानिक ढग से काबू मे लाने के लिए उनके मस्तिष्क मे बडी-बडी योजनाये थीं। यही कारण है कि वह नदियो के मसले पर प्रकाश डाल सके। उनका विचार था कि नदियो तथा समुद्रो से सम्बन्धित समस्याओ को हल करने के लिए भारत मे कई प्रकार की लैबोरेटरिया होनी चाहिए। बगाल का प्रश्न किसी सीमा तक पेचीदा था। गगा ब्रह्मपुत्र और तीस्ता ये तीनों बडी नदिया बगाल से होकर गुजरती हैं।

साहा वैज्ञानिक विषयो के अद्वितीय लेखक थे। उन्होंने अपनी कलम से लगभग एक सौ से भी अधिक लेख 'साइस एण्ड कल्चर मे प्रकाशित किए। यह एक आश्चर्यजनक

बात है कि उनके लेखन का दायरा इतना विस्तृत था कि उसमें बाढ और भुखमरी की रोकथाम, एटामिक फिजिक्स, लौह-उद्योग, प्राचीन अवशेष और अन्य कई विषय सम्मिलित थे। इससे स्पष्ट है कि उनकी जानकारी का दायरा इतना विस्तृत था कि उन्हें हर विषय का बहुत ही गहरा ज्ञान था।

डॉ साहा को गणित और सितारो के ज्ञान से जो प्रेम था, उसने उन्हें विश्व के विभिन्न धर्मो का अध्ययन करने की ओर प्रेरित किया। किसी भी देश में तारों का ज्ञान सबसे पुराना विज्ञान है। अनेक देशो के प्राचीन खगोल विज्ञान पर धर्म का गहरा प्रभाव रहा है। आज से 4000 से 6000 वर्ष पूर्व खगोल विज्ञान का आरम्भ मिस्र में हुआ। ईसा से 4236 वर्ष पूर्व मिस्र मे 30 दिन का महीना और 12 महीने के साल का प्रचलन था और यह कैलेण्डर विश्व का सबसे प्राचीन कैलेण्डर है। किन्तु उन्होंने जल्दी यही यह देखा कि 30 दिनो वाले 12 महीनो यानि साल के 360 (30 X 12) दिनो के बाद सूर्य अपने पहले वाले स्थान पर नहीं पहुचता। उसे अपने पहले वाले स्थान पर पुन पहुचने मे 5 दिन और लगते है। इस तरह 365 दिन के साल का आरम्भ हुआ।

इसके बहुत समय पश्चात एक दिन के चौथाई की गलती और पायी गई और हर साल की लम्बाई 365¼ दिन निश्चित की गई। यही कारण है कि हर चौथे साल फरवरी के महीने मे एक दिन और जोड दिया जाता है और फरवरी का यह महीना पिछले 3 वर्षो की कमी को पूरा करने के लिए 29 दिन का कर दिया गया। इसे 'लीप ईयर' कहते है, यद्यपि यह भी पूर्णत सही हिसाब नहीं है।

डॉ साहा ने विभिन्न देशो के प्राचीन और आधुनिक ढग के कैलेण्डरो का अध्ययन किया। वे एक सरल और पूर्णत सही कैलेण्डर बनाना चाहते थे। वे लगातार 20 वर्षो तक इसके अध्ययन मे व्यस्त रहे। कौंसिल ऑफ साइन्टिफिक एण्ड इन्डस्ट्रियल रिसर्च ने 1952 ई मे एक कैलेण्डर रिफार्म कमेटी गठित की और डॉ साहा इसके अध्यक्ष चुने गये। उन्होने 1955 ई में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। यह रिपोर्ट उनकी तारों से सम्बन्धित जानकारी और गणित, इतिहास तथा सस्कृत से सम्बन्धित उनकी अद्वितीय प्रतिभा को परिलक्षित करती है। यूनेस्को के सदस्य भी एक विश्वस्तरीय कैलेण्डर बनाने मे लगे हुए थे। उन्होने डॉ साहा के कैलेण्डर रिफार्म रिपोर्ट की बहुत प्रशसा की।

डॉ साहा के लेखो के कारण 1942 ई मे नदी से सम्बन्धित एक सस्था-दामोदर वैली कारपोरेशन अस्तित्व मे आई। उन्होने अपने जीवन के अन्तिम क्षणो मे शरत चन्द्र बसु के जोर देने पर राजनीति मे दिलचस्पी ली और सौभाग्य से वे निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में लोकसभा के सदस्य चुन लिए गए। लोकसभा के एक अन्य सदस्य ने उनसे मजाक मे कहा—"आप तो वैज्ञानिक है आपको विज्ञान के दायरे मे ही रहना चाहिए।" इस पर डॉ साहा ने तुरन्त उत्तर दिया—"आज का विज्ञान राष्ट्र की एकता और व्यवस्था से जुड गया है। यही कारण है कि मै विज्ञान से धीरे-धीरे राजनीति की आर जा रहा हू ताकि मै अपनी सूझ-बूझ और ज्ञान से देश की सेवा कर सकू।"

डॉ साहा अध्ययन-अध्यापन, उद्योग और अर्थव्यवस्था को बेहतर बनाने के प्रयासो मे सदैव लगे रहे। उनके अनुसार भारत का कल्याण चरखा और खादी नहीं कर सकते बल्कि अब इस बात की आवश्यकता है कि देश मे उद्योगो को बढावा दिया जाए और देश मे ऐसे विज्ञान की शिक्षा दी जाए जो निर्माण की ओर उन्मुख हो तथा जो वैज्ञानिक वातावरण और विचार पैदा कर सके। इसके लिए उन्होने "साइस एण्ड कल्वर" नामक एक मासिक पत्रिका का शुभारम्भ किया जो आज तक विज्ञान की नई-नई खोजो को सामान्य भाषा मे प्रस्तुत करती है।

डॉ साहा चाहते थे कि भारतीय वैज्ञानिको को आपसी मेलजोल के अधिकाधिक अवसर उपलब्ध होने चाहिए। उन्होने उत्तर प्रदेश मे एक साइस एकेडमी की नींव रखी जिसको 1936 ई मे नेशनल एकेडमी ऑफ साइस का नाम दिया गया। यह सस्था उत्तर प्रदेश के लिए एक स्थानीय साइस सोसाइटी थी।

भारत ने भी अपने वैज्ञानिको की इज्जत की। आप इण्डियन साइस काग्रेस के अध्यक्ष (1924 ई ) रहे। आप 1937-38 ई मे इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइस के अध्यक्ष बने और 1949 ई मे यूनिवर्सिटी कमीशन के मेम्बर। इग्लैण्ड और जर्मनी के नये वैज्ञानिको पर आपकी बहुत धाक थी। आपने इटली, नार्वे और अन्य कई देशो का भ्रमण भी किया।

16 फरवरी 1956 ई को वसत पचमी के दिन दिल का दौरा पडने से आपकी मृत्यु हो गई। आप उस दिन ससद मे भाग लेने के लिए जा रहे थे कि अचानक गिर पडे और कुछ मिनटो के बाद ही मृत्यु का शिकार हो गये। आपके द्वारा स्थापित किया गया "साहा इन्स्टीट्यूटी ऑफ न्यूक्लियर फिजिक्स" आज भी आपकी याद दिलाता है। आप बहुत ही गरीब परिवार मे पैदा हुए थे। इसके बावजूद भी आप एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक बने और आपने देश-विदेश मे बहुत इज्जत पाई।

# डॉ. जे.बी.एस. हाल्डेन

## राष्ट्रप्रेमी वैज्ञानिक

जिन यूरोपीय विद्वानो ने भारतीय सभ्यता, सस्कृति, विज्ञान और साहित्य को प्रेम की नजरो से देखा उनमे 'हाल्डेन' का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ऐसे व्यक्तियो में मैक्समूलर, मैकाले, इमरसन, एनी बेसेन्ट, होम्ज इत्यादि के नाम लिए जा सकते है। हाल्डेन ने भारतीय विज्ञान को अपने शोध सम्बन्धी कार्य व जानकारियो से समृद्ध किया।

उन्होने सामान्य भाषा मे कइ पुस्तके लिखीं जो उनकी उच्च स्तरीय मानसिक क्षमता और मानवीय मूल्यों के प्रति मित्रता को परिलक्षित करती है। हाल्डेन बहुत ही सीधी और समझ मे आने वाली भाषा लिखते थे। अग्रेजी उनकी मातृभाषा थी इस पर उनकी पूर्ण पकड थी। बारीक से बारीक और कठिन से कठिन समस्याओं को बहुत ही सामान्य भाषा मे प्रस्तुत करने की उन्हें क्षमता प्राप्त थी। विशेष रूप से तकनीकी बातो को वे बहुत ही आसान रूप में व्यक्त कर सकते थे।

हाल्डेन को भारत से बहुत प्रेम था। इसी कारण उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम वर्षो मे (यानि 1960 ई से) भारत की नागरिकता प्राप्त कर ली और 1 दिसम्बर 1964 ई तक (अपनी मृत्यु तक) यहीं रहे। प नेहरू उनकी वैज्ञानिक सेवाओं से बहुत खुश थे। जब कभी भी 'हाल्डेन' ने भारत की सस्कृति और सभ्यता या विज्ञान पर अपने विचारों को प्रस्तुत किया उसमे भारत के प्रति उनका प्रेम एक-एक शब्द से व्यक्त होता था। उनकी महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'विज्ञान और भारतीय सस्कृति' भिन्न-भिन्न विषयों के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराती है। जानकारियों के साथ-साथ आप बहुत ही स्पष्ट सलाह देते हैं।

यहा उनके लेख 'मेरी पहेली' से एक अश प्रस्तुत है—

'मै एक नतीजे पर पहुचा हू कि भारतीय विज्ञान मे गतिशीलता की कमी है। इसका कारण यह नहीं कि भारतीय सुस्त है या प्रगतिहीन विचारो वाले है बल्कि इसका कारण मात्र यह है कि वे बहुत ही कोमल मिजाज वाले है। वे जातीय मामलो पर प्रतिदिन कई घटे बहस कर लेगे किन्तु तकनीकी मामलों पर बहस करना वक्त बरबाद करने के बराबर समझेंगे।

''ऐसी परिस्थितियों मे भारत मे अधिक आवश्यकता लगन और भावना की है, न कि नरम-मिजाजी और बात में मिठास की। मुझे इस पहेली का कोई हल नहीं सूझता। हा, एक उम्मीद करता हू कि जैसे-जैसे भारतीय विज्ञान उन्नति की ओर अग्रसर होगा यह मामला स्वय ही हल होता जाएगा।'' यह राय कई वर्ष पूर्व दी गयी थी और अब विज्ञान के गतिशील हो जाने से यह पहेली कुछ हल हो गयी है, रही-सही आने वाले वर्षों मे अवश्य हल हो जाएगी।

भारतीय विज्ञान पर अपने विचार व्यक्त करते हुए हाल्डेन एक स्थान पर लिखते है

''विज्ञान का ज्ञान शायरी के ज्ञान से बहुत भिन्न है। हमे अपने आसपास के परिंदों को अपने कानो और आखो दोनो के माध्यम से जानना चाहिए। हमे अपने वातावरण की जानी-पहचानी चीजो को अधिक से अधिक अपनी इन्द्रियों के माध्यम से जानना बहुत आवश्यक है। ऐसी आदत बना लेना एक वैज्ञानिक आदत समझिये। विज्ञान 'इल्म का दूसरा नाम है और जो लोग अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक होते है उनमे एक वैज्ञानिक की भाति अनुभव करने की शक्ति पायी जाती है। विज्ञान जीवन व्यतीत करने का एक दृष्टिकोण है, एक व्यवहार है, न कि कुछ तथ्यो के सग्रह का नाम।''

इसी तरह 'हाल्डेन' एक अन्य स्थान पर कहते है—विज्ञान का एक जरूरी हिस्सा मात्र ज्ञान ही नहीं बल्कि यह जीवन जीने का एक विशेष ढग है। यानि कार्य करने का एक ऐसा ढग जो ज्यादातर समझाया नहीं जा सकता बल्कि व्यावहारिक रूप से करके दिखाया जा सकता है ताकि वह अच्छी तरह मस्तिष्क मे बैठ जाए। शोध वास्तव मे एक सतुलित कविता की भाति है जिसमे अलाप, सगीत, स्थिति-चित्रण और खूबसूरती, सभी कुछ सम्मिलित है। लेकिन जिस तरह हर व्यक्ति शायर नहीं हो सकता ठीक उसी तरह हर व्यक्ति वैज्ञानिक शोध सम्बन्धी कार्य नहीं कर सकता। यहा तक कि वैज्ञानिक तौर-तरीके जान लेने से भी कोई महत्त्वपूर्ण खोज नहीं कर सकता। बल्कि सच तो यह है कि कुछ वैज्ञानिक कायदे-कानूनो का पालन करते हुए कुछ प्रसिद्ध वैज्ञानिको ने कहीं कहीं अपनी व्यक्तिगत प्रतिभा दिखाई और ये ही कालान्तर मे विज्ञान का एक बडा सिद्धान्त सिद्ध हुआ और ऐसे सिद्धान्तो को विज्ञान की दुनिया मे बडी प्रसन्नता से स्वीकार किया गया। ऐसी बहुमूल्य और कीमती सलाह 'हाल्डेन' जैसा वैज्ञानिक ही दे सकता है, और ऐसे ही वैज्ञानिको ने नई-नई कल्पनाए दी है।

'हाल्डेन ने अपनी शिक्षा आक्सफोर्ड से ग्रहण की। आक्सफोर्ड से आपने एम ए किया तथा बाद मे पेरिस से डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। 1922 ई से 1930 ई तक वे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे बायो-केमेस्ट्री के रीडर के पद पर आसीन रहे। इसके पश्चात 5 वर्षो तक लदन की जेनेटिक सोसाइटी के अध्यक्ष रहे और 1937 ई से 1975 ई तक लन्दन विश्वविद्यालय मे बायो-केमेस्ट्री के प्रोफेसर रहे। इसके पश्चात कलकत्ता मे साख्यिकी विभाग
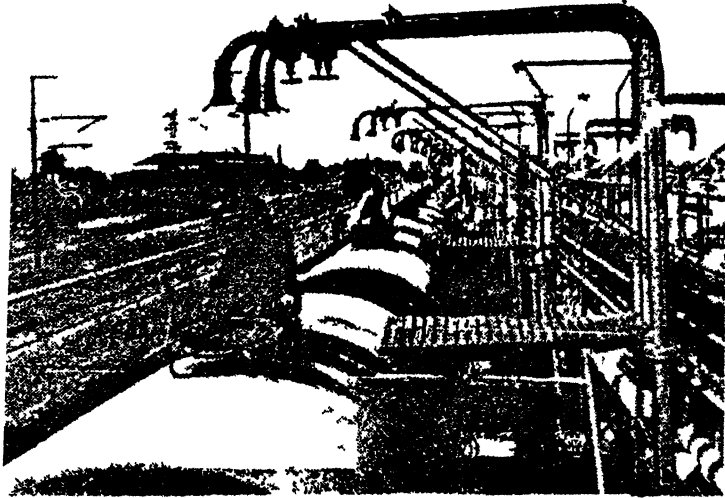
के चार वर्षो तक प्रोफेसर रहे। 1962 ई से 1964 ई तक आप भुवनेश्वर में जेनेटिक्स और बायोकेमेस्ट्री लैबोरेटरी के डायरेक्टर रहे। इसी समय मे उन्होने भारतीय नागरिकता प्राप्त कर ली और फिर भारत के ही हो कर रह गये और यहीं से ही मृत्यु को प्राप्त हुए।

हाल्डेन ने अध्ययन और शोध के आधार पर अनेक पुरस्कार प्राप्त किए। सबसे पहला पुरस्कार आपको 1937 ई मे प्राप्त हुआ। आपको 1952 ई में रायल सोसाइटी की ओर से एक पुरस्कार और अमेरिकी नेशनल एकेडमी आफ साइस की ओर से 1961 ई में दूसरा पुरस्कार प्रदान किया गया। इटली की सरकार ने भी आपको एक बहुमूल्य पुरस्कार से सम्मानित किया। इन सबके अतिरिक्त आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय ने हाल्डेन को मानद डी एससी और एडेन बर्ग विश्वविद्यालय ने मानद एल एल डी की उपाधियों से सम्मानित किया।

'हाल्डेन' वैज्ञानिक होने के साथ-साथ दार्शनिक और शायर भी थे तथा कई दूसरे विषयों पर भी पकड रखते थे। सामाजिक विज्ञान, सस्कृत, इतिहास, दर्शन और साहित्य का आपने व्यापक अध्ययन किया था। आप यूनानी और लैटिन भाषाए बहुत अच्छी तरह जानते थे। जिसके कारण वे जब भी कोई सलाह देते तो वह बहुत ही तार्किक, प्रभावी और महत्त्वपूर्ण होती थी। "क्या किसी महान कविता का अनुवाद किया जा सकता है?" इस विषय पर हाल्डेन लिखते है—"महान कविता का उसी स्थिति में अनुवाद किया जा सकता है जब कवि और अनुवादक दोनों ही एक ही प्रकार की भावनाओं के मालिक हो यानि दोनो के सोचने का ढग, चिंतन शैली का अदाज एक जैसा हो।" आगे चलकर वे कहते है—"कई बार अनुवाद मूल से भी बेहतर हो जाता है, किन्तु ऐसा अनुवाद मूल का प्रतिरूप मात्र नहीं कहा जा सकता। मेरे दृष्टिकोण से यदि हम क्लासिकल भाषाओ से अवगत न हो तो भी हमे क्लासिकल और कविताओं के अनुवाद पढ लेने चाहिए क्योकि पुराने कवियो की रचनाओ से जीवन मे एक प्रकार का आनन्द प्राप्त होता है। हाल्डेन इस लेख मे कुछ पुराने यूनानी कवियो के साहित्य पढने की सलाह देते है और कहते है कि इससे सिर्फ भारत की ही नहीं बल्कि मानवता की भी काया पलट सकती है।

हाल्डेन ने सरल और सामान्य भाषा मे कई महत्त्वपूर्ण पुस्तके लिखीं, जिनमे प्रारम्भिक विज्ञान पर पर लिखीं उनकी पुस्तके विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ऐसी पुस्तकों में, "विज्ञान और सभ्यता", "प्रगति के कारण", विज्ञान और दिन प्रतिदिन का जीवन", "युद्ध और शाति में विज्ञान", "विज्ञान के बढते कदम" इत्यादि प्रमुख है। पुस्तकों के अतिरिक्त आप पत्र-पत्रिकाओं में भी अनेको वर्षो तक लिखते रहे और कई वैज्ञानिक सस्थाओ मे विशेष भाषण भी देते रहे। भारत मे विज्ञान को जनता तक पहुचाने वालों में उन्होने प्रमुख भूमिका निभाई। भारतीय नेताओ ने आपके शोध व समीक्षा सम्बन्धी कार्यो की बहुत प्रशसा की और हाल्डेन भी भारतीय वातावरण में अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में बहुत प्रसन्न और सन्तुष्ट रहे। उनके ठोस कथन आज भी भारतीय वैज्ञानिक अपनी महफिलो मे दुहराते है और उन्हें अपने लेखो में सम्मिलित करते है। ऐसा मात्र इसलिए कि हाल्डेन बेबाक होने के साथ-साथ बहुत स्पष्ट भाषा मे अपने विचार व्यक्त करते थे। उदाहरण के रूप मे उनका यह वाक्य देखिये—"वैज्ञानिक को अपनी नाक को कुत्ते की भाति जमीन पर रखना चाहिए, किंतु, तर्क मे उसे फरिश्तो की भूमिका निभानी चाहिए।"

वे एक अन्य स्थान पर लिखते है–"कुछ आवश्यकतायें ऐसी है जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। इसके साथ-साथ समाज की सुरक्षा और इसके लिए उसका माहौल भी बहुत आवश्यक है। इस कारण से हमें विज्ञान को जनता तक पहुचाना चाहिए और स्वय भी विज्ञान को जीवन की भिन्न-भिन्न आवश्यकताओ को पूर्ण करने के लिए प्रयोग मे लाना चाहिए।"

हाल्डेन ने जिन वैज्ञानिक विषयो पर शोध सम्बन्धी कार्य किया है उनमें जीव-विज्ञान, वनस्पति-विज्ञान, चिकित्सा-विज्ञान, साख्यिकी, गणित, बायोकेमेस्ट्री और फिजियालोजी सम्मिलित है। बायो-केमेस्ट्री में एन्जाइम पर आपने कुछ ऐसे नियम स्थापित किए जो आज इस विषय से सम्बन्धित पुस्तको का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। उन्होंने एक ऐसे तत्त्व को भी खोजा जो पौधों, सूक्ष्म कीडो और चूहो मे पाया जाता है। फिजियालोजी में उन्होंने एल्यूमीनियम क्लोराइड के मिश्रण से एक नई बात खोज निकाली। वनस्पतियों के विषय पर आपने एक फूलदार पौधे से निकलने वाले फूल-पत्तियो के रग में परिवर्तन करने का राज पता किया। साख्यिकी के क्षेत्र में हाल्डेन ने एक नये ढग की गिनती का आविष्कार किया। खगोल विज्ञान के क्षेत्र में आपने एक अन्य प्रसिद्ध वैज्ञानिक के कार्य को आगे बढाया। चिकित्सा के क्षेत्र में आपने एक-दो बीमारियों के इलाज का आविष्कार किया। जीव-विज्ञान के क्षेत्र में जीवन कैसे अस्तित्व में आया, के विषय पर आपने नई-नई शोध सम्बन्धी जानकारिया प्रदान कीं। चिडियों के विज्ञान पर हाल्डेन ने चिडियों की सरचना, आकार और अनुपात पर कुछ शोध सबधी कार्य किया।

आनुवशिकी के विषय पर आपका कार्य निश्चित रूप से स्मरण किया जायेगा। स्मरणीय है कि वैज्ञानिक मेण्डल के अनुसार कुछ विशेषतायें एक नस्ल से दूसरी नस्ल में बिना किसी परिवर्तन के चलती रहती है। ये विशेषताये पिता से पुत्र तक पहुचती है। इस कार्य में जीन महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इन जीनो की सरचना बहुत क्लिष्ट होती है। सैकडों बल्कि हजारों जीन छोटी-छोटी कोशिकाओ में जोडो के रूप में विद्यमान होते है। जिन्हें क्रोमोसोम कहते है। ये क्रोमोसोम ही एक पीढी की विशेषताओ को अगली पीढी तक पहुचाने में सहायक होते है।

इस विषय का दिलचस्प पहलू यह है कि पिता और मा का रग, स्वभाव और यहा तक की बौद्धिकता भी बच्चो तक पहुचती है। इस विषय पर आज से पहले अनेक वैज्ञानिकों ने और स्वय हाल्डेन ने बहुत शोध कार्य किया है। यह विषय विचारणीय और दिलचस्प भी है। हाल्डेन ने विश्व भर की नस्लो को अपने शोध व लेख के दायरे में ले लिया और बहुत ही आश्चर्यजनक परिणाम सामने रखे जो अपने वाले वैज्ञानिकों को चिन्तन की दावत देते रहेगे। इतनी महान खोज, इतने महान कथन और इतने महान व्यक्तित्व के बावजूद भी हाल्डेन कहा करते थे–

"मै एक अनाडी हू और यह कहने मे कोई सकोच नहीं महसूस करता कि मुझे कई बार विचार आता है कि सौ वर्षो के पश्चात मुझे कोई याद भी करेगा या नहीं।" हुजूर हाल्डेन। सम्पूर्ण विश्व और विशेष रूप से भारत आपको अवश्य स्मरण करेगा–एक मनुष्य और एक वैज्ञानिक की हैसियत से, क्योंकि

**मत सहल हमे जानो, फिरता है फलक बरसों तक**
**ख़ाक के परदे से इन्सान निकलते हैं।**

# प्रो. के. एस. कृष्णन (1898–1961)

## भौतिकी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक

कई वर्षो पूर्व प नेहरू ने डा कृष्णन के 60वे जन्मदिवस पर अपने सदेश मे यू लिखा था— ' कृष्णन एक बहुत बडे वैज्ञानिक ही नहीं बल्कि इससे कुछ अधिक ही है। आप एक सम्पूर्ण नागरिक है और इससे बढ कर एक सम्पूर्ण मनुष्य है।'' इसमे कोई सन्देह नहीं कि देश की आजादी के पश्चात वैज्ञानिक कार्यो को डा कृष्णन के द्वारा काफी उन्नति प्रदान की गई। वस्तुत उन्नति और निर्माण की कई योजनाए विज्ञान की बदौलत ही अस्तित्व मे आई। पचवर्षीय योजनाए बनायी गयीं, उन्नति और अन्वेषण सम्बन्धी नई-नई सस्थाए स्थापित हुई। स्पष्ट है कि ऐसे कार्यो में वैज्ञानिकों की सहायता और उनके शोध व अन्वेषण सम्बन्धी कार्यो का पूरा-पूरा लाभ उठाया गया। इस दृष्टिकोण से कृष्णन का कार्य बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ। उन्होंने भारत को तकनीक की ओर मोडने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होने भारत सरकार को शोध-कार्यो मे अपने कीमती सुझाव दिए। आप वस्तुत तकनीकी क्षेत्र के एक प्रमाणिक वैज्ञानिक थे।

कृष्णन नये-नये प्रयोग करने के प्रबल समर्थक थे। उन्होने क्रिस्टल और धातुओं की प्रकृति पर काफी प्रशसनीय शोध-कार्य किया। उन्होने 14 वर्षो तक नेशनल फिजिकल लैबोरेटरी मे डायरेक्टर की हैसियत से शोध-कार्यों को बढावा दिया और वैज्ञानिक योजनाओं को बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। सौभाग्य से कृष्णन को प्रसिद्ध अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक डा सी वी रमन का शिष्य कई वर्षो तक बने रहने का सौभाग्य प्राप्त रहा। दूसरे, ढाका और कलकत्ता विश्वविद्यालयों मे शोध-कार्यो के दौरान उन्हे कई नये अनुभव प्राप्त

हुए। राष्ट्र-सेवा की भावना कृष्णन में थी और इसी कारण विज्ञान के क्षेत्र में उनके कार्य और शोध बहुत ही प्रशसा की दृष्टि से देखे जाते है। विशेषत भौतिकी के क्षेत्र में आपका नाम चाद की भाति रोशन रहेगा।

कृष्णन 4 दिसम्बर 1898 ई में रामनाद जिले के एक गाव में एक ब्राह्मण किसान के घर पैदा हुए। उनके पिता तमिल और सस्कृत के अच्छे जानकार थे और उनका रुझान धर्म और दर्शन की ओर था। कृष्णन की मा बहुत पढी-लिखी और एक कुशल गृहणी थीं। इसका प्रभाव कृष्णन पर यह पडा कि उन्हें घर मे ही पढने-लिखने का अच्छा वातावरण मिल गया। कृष्णन ने मदुरै मे अपनी प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की और उसी स्कूल में आप डिमान्स्ट्रेटर के पद पर नियुक्त किए गये।

कृष्णन बहुत ही प्रतिभाशाली थे। वे दिन-प्रतिदिन की बातचीत में और शिक्षा के क्षेत्र में शोध का दामन कभी हाथ से न छोडते। कुछ ही समय में वे छात्रो के बीच बहुत लोकप्रिय हो गये। उनके एक शिष्य जो बाद में आन्ध्र विश्वविद्यालय के प्रिंसिपल नियुक्त हुए, एक स्थान पर अपने गुरु डॉ कृष्णन के सम्बन्ध में लिखते है—"मैने एक घटं के साथ ही डॉ कृष्णन के साथ इतना अनुभव प्राप्त किया जितना दिन भर की क्लास में किया करता था। उनका अपने विचारों को प्रस्तुत करने का ढग इस प्रकार होता था कि हर छोटी से छोटी बात स्पष्ट हो जाती थी।"

1920 ई मे कृष्णन कलकत्ता चले गये और डा सी वी रमन के निर्देशन में कार्य करने लगे। डॉ रमन, डॉ कृष्णन की प्रतिभा की बहुत प्रशसा करते थे। डॉ रमन ने "रमन इफेक्ट" पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि प्राप्त की। स्मरणीय है कि इस अन्वेषण में डॉ कृष्णन भी डा रमन के सहयोगी सिद्ध हुए थे और उसी समय से उन्हें प्रसिद्धि मिलनी प्रारम्भ हो गयी।

1929 ई से 1933 ई तक कृष्णन ढाका विश्वविद्यालय में भौतिकी के रीडर रहे। इसके पश्चात वे इसी विषय के प्रोफेसर बन गये और इस पद पर 1942 ई तक बने रहे। कलकत्ता विश्वविद्यालय में कृष्णन को प्रो एस एन बसु जैसे प्रसिद्ध वैज्ञानिक का साथ प्राप्त हुआ। कृष्णन ने इस दौर में कई वैज्ञानिक और शोध-सम्बन्धी लेख लिखे जिससे उन्हे बहुत प्रसिद्धि मिली। ब्रिटेन के प्रसिद्ध प्रो लॉर्ड रदरफोर्ड ने कृष्णन को वहा बुलाया और डॉ कृष्णन ने 1947 ई मे ब्रिटेन में कई लैक्चर दिये जिनकी बहुत प्रशसा की गई।

1942 ई मे डॉ कृष्णन इलाहाबाद विश्वविद्यालय में भौतिकी के प्रोफेसर नियुक्त हुए। विज्ञान सम्बन्धी समस्याओ पर उन्होने इस विश्वविद्यालय में बहुत प्रशसनीय कार्य किया। जब देश स्वतत्र हुआ तो डॉ कृष्णन के कन्धो पर बहुत भारी जिम्मेदारी आ गई। 1947 ई में वे नेशनल फिजिकल लैबोरेटरी—नई दिल्ली के डाइरेक्टर नियुक्त किए गये और अपने जीवन के अन्तिम दिनो तक आप इसी पद पर बने रहे। 63 वर्ष की आयु में हृदयगति रुक जाने से 14 जून 1961 ई को डॉ कृष्णन की नई दिल्ली मे ही मृत्यु हो गयी।

डॉ कृष्णन किस्से-कहानियों और चुटकुलों का खजाना थे। बात से बात पैदा करने मे वे बहुत चतुर थे। वे किसी न किसी तरह हसी का कोई न कोई पहलू हर बात में
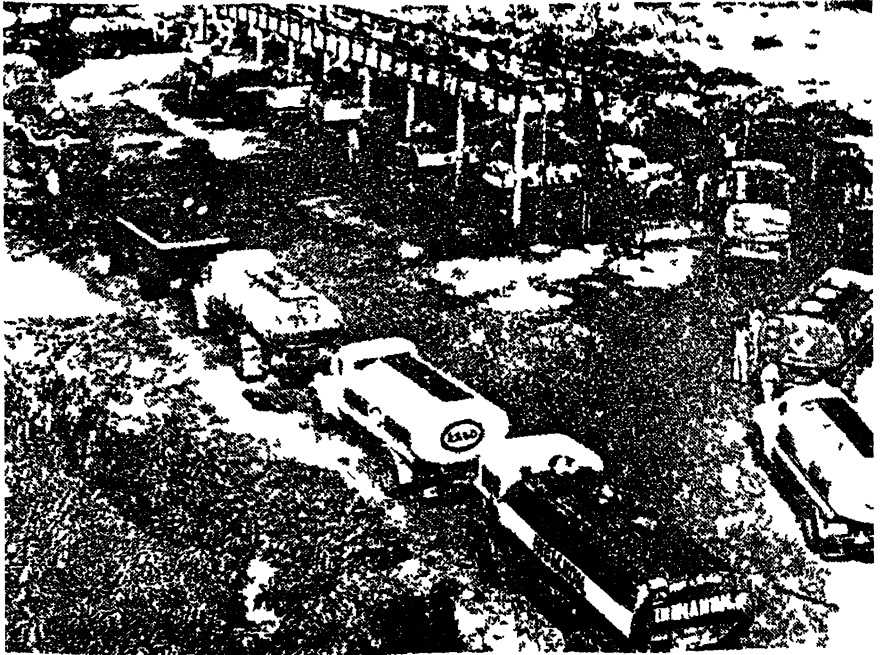
निकाल लेते जिससे महफिल खिल उठती। डॉ कृष्णन अपनी खुशमिजाजी और अच्छे शौक के कारण सदैव ही लोकप्रिय रहे। प नेहरू ने एक स्थान पर लिखा है—"जब-जब डॉ कृष्णन से मुलाकात हुई है, एक भी ऐसा अवसर नहीं आया जब उन्होंने मुझे कोई न कोई कहानी या चुटकुला न सुनाया हो।" वास्तव में डॉ कृष्णन बहुत प्रसन्नचित्त व्यक्ति थे।

डॉ कृष्णन एक किस्सा बहुत सुनाया करते थे और वह किस्सा आप भी सुनिए। जर्मनी मे जाकूबा नामक एक गणितज्ञ हुआ है। जाकूबा का एक शिष्य था जो गणित मे शोध-कार्य करने का बहुत इच्छुक था। किन्तु गणित के क्षेत्र में इतना अधिक शोध दूसरे छात्रो और वैज्ञानिकों द्वारा किया जा चुका था कि इस विषय में शोध के लिए किसी विषय का चुनाव कठिन प्रतीत होता था। इस स्थिति में शिष्य अपने गुरु जाकूबा के पास पहुचा और अपना मसला उनके सम्मुख रख दिया। जाकूबा ने कुछ देर सोच कर अपने शिष्य से कहा—"ईश्वर के लिए शोध प्रारम्भ कर दो, चाहे कहीं से प्रारम्भ करो, किंतु अवश्य प्रारम्भ करो। अगर तुम्हारे पिताजी अपनी शादी के लिए दुनिया भर की लडकियों से मुहब्बत करना चाहते तो न उनकी शादी हो पाती और न तुम पैदा हुए होते। इसलिये तुम्हारे लिये मुनासिब यही है कि तुम काम प्रारम्भ कर दो।"

एक सामान्य बात मे डॉ कृष्णन ने बहुत ही पते की बात कह दी जो हर छात्र और शोध सम्बन्धी कार्य करने वाले के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध हो सकती है। कार्य प्रारम्भ कर देना ही कामयाबी की ओर पहला कदम है।

डॉ कृष्णन को अनेको पुरस्कार प्राप्त हुए। वे रायल सोसाइटी ऑफ लदन के मेम्बर थे। 1946 ई मे उन्हे 'सर' की उपाधि और 1956 ई में 'पद्मभूषण' की उपाधि से सम्मानित किया गया। वे विज्ञान की अनेको सस्थाओं के अध्यक्ष रहे। अन्तर्राष्ट्रीय साइस एकेडमी की मीटिग मे डॉ कृष्णन ने 1959 ई मे एक भाषण भी दिया। वे इण्डियन साइस काग्रेस के जनरल प्रेसीडेन्ट भी रहे। वे नेशनल एकेडमी ऑफ साइस और नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ साइस के अध्यक्ष भी रहे। वे यूनिवर्सिटी ग्राट कमीशन और एटामिक एनर्जी कमीशन के विशेष सदस्य थे। 1961 ई मे डॉ कृष्णन को "भटनागर मेमोरियल एवार्ड" मिला और भारत सरकार ने 1958 ई में उन्हे "नेशनल प्रोफेसर" का पद प्रदान किया। याद रहे कि यह पद बहुत ही कम वैज्ञानिकों को नसीब हुआ है।

डॉ कृष्णन अपना खाली समय साहित्य के अध्ययन में व्यतीत करते थे। प्रसिद्ध लेखक व्हाइटहेड आपके चहेते लेखक थे। व्हाइटहेड के कथन और वक्तव्य के हवाले डॉ कृष्णन अपने लेखो व भाषणो मे अक्सर दिया करते थे। कई भारतीय वैज्ञानिकों को डॉ कृष्णन के साथ से लाभ प्राप्त हुआ। उनके कई शिष्य आज भी शोध-सम्बन्धी सस्थाओं मे बहुत गर्मजोशी और लगन से कार्य कर रहे है। डॉ कृष्णन एक अच्छे वैज्ञानिक, एक अच्छे प्रबन्धक, एक अच्छे नागरिक और एक अच्छे मनुष्य थे। उनके जीवन से लगन, गर्मजोशी और राष्ट्रप्रेम की शिक्षा ग्रहण की जा सकती है तथा देश उन्नति और निर्माण विशेषत तकनीक की ओर अधिक से अधिक मोडा जा सकता है।

दिन-प्रतिदिन के अपने जीवन मे डॉ कृष्णन पूरी तरह भारतीय थे। वे बहुत ही सादगीपूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। वे विश्व भर मे घूमकर भी सादे और सीधे ही रहे। इतना नाम कमाया फिर भी अह के शिकार नहीं हुए। वे अहकारी बिल्कुल नहीं थे, बल्कि एक सजीदा और सतुलित व्यक्ति थे। उन्होने अपनी प्रसिद्धि के लिए कोई दौड धूप नही की। भाग्य और प्रसिद्धि उनके पीछे भागती रही, न कि वे उनके पीछे भागे। अपनी खुशमिजाजी के कारण शत्रु का भी दिल जीत लेते। दूसरा, उन्हें मित्र बनाने का ढग बखूबी आता था। नई दिल्ली मे वैज्ञानिक और सरकारी व्यस्तता के बावजूद भी उन्होंने 'वेदान्त समाज' और 'प्रार्थना समाज' स्थापित किया और इनके सर्वेसर्वा रहे। उन्हें सस्कृत भाषा से बहुत लगाव था। इस प्रकार की अनेक विशेषताए उनमे मरते दम तक विद्यमान रहीं और वे इन्हे निभाते रहे।

जीवन के अन्तिम वर्षों मे उन्हे पुरस्कारो के रूप मे बहुत धन प्राप्त हुआ, किन्तु जैसा कि उनके मित्र कहते है, डॉ कृष्णन ने वह धन अपने उन मित्रो में आवटित कर दिया जो किसी न किसी तरह से कठिनाईपूर्वक शोधकार्य कर रहे थे। वे व्यक्तिगत और सामाजिक दोनो स्तरो पर देश को वैचारिक दृष्टिकोण प्रदान करने, वैज्ञानिक सोच विचार फैलाने और उद्योगो की उन्नति मे अधिक से अधिक सम्भावनाओ को विस्तृत करने का प्रयास करते रहे।

# डॉ. बी. पी. पाल (1906 - 1989)

## अनाज और फूलो पर शोध के लिए प्रसिद्ध

लन्दन मे एक अन्तर्राष्ट्रीय सस्था 'रायल सोसाइटी ऑफ लन्दन' को स्थापित हुए लगभग सौ वर्ष हो चुके है, किन्तु इसका सदस्य बनने का सौभाग्य बहुत ही कम भारतीयो को प्राप्त हुआ है। आज तक कुछ गिने-चुने वैज्ञानिक ही इस सस्था के फेलो मेम्बर रहे है और डॉ बी पी पाल इन गिने-चुने वैज्ञानिको में से एक है जिनके फेलो बनने की सूचना कुछ वर्षों पूर्व प्राप्त हुई थी। इस सूचना के सम्बन्ध मे डॉ पाल का कहना है—'यह इज्जत प्रोत्साहन भारत के कृषि विज्ञान की है।'' इसमे कोई सन्देह नहीं कि इस 'इज्जत प्रोत्साहन' ने भारत का नाम बुलद किया है और स्वय डॉ पाल का भी।

बी पी पाल एक सभ्य और पढे-लिखे परिवार से सम्बन्ध रखते है। आप का जन्म पूर्वी पजाब के जालधर जिले के एक गाव मुकुन्दपुर में डॉ आर एस पाल के घर 1906 ई में हुआ था। आप बचपन से ही बहुत प्रतिभाशाली थे। 1924 ई में आपने रगून विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया और कम उम्र मे ही एक महत्त्वपूर्ण पुरस्कार के प्राप्तकर्त्ता बने। यह पुरस्कार आपने इस आधार पर प्राप्त किया था कि आप विज्ञान के सभी विषयो मे प्रथम श्रेणी में पास हुए थे। 1929 ई में आपने बर्मा विश्वविद्यालय से वनस्पति विज्ञान में एम एससी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया।

इसके पश्चात आप सरकारी छात्रवृत्ति लेकर कैम्ब्रिज चले गये और गेहूँ के विषय पर शोध करने वाले दो विशेषज्ञों के अधीन कई वर्षो तक लगातार कार्य करने के पश्चात आपने डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। 1933 ई में आप बर्मा लौट आए और कुछ अवधि के लिए चावल की एक अन्वेषी सस्था में नौकरी की। इसके पश्चात आपने इम्पीरियल

कौंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च जिसका नाम ब्रिटिश राज के बाद इण्डियन कौंसिल ऑफ रिसर्च मे बदल दिया गया है, मे वनस्पति विशेषज्ञ के रूप मे नौकरी प्राप्त कर ली। 1950 ई मे आप इण्डियन एग्रीकल्चरल इन्स्टीट्यूट के डायरेक्टर के पद पर आसीन हुए और 15 वर्षो तक इस उच्च पद पर आसीन रहे। यह सस्था सम्पूर्ण एशिया मे कृषि सम्बन्धी क्षेत्र मे सबसे बडी सस्था है जो शोध और शिक्षा के कार्य को अजाम देती है। इस 15 वर्ष की अवधि में आपने कई भारतीय वैज्ञानिको का उनके डाक्टरेट के कार्य मे नेतृत्व किया है और इन्स्टीट्यूट के इन्चार्ज की हैसियत से सफलतापूर्वक कार्य करते रहे।

1960 ई मे जब डॉ पाल इण्डियन एग्रीकल्चरल रिसर्च इन्स्टीट्यूट मे डायरेक्टर थे तो गामा किरणो के प्रयोग के लिए एक बगीचा बनाया गया जहा प्रायोगिक रूप से गामा किरणो के द्वारा पौधो और फलो पर प्रभाव डालने का कार्य हो रहा है। आगामी वर्षो में बीजो, योग्य फसल देने वाले कीडो और रासायनिक पदार्थो पर भी इन किरणो का प्रभाव डाला जायेगा ताकि खेती-बारी के कार्यो मे उन्नति हो सके। स्मरणीय है कि गामा किरणो से पौधो और फलो मे एक विशेष गुण पैदा किया जाता है जिसकी बदौलत अधिक और अच्छी फसल पैदा की जा सकती है। उल्लेखनीय बात यह है कि ऐसे बीज से जो भी फसल पैदा की जाती है उसकी यह विशेषता होती है कि वह कई नस्लो तक अधिक और बढिया फसल पैदा कर सके। दूसरे शब्दो मे यू समझिए कि पौधो और फलो मे उनकी वृद्धि करने और बेहतर फसल हासिल करने का जो क्रम एक बार बन जाता है वह कई वर्षो तक अपनी यह विशेषता बीज मे भी कायम रखना है। गामा किरणो के इस बगीचे का नक्शा आणविक ऊर्जा आयोग ने बनाया है। यह बगीचा एशिया का सबसे बडा बगीचा है और कृषि विज्ञान के क्षेत्र मे एक विचित्र करिश्मा भी।

1965 ई मे डॉ पाल इण्डियन कौंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च (जो भारत मे कृषि और पैदावार के विषय पर शोध व अन्वेषण की सबसे बडी सस्था है) के डायरेक्टर जनरल के पद पर नियुक्त किए गये, जहा से आपने 1972 ई के प्रारम्भिक दिनो मे नौकरी से अवकाश ग्रहण किया। हाल ही मे उन्हे इण्डियल एग्रीकल्चरल इन्स्टीट्यूट मे गुलाब के फूलो पर शोध-कार्य हेतु मानद वैज्ञानिक के रूप मे नियुक्त किया गया। वे इस कार्य के लिए पूर्णत योग्य व्यक्ति थे। आप वर्षो का अनुभव रखते थे। डॉ पाल इण्डियन नेशनल साइस एकेडमी के अध्यक्ष भी रहे। एक वैज्ञानिक की हैसियत से आपको कई बहुमूल्य पुरस्कार प्राप्त हुए। आपको 1958 ई मे भारत सरकार की ओर से ''पद्म श्री' और 1968 ई मे 'पद्म भूषण' से सम्मानित किया गया। 1957 ई में आपको वनस्पति के विषय पर रफी अहमद किदवई सम्मान से सम्मानित किया गया। आप 1962 ई मे इण्डियन बॉटानिकल सोसाइटी की ओर से 'बीरबल साहनी' पुरस्कार के अधिकारी घोषित किए गये। 1964 ई मे उन्हे नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ साइस की ओर से श्री रामानुजम का मैडल प्राप्त हुआ। डॉ पाल इस समय लगभग एक दर्जन शोध-सम्बन्धी सस्थाओ के सक्रिय सदस्य है। आपने कई बार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई कान्फ्रेसो में भाग भी लिया जो आपकी योग्यता व क्षमता का परिचायक है।

डॉ पाल लेखन प्रतिभा के बहुत धनी थे। आपने आजीवन विवाह नहीं किया और सदैव अध्ययन-अध्यापन तथा शोध-कार्यो मे व्यस्त रहे। आप बहुत ही कम बोलने वाले व्यक्ति है और नम्र स्वभाव आपकी महत्त्वपूर्ण विशेषता है। डॉ पाल ने अपने जीवन मे लगभग 150 शोध व अन्वेषण सम्बन्धी लेख लिखे है जिनके कारण उन्हें राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर काफी प्रसिद्धि मिली। आपने पाच उच्च-स्तरीय पुस्तके लिखी है। ये पुस्तके है—'गेहूँ', 'हिन्दुस्तान मे गुलाब', 'हिन्दुस्तान की खूबसूरत बेले', 'हिन्दुस्तान की फूलदार झाडिया' और 'हिन्दुस्तान मे गुलाब।' इन पुस्तको मे 'हिन्दुस्तान में गुलाब' और 'गेहूँ' अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी है। गुलाब की पुस्तक पर भारत सरकारी की ओर से पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। दूसरे इस पुस्तक पर फ्लावर सोसाइटी ऑफ बर्मा की ओर से एक स्वर्ण पदक भी प्राप्त हो चुका है। इस पुस्तक मे गुलाब का इतिहास, उमकी खेती और नई-नई किस्मों की खेती से सम्बन्धित ऐतिहासिक और सामाजिक जानकारिया मिलती है।

गेहूँ के विषय पर डॉ पाल का शोध काफी प्रशसनीय है। स्मरणीय है कि भारत में गेंहूँ की खेती बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से भारत मे चावल के बाद गेहूँ की ही खेती की जाती है और इसकी खेती से लाखों बल्कि करोडों लोगों की जीविका चलती है। गेहूँ की फसल को बीमारी के कारण बहुत हानि होती है। यह बीमारिया तीन प्रकार की होती' है। पहली है—'काला ऋतुआ', जिसमें गेहूँ की फसल में लम्बे-लम्बे धब्बे पड जाते है। ये निशान गहरे लाल रग के होते है। प्रारम्भ में लाल और भूरे रग के निशान तने पर प्रकट होने शुरू होते है और धीरे-धीरे ये निशान बढते और फैलते जाते है तथा गहरा रग पकड कर स्याह धब्बे बन जाते है। दूसरी बीमारी 'भूरा ऋतुआ' होती है। इस बीमारी के कारण गोल-गोल भूरे रग के धब्बे पत्तों और तनों पर स्पष्ट होने शुरू हो जाते है। कई बार पहले ऋतुआ का निशान गेहूँ के पौधों पर स्पष्ट होने शुरू हो जाते है, फिर भूरे रग और भूरे रग के बाद ऋतुआ बीमारी अपना लेते है। तीसरी बीमारी 'पीला ऋतुआ' है जिससे पत्तो पर पीले-पीले निशान स्पष्ट होने लगते है। इन निशानों से एक तरह की धारियॉं सी बन जाती है। ये तीनों बीमारियॉं गेहूँ की फसल को बहुत नुकसान पहुचाती है।

डॉ पाल ने गेहूँ की फसल को इन बीमारियों से निजात दिलाने के लिए विशेष रूप से शोध किया। इस कार्यक्रम को डॉ पाल ने नये सिरे से सम्पादित किया और गेहूँ की नये ढग की किस्मो को जिसे न 700 और न 800 का नाम दिया गया, प्रचलित किया गया। डॉ पाल ने इन किस्मो को इस ढग से सम्पादित किया था कि ये आसानी से स्वय ऋतुआ बीमारी नहीं पकडती। दूसरे शब्दो में यू समझिए कि डॉ पाल ने गेहूँ की नई किस्मों को बुनियादी तौर पर इस प्रकार ताकतवर बना दिया कि वे ऋतुआ का शिकार न हो सकें। इन किस्मों मे एन पी 710, एन पी 718, एन पी 770, एन पी 799 और एन पी 809 उल्लेखनीय है।

इन नयी किस्मों को किसानो ने बहुत पसन्द किया जिसका कारण यह था कि ऋतुआ बीमारी के फैल जाने से गेहूँ की फसल को बहुत नुकसान होने लगा था। इन किस्मो की
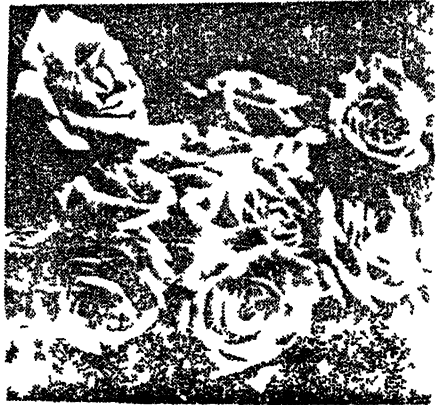
खेती से किसान कुछ बेहतर फसल प्राप्त करने की उम्मीद कर सकते थे। मजेदार बात यह है कि इन किस्मो मे गेहूँ के दाने भारत की पुरानी किस्मों के दाने जैसे ही होते है जो सामान्यत लोकप्रिय है।

डॉ पाल का दूसरा कारनामा गुलाब के शोध से सम्बन्धित है। उन्हें गुलाब से मुहब्बत ही नही इश्क है। आपने अपने निवास स्थान पर लगभग 500 किस्मों के गुलाब उगा रखे है जिनकी देखभाल वे स्वय करते है। गुलाब को लोकप्रिय बनाने और उसकी नई किस्मों को जनता तक पहुचाने के लिए 'रोज सोसाइटी' प्रति वर्ष दिल्ली में राष्ट्रीय स्तर की एक प्रदर्शनी का आयोजन करती है। डॉ पाल स्वर्गीय डॉ जाकिर हुसैन के अभिन्न मित्रों में से है और दोनो ही 'रोज सोसाइटी' के कई वर्षों तक सर्वेसर्वा रहे है। डॉ पाल की पुस्तक "हिन्दुस्तान मे गुलाब" की भूमिका को डा जाकिर हुसैन ने ही लिखा है जो कि इन दोनों व्यक्तियो का गुलाब के प्रति लगाव का द्योतक है।

गुलाब शब्द से ही हुस्न, खुशबू और प्रसन्नता की एक तस्वीर खिच जाती है। अगर आप बागवानी के शौकीन न हो तो भी खिले हुए गुलाब को देखकर आपकी तबीयत बाग-बाग हो जाएगी। वह इसलिए कि गुलाब फूलो का राजा है।

भारत मे गुलाब प्राचीन काल से ही उगाया जा रहा है और इसका उल्लेख सस्कृत ग्रन्थों मे अतिमुजला के नाम से मिलता है। मुगलो ने भी गुलाब उगाने वालो को प्रोत्साहित किया और आजकल यूरोप और अमेरिका में कई नई किस्मो के गुलाब अस्तित्व मे आए है। वर्तमान समय मे गुलाब की उपयोगिता कई गुना बढ गई है। इसकी लोकप्रियता का कारण यह है कि गुलाब कई किस्मो, कई रगो और कई खुशबुओ मे पाया जाता है। आजकल गुलाब के प्रेमी कुछ ऐसी नई किस्मो को ईजाद करने मे लगे हुए है जो न सिर्फ बीमारियों से दूर रहे बल्कि उम्र भी रखती हो। पिछले कुछ वर्षो मे भारत मे गुलाब की खेती पर काफी शोध-कार्य हुआ है और इसकी खेती मे दिलचस्पी दिन-प्रतिदिन बढती जा रही है।

डॉ पाल के अनुसार गुलाब को यूरोपीय देशो मे भेजने का कारोबार बडे पैमाने पर किया जाना चाहिए। इस तरह हमारा देश लाखो रुपये बाहरी देशो से कमा सकता है। याद रहे कि भारतीय गुलाब की जर्मनी हालैण्ड, इटली और स्विटजरलैण्ड में बडे पैमाने पर खपत की गुजाइश है। गुलाब को बडे पैमाने पर उगाने की सम्भावनो को विस्तृत करने के लिए डॉ पाल प्रतिबद्ध है, जिनमे शक्ल और सूरत, खुशबू और रगों की विशेषता हो और जिसकी माग विदेशो मे हो। यू कहिए कि भारतीय गुलाब की किस्में यूरोपीय गुलाब से अलग और बेहतर होनी चाहिए। डॉ पाल ने गुलाब की कुछ नयी किस्मे निकाली है जिन पर उन्हे कई राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्राप्त हो चुके है। इन किस्मो में 'देहली प्रिंस', 'होमी भाभा', 'बजारन', 'वैली ऑफ पजाब', 'सलेशियल स्टार', "सरोजा", 'मेचक', 'होमेज', 'पहाडी धुन' आदि उल्लेखनीय है।

गेहूँ और गुलाब के बाद डा पाल ने आलू और तम्बाकू पर भी कुछ शोध सम्बन्धी कार्य किया। जब वे शिमला मे आलुओं की एक अन्वेषी सस्था के इचार्ज थे तो उन दिनों आपने आलुओ के विषय पर विशेष ध्यान दिया। इसके पश्चात डॉ पाल जब गुन्टूर में

तम्बाकू की एक अन्वेषी सस्था के सर्वेसर्वा नियुक्त हुए तो उन्होने तम्बाकू पर बहुत ही उल्लेखनीय कार्य किया।

डॉ पाल के सम्बन्ध मे यह बहुत ही प्रशसनीय बात है कि आप दिन प्रतिदिन की आवश्यकताओ मे व्यस्त रहते हुए भी अपने शोध सम्बन्धी कार्यो के लिए समय निकाल लेते है। आपने फूलो पर जो दिलचस्पी और विलक्षण कार्य किया वह प्रारम्भ मे तो आपकी दिनचर्या का ही एक अग रहा किन्तु बाद मे यही उन्हे फूलो का माहिर कहलवाने का कारण बना। सक्षेप मे गेहूँ, गुलाब, फूलो, आलू तथा तम्बाकू के विषयो पर डॉ पाल का शोध व अन्वेषण सम्बन्धी कार्य भारतीय कृषि-विज्ञान मे सदैव स्मरण किया जाएगा।

डा पाल को कई ट्राफी प्राप्त हुई, जिनमे से आई सी आई ट्राफी लगातार दस बार उनको नये गुलाबो को पैदा करने के लिए दी गई। 1988 मे उन्हे विजय पोकरना रजत मैडल इन्डियन रोज फैडरेशन ने दिया। डॉ पाल को पहला राष्ट्रीय अखण्डता पुरस्कार एक लाख रुपये का उनके निधन से कुछ ही समय पूर्व मिला।

डॉ पाल मार्डन पेन्टिग मे भी दिलचस्पी रखते है। ऐसे लोगे को जो अवकाश के समय पेन्टिग सम्बन्धी कार्यो मे व्यस्त रहते है उन्हे अग्रेजी मे 'सन्डे पेन्टर' कहा जाता है। डॉ पाल एक सन्डे पेन्टर है। उनके निवास-स्थान मे उन्हीं के बनाये हुए छाया-चित्रो के कई नमूने देखने को मिलते है। स्पष्ट है कि डॉ पाल एक विद्वान की भाति अपने समय का शत-प्रतिशत उपयोग करते है। आपकी व्यस्तता मे ईमानदारी, लगन और आपकी अन्वेषी योग्यता, सभी कुछ सम्मिलित है। कृषि सम्बन्धी विषयो पर खोज व अन्वेषण सम्बन्धी क्षेत्रो के समस्त वैज्ञानिको मे डॉ पाल एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है। 1982 के अन्तिम दिनो मे डॉ पाल को एक लाख रुपये का सजय एवार्ड मिला। वातावरण के प्रदूषण से सम्बन्धित समस्याओ पर उन्होने सरकार को जिस तरह समय-समय पर वैज्ञानिक सूझ-बूझ के बलबूते पर अपनी सलाह दी, यह पुरस्कार उसी आधार पर दिया गया। विज्ञान के क्षेत्र मे यह सर्वोच्च पुरस्कार कहा जा सकता है।

14 सितम्बर 1989 को उनका अपने निवास हौजखास (दिल्ली) मे निधन हुआ। वह मकान उन्होने आई ए आर आई को सौप दिया और उनके नाम का एक ट्रस्ट भी बना। उस ट्रस्ट से बी पी पाल पुरस्कार व बी पी पाल मैमोरियल लैक्चर शुरू किए गये।

# डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन

## गेहूँ की खेती मे क्रान्ति के अग्रदूत

महात्मा गाधी ने एक बार कहा था कि "भारत अपने गावो मे आबाद है।" दूसरे शब्दो मे यू कहिए कि भारत मे लगभग 80 प्रतिशत लोग गावो मे रहते है। इनमे से 70 प्रतिशत लोग खेती करते है। इस प्रकार भारत की आबादी का विशाल भाग गावों मे रहता है और खेती पर जिन्दगी बसर करता है। आजादी के बाद के कई वर्षों तक खेती-बारी के तौर-तरीको मे सुधार के नये ढग और शोध-सम्बन्धी कार्यों से पूरा-पूरा लाभ लेने के लिए बहुत ज्यादा योजनाए अमल मे नहीं लाई जा सकीं। हा, वर्तमान समय मे केन्द्रीय सरकार ने पचवर्षीय योजनाओं के तहत कृषि के क्षेत्र मे उन्नति व प्रगति के अवसर बढाने पर पूरा जोर दिया और कई तरह के नये-नये मसूबों को अनुक्रम दिया गया। पूसा इन्स्टीट्यूट, पतनगर, लुधियाना और दूसरे कई स्थानो-पर खेती से सम्बन्धित शोध-कार्य बडे जोर-शोर से बढ गए और बीते वर्षों मे कृषि की उन्नति इस सीमा तक पहुच गई कि एक नया नारा — "हरित क्रान्ति" का जन्म हुआ। इस हरित क्रान्ति का, विशेष रूप से गेहूँ मे क्रान्ति का सेहरा डॉ एम एस स्वामीनाथन के सर रहा जो कई वर्षों तक भारतीय कौंसिल मे कृषि-सम्बन्धी शोधो के डायरेक्टर जनरल रह चुके है।

डॉ स्वामीनाथन 7 अगस्त 1925 ई को केरल मे पैदा हुए। उनके पिता एक डॉक्टर थे। अभी उनकी आयु मात्र दस वर्ष की ही होगी कि पिता का साया सिर से उठ गया। उन्होंने 1944 ई मे केरल विश्वविद्यालय से बी एससी पास किया। उसी विश्वविद्यालय से पुन 1947 ई मे कृषि के विषय मे दोबारा बी एससी पास किया। उन्हें दो वर्ष पश्चात यानि

1949 ई मे इण्डियन एग्रीकल्चरल रिसर्च इन्स्टीट्यूट मे प्रवेश मिल गया। 1952 ई में उन्हे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से आलू पर शोध-कार्य हेतु पीएच डी की डिग्री प्राप्त हुई।

डॉ स्वामीनाथन चाहते थे कि उन्हे सतोषप्रद नौकरी मिल जाए जो उनकी जीविका का साधन बने। इसके साथ-साथ वह शोध-कार्य भी करना चाहते थे।

उन दिनो भारत मे आलू पर शोध-कार्य करने वाली सस्थाओ में कोई स्थान खाली न था जहा डॉ स्वामीनाथन शोध कार्य कर सकते। बहरहाल, उन्हे एक अन्तर्राष्ट्रीय सस्था यानि एफ ए ओ मे चावल की जापानी और भारतीय किस्मो पर शोध व सुधार का कार्य सौपा गया। 1956 ई मे स्वामीनाथन का स्थानान्तरण पूसा इन्स्टीट्यूट मे हो गया जहा उन्होने गेहू पर शोध-कार्य प्रारम्भ कर दिया और साथ ही साथ चावल पर भी शोध कार्य जारी रखा। पहले पूसा इन्स्टीट्यूट मे गेहूँ पर शोध और सुधार कार्य वनस्पति विभाग मे हुआ करता था। इस सस्था में डायरेक्टर स्वामीनाथन ने किरणो के विकिरण के बलबूते पर कार्य प्रारम्भ किया। उन्होंने गेहूँ की एक ही किस्म से कार्य प्रारम्भ करके किरणो की बदौलत कई दूसरी किस्मों का आविष्कार किया जो गेहूँ के बुनियादी अदद (7) से नामित की गई। कुछ वैज्ञानिको के अनुसार गेहूँ के क्षेत्र मे शोध सम्बन्धी कार्य एटमी किरणो की बदौलत नहीं हो सकता था, किन्तु डा स्वामीनाथन ने अपनी गर्मजोशी और योग्यता से यह कार्य सफल करके दिखा दिया। 1970 ई मे सरदार पटेल विश्वविद्यालय ने उन्हे डी एससी की मानद उपाधि प्रदान की।

डॉ स्वामीनाथन अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के वक्ता और एक उच्च-स्तरीय कृषि वैज्ञानिक है। वे अब तक करीब 300 से ऊपर सामाजिक और शोध-सम्बन्धी लेख लिख चुके है जो भारत, यूरोप और अमेरिका की महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओ में प्रकाशित हो चुके है। उन्होंने कोलम्बिया विश्वविद्यालय में डायरेक्टर की हैसियत से बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य किया। वह लगभग 60 छात्रो के लिए पीएच डी के गाइड और लगभग 40 छात्रो के लिए एम एससी के आचार्य रह चुके है।

1969 ई मे डॉ स्वामीनाथन इण्डियन नेशनल साइस एकेडमी के सेक्रेटरी बना दिए गये और इण्डियन एकेडमी ऑफ साइस के फेलो मेम्बर। वह 1963 ई में हेग मे हुए एक अतर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स के उपाध्यक्ष रहे। 1970 ई मे उन्होने प्रथम डा जाकिर हुसैन मेमोरियल लैक्चर दिया और इसके एक वर्ष पश्चात 1971 ई मे यू जी सी के राष्टीय प्रवक्ता नियुक्त हुए। आप आज तक कई अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक समारोहो मे अपने बहुमूल्य भाषण दे चुके है। आप स्वीडन की 'सीड कमेटी' के मानद सदस्य है।

उनके वैज्ञानिक और शोध सम्बन्धी कार्यों ने उन्हे बहुत प्रतिष्ठा प्रदान की। 1961 ई मे उन्हें दस हजार रुपये का डॉ शान्ति स्वरूप पुरस्कार प्राप्त हुआ। उन्हे 1965 ई में चेकोस्लोवाकिया की साइस एकेडमी से एक पुरस्कार, और उसी वर्ष भारत मे बीरबल साहनी पुरस्कार प्राप्त हुआ। आप 1967 ई मे "पद्मश्री" और 1972 ई मे "पद्मभूषण" से सम्मानित किए गये। 1971 ई मे उन्हे सामाजिक नेतृत्व के आधार पर एक बहुमूल्य अन्तर्राष्ट्रीय 'मैग्सेसे' पुरस्कार प्राप्त हुआ जो सम्पूर्ण एशिया मे नोबेल पुरस्कार का स्थान रखता है। 1989 मे उन्हे पद्मविभूषण से सम्मानित किया।

आइए अब विषय से हटकर अपने देश के कुछ कृषि सम्बन्धी मामलो की बात करें।

हमारा देश मूलत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी अधिकाश जनसख्या की जीविका का माध्यम खेती-बारी है। इस खेती-बारी में चावल के बाद गेहूँ महत्त्वपूर्ण अनाज है जिसका प्रयोग भारत के एक विशाल भू-भाग में भोजन के रूप में किया जाता है। आजादी के बाद गेहूँ खाने वाले लाखों बल्कि करोडों लोग भारत में आकर बसे। उनका मुख्य भोजन गेहूँ ही था। इधर पिछले लगभग तीन दशको में भारत के दूसरे क्षेत्रों में भी गेहूँ लोकप्रिय हो गया है। सच तो यह है कि आज भारत में गेहूँ एक बहुत ही लोकप्रिय अनाज है। इधर भारत में अनाज की कमी पूरा करने के लिए तथा अधिकाधिक गेहूँ पैदा करने के लिए नये-नये तरीके आविष्कार किए जा रहे है। जमीनों को कृषि योग्य बनाकर, खेती-बारी में नये-नये तरीकों को अपनाकर खेतों से अधिकाधिक पैदावार प्राप्त करने के ढग भी अपनाए जा रहे है। इन सभी मसूबो मे एक कामयाब योजना का उल्लेख करना आवश्यक है।

वह है बौनी किस्मो का उल्लेख, जिनकी बदौलत भारत में कृषि योग्य भूमियों से दुगुनी फसल प्राप्त करने में सफलता प्राप्त हुई है और एक सीमा तक खुराक का प्रश्न भी हल हो गया है। गेहूँ पर अपने एक लेख में डॉ स्वामीनाथन यू लिखते है—"जो वैज्ञानिक कुछ वर्षों से अधिक पैदावार प्राप्त करने की जी-तोड कोशिश कर रहे थे, उन्हें विश्वास था कि अधिक पैदावार देने वाली किस्मो को बोने से न सिर्फ एक मुश्त पैदावार ही बढेगी बल्कि यह कार्य एक ऐसी प्रतिक्रिया उत्पन्न करेगा जिससे हमारे देहात के लोगो में खेती के नये ढग और कई दूसरे शोध-सम्बन्धी कार्यों में विश्वास पैदा हो सकेगा। दूसरे, इससे किसानो में भी विश्वास उत्पन्न होगा। ये किस्में और ढग सिंचाई से पैदा की जाने वाली और बारिश के पानी से पैदा होने वाली, दोनों किस्मों की खेती के उपयोगी है। इनसे किसानो को और अधिक परिवर्तन लाने के लिए तैयार किया जा सकता है। अब पिछले कुछ वर्षो से भूमि के छोटे-छोटे टुकडों के मालिक किसान भी समझने लग गये है कि उनके लिए नई जिन्दगी और खुशहाली के रास्ते खुल गये हैं। इन बौनी किस्मों की पैदावार ने बेरोजगारी की समाप्ति में भी सहायता की है।"

एक अन्य बात जो बहुत महत्त्वपूर्ण है, वह यह है कि आज के दौर में नयी खोजों से प्रभावित होकर पढा-लिखा शहरी तबका भी गावों में काश्तकारी करने लग गया है। आज कृषि एक प्रतिष्ठित पेशा बन गया है और सौभाग्य से खेती के इस पेशे को अपनाने के लिए भारत मे एक नया सामाजिक और मानसिक वातावरण दिन ब दिन युवा होता जा रहा है।

गेहूँ की बौनी किस्मो को कामयाब बनाने और फिर उन्हें सुधारने तथा बढाने में डॉ स्वामीनाथन ने प्रशसनीय कार्य किया है। दिलचस्प बात यह है कि यह कार्य राष्ट्रीय स्तर पर किया गया है। इस कार्य का कमाल अब सामने आया है। भारत ने रॉकफेलर फाउन्डेशन से 1962 ई में इण्डियन एग्रीकल्चर इन्स्टीट्यूट जिसे सामान्यत पूसा इन्स्टीट्यूट कहा जाता है, के द्वारा मैक्सिको से बौनी किस्मों को भारत भेजने का आग्रह किया। साथ-साथ डॉ एन ई बोरलाग, जिन्हें बौनी किस्मो पर शोध के लिए 1968 ई मे अन्तर्राष्ट्रीय नोबेल पुरस्कार प्राप्त हो चुका है, की सेवाए भी विस्तृत रूप से ली गई। डॉ बोरलाग भारत आए और यह बहुत ही सतोषजनक बात है कि यही डॉक्टर दुबारा 1971 ई में जब भारत आए तो डॉ स्वामीनाथन के नेतृत्व में गेहूँ पर शोध कार्य देखकर बहुत प्रसन्न हुए।

1965 ई से 1971 ई तक डॉ स्वामीनाथन पूसा इन्स्टीट्यूट, नई दिल्ली के डायरेक्टर रहे। वह भारत के एक कुशल वनस्पतिशास्त्री है। दूसरे, उनका विषय कृषि है। उन्होने बौनी किस्मों और भारतीय कृषि पर कई बहुमूल्य लेख लिखे है जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके है। अपने एक लेख मे डॉ स्वामीनाथन लिखते हैं-

'देश भर में गेहूँ की बौनी किस्मो से अच्छी पैदावार प्राप्त की गई। इस तरह भारत में गेहूँ की पैदावार कुछ ही वर्षों मे लगभग दो गुनी हो गई।'' इस महत्त्वपूर्ण घटना की यादगार के लिए हमारी भूतपूर्व प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी ने ''भारत मे गेहूँ मे क्रान्ति'' के नाम के डाक टिकट का एक विशेष समारोह मे शुभारम्भ किया। गेहूँ मे यह क्रान्ति वास्तव मे ''हरित क्रान्ति'' की ओर एक कामयाब और पूर्ण कदम था। इस क्रान्ति से देश की आर्थिक स्थिति निश्चित रूप से सुधरेगी। भारतीय कृषि विज्ञान का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि भारत खाद्य-सम्बन्धी आवश्यकता को पूरा करने का उद्देश्य प्राप्त कर सके। इससे देश की प्रतिष्ठा बढेगी और देश खुशहाली और प्रगति की ओर उन्मुख होगा। एक आम विचार है कि यदि वैज्ञानिकों की खोज का पूरा-पूरा लाभ उठाया जाए तो गेहूँ की पैदावार काफी हद तक बढाई जा सकती है। इकबाल के अनुसार—''जरा नम हो तो ये मिट्टी बहुत जरखेज है साकी।''

अब पूसा इन्स्टीट्यूट मे बौनी किस्मो पर हुई खोज की दास्तान सुनिए। भारत सरकार ने मैक्सिको से जो बीज भारत मगवाया उसे इसी इन्स्टीट्यूट के द्वारा भारत के कई क्षेत्रों जैसे- उत्तर प्रदेश, पजाब, राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र और दिल्ली के किसानों में बाटा गया। फल सामने आया कि किसानों को उसकी खेती से बहुत अच्छी पैदावार प्राप्त हुई। अगले वर्ष भारत सरकार की बदौलत रबी की फसल की बुवाई के लिए ''लरमा रोहू'' और कुछ अन्य नई किस्मों का बीज मगवाया गया।

1967-68 ई में इस बात पर जोर दिया गया कि ऐसी योजना का दायरा एक ही फसल तक सीमित न रखा जाए। बल्कि एक ही खेत मे एक के बाद दूसरी और इस प्रकार एक से अधिक फसलें पैदा करके पैदावार को बढाया जाए। इस कार्यक्रम मे जहा एक आर अधिक उपज देने वाली किस्मो का प्रयोग करना था, वहीं दूसरी तरफ खेती के लिए नये ढगों का प्रयोग और पानी की अच्छी व्यवस्था भी करना था। दिल्ली के आसपास के देहात मे दोगला बाजरा, दोगली मकई, ज्वार या आई आर-8 के चावल की फसल तथा इसके बाद रबी मे नई बौनी किस्म के गेहूँ-कल्यान सोना या एस-308 की फसल, फिर बाद मे गर्मी के मौसम मे मूग या लोबिया की फसल पैदा की गई। कई किसानों ने नई बौनी किस्मों के बीज पैदा करने की योजना भी कामयाब करके दिखाई। स्मरणीय है कि थोडे से बीज बोने से बडी मात्रा मे बीज प्राप्त हो जाता है।

बौनी किस्मो के पौधे लम्बाई मे छोटे होते है, इसीलिए फसल उगने के बाद यदि उनमें कोई अजनबी पौधा दिखाई दे तो किसान उसे तुरन्त उखाड कर निकाल सकते है। बीज बोने की योजना बडी सीमा तक कामयाब रही। उदाहरण है दिल्ली के एक गाव का, जहा सारा गाव 'बीज का गाव' कहलाता है और उसके किसान नये बीज पैदा करने के माहिर माने जाते है।

डॉ स्वामीनाथन के कार्यकाल में जब वे पूसा इन्स्टीट्यूट के डायरेक्टर थ तो कृषि-सम्बन्धी खोज और उन्नति के कई कार्य हुए। इस सस्था ने कई नई बौनी किस्मों का

سورا
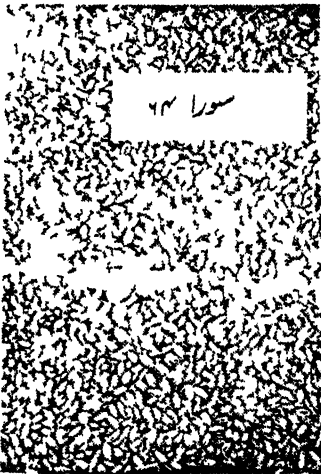
आविष्कार किया। दूसरे, पानी और खाद की बदौलत फसलो से पैदावार बढाने के नये तौर-तरीके ईजाद किए। तीसरे, भारत मे शुष्क जमीनो से भी पैदावार प्राप्त करने और उनमें योग्य फसले बोने पर खोज की गई। अलसी की एक नई किस्म "अरूना" को जन्म दिया गया। यह किस्म मात्र चार माह मे पक कर तैयार हो जाती है। तेलगाना (आन्ध्र प्रदेश) में पूरे वर्ष मे मात्र एक ही फसल उगाई जाती थी। अब "अरूना" की बदौलत एक ही वर्ष मे दो फसलें सफलतापूर्वक उगाई जा रही है।

आजकल ज्वार की दोगली फसले भी तैयार की जा रही है। कपास की "सुजाता" किस्म बहुत अच्छी सिद्ध हुई है। जौ की नई किस्मे जिनसे शरबत आदि तैयार किए जा सके, यह भी इसी सस्था की बदौलत अस्तित्व मे आई है। सक्षेप मे हम कह सकते है कि डॉ स्वामीनाथन का शोध-सम्बन्धी कार्य भारत के कृषि के इतिहास मे सदैव स्मरणीय रहेगा।

डॉ स्वामीनाथन का शोध-कार्य गेहूँ के अतिरिक्त दूसरे अनाजो पर भी किया गया। उन्होने पटसन की दो किस्मो से एक दोगली किस्म ईजाद की। 1961 ई मे डा स्वामीनाथन वनस्पति विभाग के प्रबन्धक नियुक्त किए गये और उस विभाग में गेहू की बौनी किस्म पर उनका कार्य बहुत प्रशसनीय रहा। डॉ स्वामीनाथन की सलाह पर राष्ट्रीय स्तर पर कुछ जिले चुने गये जहा किसानो को कुछ विशेष किस्मो के बीज, पानी और खाद की सुविधाए दी गईं। फसलो की देखभाल में वैज्ञानिको ने उनकी पूरी सहायता की जिससे किसानो में नई उमग का प्रसार हुआ। इस कार्य से कृषि के क्षेत्र मे बहुत प्रगति हुई।

इस कार्य की ट्रेनिग इस प्रकार दी जाती है कि आसपास दो खेत चुन लिए जाते है, जिनमें से एक मे पुराने ढग से फसल उगाई जाती है और दूसरे मे आधुनिक ढग से। इस प्रकार साथ-साथ दोनो फसलो की वृद्धि को जाचने का कार्य किया जाता है। इस व्यावहारिक ढग से दोनो फसलों की वृद्धि जाच कर अधिक फसल पैदा करने की विशेषताये और गुण सामने आ जाते है।

कुछ वर्षो पूर्व इण्डियन नेशनल साइस एकेडमी ने चण्डीगढ मे भारतीय विज्ञान की सिल्वर जुबली मनाई। समारोह का प्रारम्भ तत्कालीन प्रधानमत्री श्रीमती इदिरा गाधी ने किया। इस अवसर पर भारत के प्रतिष्ठित वैज्ञानिको ने विज्ञान के भिन्न-भिन्न पहलुओं पर अपने विचारों को व्यक्त किया। इस तीन दिवसीय समारोह मे लगभग पन्द्रह हजार वैज्ञानिको और विद्वानो ने भाग लिया। सिल्वर जुबली के इस अवसर पर इण्डियन नेशनल एकेडमी ने सिल्वर जुबली एवार्ड डॉ स्वामीनाथन को प्रदान किया। पुरस्कार प्राप्त करते हुए डॉ स्वामीनाथन ने भारतीय विज्ञान के सम्बन्ध मे अपना विचार यू प्रकट किया—

"भारत मे वैज्ञानिको की सख्या बहुत सीमित है, जबकि जनसख्या का एक विशाल भाग विज्ञान से अनभिज्ञ है। ऐसी स्थिति मे वैज्ञानिको का यह कर्त्तव्य है कि वे विज्ञान सम्बन्धी जानकारिया जनता तक पहुचाने में सहायक बने। ऐसे कार्य के लिए लाजिमी है कि हर वैज्ञानिक यह मान कर चले कि उसे रेडियो, अखबारो या गावों की जनता के सामने वैज्ञानिक ढगों का प्रदर्शन करके बच्चो, युवाओ, किसानो और जनता को नई-नई बातो से अवगत कराना है। इस तरह के कार्यो के लिए विशेष कार्यक्रम ऐसे होने चाहिए जो माहौल और व्यक्तियो की आवश्यकतानुसार परिवर्तित किए जा सके।"

ऐसे अच्छे कार्यों मे स्कूली छात्र भी भाग ले सकते है जो सामान्य जनता से अधिक विवेक तथा ज्ञान रखते है। एक उज्ज्वल भविष्य के लिए यह बहुत आवश्यक है कि ऐसी वैज्ञानिक शिक्षा सम्पूर्ण देश मे फैलायी जाए जिससे जनता लाभान्वित हो सके। विज्ञान बहुत तीव्र गति से आगे बढ रहा है और हमारी इच्छा है कि भारत भी तेज गति से विज्ञान के रास्ते चले। ऐसे कार्यक्रमों से हमारा सामाजिक और आर्थिक ढाचा एक नया रूप प्राप्त करेगा। भारतीय समाज विज्ञान के बढते हुए बहाव से लाभान्वित हो सकेगा और हम एक उज्ज्वल भविष्य की आशा कर सकेंगे।

डॉ स्वामीनाथन एक बहुत ही मेहनतकश वैज्ञानिक है। सुबह पाच बजे से देर रात तक आप लगातार कार्य करते रहते है। ऑफिस हो या खेत, कान्फ्रेंस रूम हो या क्लास रूम, आप उन्हे व्यस्त पाएगे। उनकी पत्नी भी एक सामाजिक कार्यकर्त्ता है और नेहरू प्रयोग केन्द्र की सर्वेसर्वा है। यह सस्था होनहार बच्चो और बच्चियो को पढाने का कार्य करती है। डॉ स्वामीनाथन की तीन पुत्रिया है जो सगीत मे बहुत रुचि रखती है। उनकी सगीत और विशेषत त्यागराज के लिखे हुए कई राग और गानो मे बहुत दिलचस्पी है। जब भी उन्हें सगीत और महफिल मे शरीक होने का अवसर मिलता है, वे वहा ध्यानमग्न होकर उसे सुनती है।

एक बार स्वामीनाथन ने एक साक्षात्कार के दौरान बताया कि "उन्हें त्यागराज से बहुत ही लगाव है, क्योकि त्यागराज के गीतो से जीवन जीने की सीख मिलती है। जैसे-त्यागराज के एक गाने का अर्थ कुछ यू है—'खुदा तक पहुचने के लिए मुख्य मार्ग का ही चयन करना चाहिए, गलियो और पगडडियो का सहारा बेमानी है।"

डॉ स्वामीनाथन के अनुसार यह नियम विज्ञान पर भी पूरी तरह लागू होता है। विज्ञान ही जीवन को खुशहाल बना सकता है, हा, यह रास्ता 'शार्ट कट' नहीं होना चाहिए। क्योंकि 'शार्ट कट' विज्ञान में नहीं चल सकता। इसी प्रकार उन्हे बचपन से ही लिखने का शौक था। अभी उनकी आयु कम ही थी कि जब उन्हे बम्बई की एक मासिक पत्रिका "रूरल इण्डिया" मे कई लेख प्रकाशित करने के अवसर प्राप्त हुए और इसमें सदेह नहीं कि डॉ स्वामीनाथन आज तक भारतीय कृषि के विषय पर सैकडों लेख भारतीय और बाह्य देशों की पत्र-पत्रिकाओं मे लिख चुके है। भारतीय कृषि का अध्ययन आपने बहुत ईमानदारी और निष्ठा से किया है। इस विषय पर आपकी गहरी पकड है। आलोचनाए लिखने में आपको महारथ हासिल है और ऐसे लेखों से होनहार वैज्ञानिक बहुत लाभ उठाते है।

डॉ स्वामीनाथन को कैम्ब्रिज मे एक अग्रेज व्यवस्थापक एफ एल ब्राइन के साथ शोध करने का अवसर मिला। यह अग्रेज भारत का मित्र और शुभचिन्तक था तथा पजाब के देहाती क्षेत्रो के काम का बहुत ही सक्रिय कार्यकर्ता। इस अग्रेज ने भारतीय कृषि पर कुछ जानकारीपूर्ण और उपयोगी लेख भी लिखे जिनमे उन्होने इस बात पर बहुत जोर दिया कि भारत की उन्नति के लिए गावो मे बडे पैमाने पर काम होना चाहिए। यह बात स्वामीनाथन के मस्तिष्क में घर करती गई। ब्राइन और डॉ स्वामीनाथन भारतीय कृषि पर अपने विचारों का आदान-प्रदान करते थे। डॉ स्वामीनाथन इस अग्रेज के बगीचे में उसके फल-पौधों से भी मित्रता करते और उनके साथ छुट्टी के दिनो मे काफी समय व्यतीत किया करते।

डॉ स्वामीनाथन 1971 ई से 1979 ई तक इण्डियन कौसिल ऑफ एग्रीकल्चरल

रिसर्च के डायरेक्टर जनरल के पद पर रहे। वे अप्रैल 1979 ई मे योजना आयोग के सदस्य बना दिए गये जहा वे कुछ वर्षों तक कमीशन को गावो और कृषि के विषय मे अपनी सलाह व कार्यक्रम बताते रहे। इस पद पर भी उन्होने अपनी प्रतिष्ठा और साख मे कई गुना वृद्धि की, क्योकि मेहनत, ईमानदारी व लगन उनका चरित्र है। वह एक शात और नम्र स्वभाव वाले व्यक्ति है। लेखक ने 1979 ई मे डॉ स्वामीनाथन की एग्रीकल्चरल कौंसिल से विदाई पर कुछ पक्तिया लिखीं। कौसिल मे एक सपादक की हैसियत से लेखक का डॉ स्वामीनाथन से कई वर्षों तक सम्बन्ध रहा तथा उनसे लेखक के जातीय सम्बन्ध भी थे और लेखक और सम्पादक के रूप मे विशेष निकटता भी। ये पक्तिया एक समारोह मे पढी गईं। आपके लिए भी इन पक्तियो को मैं यहा पेश कर रहा हू—

जराअत की ज़ुल्फो को सवारा तूने
तहकीक के जलवो को निखारा तूने
अपने इल्मो अमल से किसानो मे
एक नई उमग को उभारा तूने

खेती-बारी मे तहकीक का राज बताया तूने
बनके साजिन्दह गेहूँ का नया राग बताया तूने
नये ढग, नये अदाज, नये तरीको का अवामी बनाकर
खुष्क रेतीले खेतो को गुलो गुलजार बनाया तूने

तेरी तालीम से मुहाक्कि को जिला मिलती है
तेरी शफ़कत, तेरी मुहब्बत बेबहा मिलती है
ख़ुशा की तेरी रहनुमाई अजीब इन्केसारी से
पूसा मे हो याकि कौसिल मे बरमला मिलती है

तेरे अदाज ने दिया नया मोड हिन्दुस्ता को
तेरी फिक्र ने किया जरख़ेज इस चमनिसा को
सदके तेरी अजमत तेरा कमाल ए स्वामीनाथन
एक नया हुस्न, नई ताजगी मिली इस गुलसिता को

भारत सरकार ने जो 16 देशो की एक कमेटी बनाई, डॉ स्वामीनाथन 1980 से 1994 तक उसके अध्यक्ष रहे। 1994 में वह राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी और वर्ल्ड वाइल्ड फण्ड फार नेचर के अध्यक्ष बनाये गये।

डा बोरलाग को 1970 मे विश्व शान्ति पुरस्कार दिया गया तो उन्होंने कहा—"हरित क्रान्ति जबकि एक सामूहिक प्रयास है, और उसका सर्वाधिक श्रेय भारतीय अधिकारियों, सस्थाओ, कृषि वैज्ञानिको और विशेष रूप से डॉ स्वामीनाथन जी को जाता है। क्योंकि आपने मैक्सिको की बौनी किस्मो के महत्त्व को समझा। यदि ऐसा न होता तो हरित क्रान्ति मे एशिया ने जो आज सफलता प्राप्त की है वह सम्भव न होती।"

## प्रो. बीरबल साहनी (1891-1949)
### विज्ञान शोधकर्त्ता

प्रो बीरबल साहनी प्रो रुचिराम साहनी और श्रीमती किशोरी देवी की तीसरी सतान थे। उनका जन्म 16 नवम्बर 1891 ई को पश्चिमी पजाब के शाहपुर जिले के एक छोटे से व्यावसायिक कस्बे भीरा (जो आजकल पाकिस्तान में स्थित है) मे हुआ। उनका खानदान उत्तरी-पश्चिमी सीमा प्रान्त (जो उन दिनो पजाब राज्य का एक भाग था) के एक शहर डेरा इस्माइल खा से निर्वासित होकर 1947 ई से पहले ही भीरा आ बसा था। उनका जन्म उसी शहर मे हुआ था। यह कोई इत्तेफाक की बात नहीं। उनके जीवनी लेखिका को अपनी माता श्रीमती लक्श्मनती मल्होत्रा के द्वारा पता चला कि उनकी मा श्रीमती किशोरी देवी का विचार था कि घर-बार के सभी समारोहों और महत्त्वपूर्ण आयोजनो अपने खानदानी घरों में ही मनाना चाहिए। (उल्लेखनीय है कि श्रीमती लक्श्मनती देवी बीरबल साहनी की बहन थीं) इसलिए जब भी घर मे बच्चा पैदा होने की उम्मीद होती तो वह लाहौर से भीरा चलीं जातीं। बीरबल साहनी के जन्म को बहुत शुभ माना गया, मात्र इस कारण कि जब उनका जन्म हुआ तो उस क्षण कुछ बूदा-बादी हो रही थी। ऐसी घटना को हिन्दू लोग नि सन्देह बहुत शुभ मानते है।

उनके परिवार के सदस्य स्कूल और कॉलेज की छुट्टियों में अक्सर भीरा चले जाते। वहा से किशोर बीरबल अपने पिता और भाइयों के साथ आसपास के देहाती क्षेत्रो में सैर-सपाटे के लिए निकल जाया करते। इन क्षेत्रो में नमक निकालने वाले पहाडो की शृखला थी जिसमें खबूडा का क्षेत्र भी सम्मिलित था। सम्भव है उन्हीं दिनों मृदा-विज्ञान और प्राचीन वनस्पतियों के बारे मे उनका शौक उत्पन्न हुआ हो, क्योंकि नमक की इन पहाडी शृखलाओ में कई पौधों

की सरचना और भूमि सम्बन्धी कुछ विशेषताओ का विशाल भण्डार विद्यमान था। इसलिए बाद के वर्षो मे साहनी इस क्षेत्र की भूमि सम्बन्धी इन विशेषताओं का अनुमान लगा सके, जो शोध के दृष्टिकोण से एक महत्त्वपूर्ण कार्य कहा जा सकता है।

प्रो साहनी मात्र एक वैज्ञानिक और विद्वान व्यक्ति ही नहीं थे, बल्कि एक बहुत बडे राष्ट्रप्रेमी भी थे। वे एक धार्मिक व्यक्ति भी थे, यद्यपि वे अपने धार्मिक-विचारों का खुलकर इजहार नहीं करते थे। उनके व्यक्तित्व मे कई विशेषताए सम्मिलित थीं, जैसे-दयालुपन और त्याग। यह गुण उन्हे अपने पिता से विरासत मे मिला था जो स्वय भी इन्हीं गुणों के धारक थे। प्रो रुचिराम साहनी एक उच्चस्तरीय विद्वान थे और समाज सुधारक भी विशेष रूप से स्त्रियो की स्वतत्रता के वे बहुत बडे पक्षधर थे।

## 'रूकाजी वनस्पति

यद्यपि बीरबल साहनी स्वय रूकाजी वनस्पति के वैज्ञानिक थे, किन्तु अन्य वैज्ञानिक विषयो पर शोध करने वाले शोधकर्त्ताओ की भी वे बहुत हिम्मत बधाया करते थे। यह उनका ही प्रयास था कि वनस्पति विज्ञान के अन्य विभागो जैसे-प्राकृतिक विज्ञान और बेलदार पौधो पर शोध के कार्य मे काफी उन्नति हुई। शोध-क्षेत्र मे हिम्मत आफजाई के लिए उन्होने अपने पिता प्रो रुचिराम साहनी के नाम पर शोध कार्यो पर पुरस्कार देने की व्यवस्था की। इस पुरस्कार को उन्होने उस मासिक भत्ते की रकम से स्थापित की जो उन्हें विज्ञान विभाग के डीन की हैसियत से मिला करती थी। वरस्पति विज्ञान के उस छात्र को यह पुरस्कार दिया जाता था जो वनस्पतियो के विषय पर उच्चस्तरीय शोध लेख लिखता था। प्रो साहनी के लिए यह गर्व की बात थी कि 1933 ई मे वह सर्वसम्मति से विज्ञान विभाग के डीन चुने गये थे और इस पद पर वे अपने जीवन के अन्तिम दिनो तक रहे।

जब पजाब मे आर्य समाज का सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और शैक्षिक आन्दोलन चला तो उन दिनो प्रो रुचिराम साहनी उन गिने चुने बौद्धिक लोगो मे से थे जिन्होंने इस आन्दोलन का स्वागत किया। बीरबल साहनी का पालन-पोषण ऐसे वातावरण मे हुआ था जिसमे अपने से बडे की आज्ञा पालन करने के साथ-साथ छोटो की सलाह की भी कद्र की जाती थी। यह बात उनके छोटे भाई डा एम आर साहनी के इन शब्दो से स्पष्ट हो जाती है—"पिता जी ने भाई साहब के लिए इण्डियन सिविल सर्विस की योजना बनाई थी और इसके लिए बीरबल साहनी को तैयार रहने का आदेश दे दिया गया। इसमे सकोच की कोई गुजाइश नहीं थी। हा, मुझे बीरबल का यह उत्तर आज तक याद है कि अगर उन्हें आदेश दे दिया गया तो वह आदेश का पालन अवश्य करेगे, किन्तु यदि उनसे यह पूछा गया कि उनकी दिलचस्पी किस विषय मे है तो वह वनस्पति विज्ञान मे शोध कार्य करना पसद करेगे।" इस उत्तर पर पिताजी तात्कालिक रूप से आश्चर्यचकित अवश्य हुए किन्तु अततोग्त्वा उन्होंने अपने पुत्र की बात मान ली। वे जीवन मे नियम के कायल अवश्य थे कितु यदि बात तार्किक हो तो वे नियम और सिद्धान्तो को किनारे रख देते थे।

बीरबल साहनी का बचपन ऐसे वातावरण मे व्यतीत हुआ जहा बडों का आदेश मानने की आदत तो थी ही, छोटो को भी स्वतत्रतापूर्वक सोच-विचार करने, अपने निर्णय तथा क्षमता के अनुसार काम करने की आदत थी। विदेशी साम्राज्य के विरोध में क्रान्ति की भावना बलवती हो रही थी। हा, साथ-साथ उच्च शिक्षा प्राप्त करने की भावना भी समाज मे पग्वरिश पा रही थी।

बीरबल साहनी ने 1911ई मे पजाब विश्वविद्यालय से विज्ञान में बी एससी पास किया और इसके पश्चात इग्लैण्ड चले गये जहा उन्होने कैम्ब्रिज से 1916 ई मे ग्रेजुएट की डिग्री प्राप्त की और प्रो ए सी सिवार्ड के निर्देशन मे शोध-कार्य मे लग गये। प्रो सिवार्ड अपने समय के प्रसिद्ध वनस्पति विशेषज्ञ थे। 1919 ई में बीरबल साहनी को पौधों पर शोध करने के कारण डॉक्टर आफ साइस की डिग्री लन्दन विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान की गई।

कैम्ब्रिज मे अपनी शिक्षा पूर्ण करके प्रो बीरबल साहनी 1919 ई में भारत लौट आये और बनारस विश्वविद्यालय मे वनस्पति-विज्ञान के प्रोफेसर नियुक्त हुए। वहा एक वर्ष तक पढाने के उपरान्त वे लाहौर चले गये जहा 1920 से 1921 ई तक पजाब विश्वविद्यालय मे वे वनस्पति विज्ञान पढाते रहे। 1921 ई मे डा साहनी लखनऊ विश्वविद्यालय में वनस्पति विज्ञान के प्रो नियुक्त किए गये। तबसे वनस्पति विभाग और बाद मे भूमि विज्ञान विभाग—इन दोनो विभागों के 1949 तक यानि अपनी जिन्दगी के अन्तिम दिनो तक अध्यक्ष रहे।

वनस्पति विज्ञान विभाग का काम-काज सभालने मे प्रो साहनी ने जिन मामलो को प्रमुखता दी उनमे बी ए से पहले के क्लास और बी ए की बाद की कक्षा तथा आनर्स के छात्रो के पाठ्यक्रम पर पुनरावलोकन का काम शामिल था। वे अपनी असीम व्यस्तता के बावजूद बी एससी के छात्रों को पढाया करते थे। उनका विचार था कि निचली कक्षाओं में अच्छा आधार बनाने के लिए मजे हुए शिक्षकों को पढाना चाहिए। इससे सही ढग की शिक्षा देने की आधारशिला तैयार होती है जो नवउम्र-छात्रों के मस्तिष्कों पर अधिक प्रभाव डालती है तथा उन्हे उचित निर्देशन देती है। छात्रो मे व्यक्तिगत रूप से दिलचस्पी लेने के कारण वे बहुत इज्जत की निगाह से देखे जाते थे। वे उनके (छात्रों के) हाथों से बनायी हुई ड्राइग की जाच पडताल करते और उन्हे बारीक से बारीक बिन्दुओं को भी बिना किसी झल्लाहट के पढाते या समझाते। वे मेहनती छात्रों की प्रशसा भी किया करते थे और उन्हें थोडा-बहुत डाट भी देते, जिसका प्रभाव यह होता कि निकम्मे छात्र भी उनसे जरा तीव्र गति से पढने लगते। यद्यपि वनस्पति विज्ञान विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय में कई वर्षो से चल रहा था, किंतु उस विभाग मे एक रौनक उसके रूकाजी वनस्पति के विषय पर काम-काज करने के कारण पैदा हुई। प्रो साहनी के दिल मे बहुत दिनों से यह खयाल था कि वहा भूमि-विज्ञान की शिक्षा उपलब्ध न होने के कारण, बल्कि वहा भूमि-विज्ञान की शिक्षा का आधार भी न था जिसके कारण वनस्पति विज्ञान की पढाई-लिखाई की सुविधा छात्रो को उपलब्ध न थी। इस बात को ध्यान में रखते हुए उन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय में

भूमि-विज्ञान के विभाग को खोलने के लिए बहुत भाग-दौड की। 1943 ई में इस विभाग को स्थापित करने में वे अन्ततोगत्वा सफल हो ही गए। वे इस विभाग के अध्यक्ष भी थे और एम एससी में वनस्पति तथा भूमि-विज्ञान के छात्रों को इस विभाग के अध्यक्ष बनने के पहले के दिनों में पढाया करते थे। रूकाजी वनस्पति विज्ञान का एक पर्चा एम एससी के छात्रों के लिए रखा गया था। इस विषय में उच्च शोध के लिए उन्ही छात्रों को ही योग्य समझा जाता था जिन्होंने इससे पहले इस पर्चे में सफलता प्राप्त कर ली थी।

## प्राचीन सिक्कों पर कार्य

जब प्रो साहनी कोई काम-काज अपने हाथ में लेते तो उसे वैज्ञानिक ढग से पूरी लगन के साथ पूर्ति की मजिल तक पहुचाते। इसका प्रमाण है खोखराकोट नामक स्थान पर उनकी खोज। उन्होंने सिर्फ सिक्कों के साचों पर ही शोध नहीं किया बल्कि हिन्दुस्तान में प्राचीन काल में सिक्कों को ढालने के सभी तौर-तरीकों का अध्ययन भी किया। इससे उन्हें दूसरे देशों में सिक्कों के ढालने की तकनीक का विशेष अध्ययन करने का प्रोत्साहन मिला। विशेष रूप से चीन और रोम में प्राचीन काल में यूरोप और उत्तरी अफ्रीका की अपनाई हुई तकनीकों का। उन्होंने उन देशों के तौर-तरीकों से तुलना की। फिर, उन्होंने इससे सम्बन्धित अनेक जानकारिया प्राप्त करके, इसे अपने अध्ययन का विषय बनाया। जिस पर हर पढने-सुनने वाला चकित रह जाता है। रोम के जमाने से एक सौ वर्ष पूर्व भारत ने सिक्को का ढालने के लिए एक ऐसा साचा बनाया था जो उस समय तक यूरोप में बने सिक्कों के साचों की तुलना में उच्चस्तरीय था। उनका यह विचार एक शोध लेख के रूप में 1945 ई में इण्डियन सोसाइटी की एक पत्रिका में प्रकाशित हुआ। विषय था— "प्राचीन भारत में सिक्के ढालने की तकनीक।"

प्रो बीरबल साहनी की वैज्ञानिक सफलताए इतनी अधिक है कि उनकी सूची तैयार करना असम्भव है। यहा उनके प्रकाशित काम-काज में निफ्रोलिप्स, नफोबोलिस, टेक्स, साइलोटम, मिस्टेरस और इक्मोपाइल इत्यादि पौधों पर उनके काम का उल्लेख आवश्यक है। जिनसे उनकी वृद्धि, भौगोलिक विकास और इनके पारस्परिक रिश्तों को समझने में सहायता प्राप्त होती है। वे बुनियादी रूप से रूकाजी वनस्पति के वैज्ञानिक थे, इसीलिए जीवित पौधों-पत्तों के अध्ययन में उनका काम-काज काफी प्रशसनीय है। उनकी सबसे पहला शोध लेख "गक्गोब्लोना के बीजों में किसी अन्य तत्त्व की उपस्थिति और पौधों के अध्ययन में उनका महत्त्व", 1915 ई में "न्यूफाइटोलोजेस्ट" प्रकाशित हुआ। उनका यह वक्तव्य बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ, क्योंकि अभी कुछ ही वर्ष व्यतीत हुए होंगे जब 1911 ई में वे कैम्ब्रिज चले गये। इस बात ये यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने विश्लेषण करने की क्षमता और गहरी दृष्टि जैसी विशेषताए पायी थीं। उनकी अर्न्तदृष्टि बहुत तीव्र थी जो शोध-कार्य में बहुत उपयोगी मानी जाती है। उनका दूसरा शोध-लेख "न्यूफाइटालोजेस्ट" भी 1915 ई में प्रकाशित हुआ, जो निफ्रोलपेस वालियोबेलस के मिश्रित विश्लेषण से सम्बन्धित था। यह अजीब किस्म का फर्न है जिसके मादा पौधे से लम्बी-लम्बी बेलें निकलती है जो जगली पौधों पर चढ जाती है फिर उनके बीच-बीच में नई शाखाए निकल आती

है जो मादा पौधो से ऊची उठ जाती है। प्रो बीरबल साहनी ने इस बेल की मिश्रित क्रिया का अध्ययन किया और इसके अतिरिक्त यह भी बतलाया कि किस प्रकार नई शाखा से निकलने वाले पौधे नई शक्ल अख्तियार करते हुए जालनुमा बन जाते है। इसके आगे बढ कर उन्होंने आलूया की व्याख्या, निफ्रोलिपस कार्डिफोलिया न्यूफाइटालोजेस्ट 1916 ई का अध्ययन किया और इस पर लेख भी प्रकाशित कराया। फिर इसे उन्होने क्लीकिल्स में शाखाओं के विकास के विषय पर एक शोध-लेख सिडबरी हार्डी मैन के पुरस्कार के लिए भेजा जो 1917 ई में न्यूफाइटालोजेस्ट में प्रकाशित हुआ।

प्रो साहनी आकर्षक व्यक्तित्व के धनी थे और ज्ञान का भण्डार दूसरों को प्रदान करने की क्षमता रखते थे। उनकी मानसिक ईमानदारी और विज्ञान के प्रति उनका व्यावहारिक दृष्टिकोण एक तकियाकलाम का दर्जा पा चुका था। यदि किसी शोध के परिणाम या अध्ययन में सदेह होता तो वे हर प्रकार के सशोधन को सहन कर लेते और अपनी झूठी शान को बरकरार रखने पर जोर न देते।

वे वाद-विवाद वाले विषयों में अपनी बात पर दृढता-पूर्वक डटे रहते। हा, हठधर्मी से काम न लेते। उनकी विशिष्ट विशेषताओं में व्यग और चोट से दूरी तथा कुछ विनोदपूर्ण स्वभाव का मिश्रण था। यह जानते हुए भी कि कुछ लोग शायद उनसे सहमत न होंगे, वे अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण या अपनी समीक्षा को बिना किसी सकोच के बयान कर देते थे और इससे उन्हें प्रसन्नता प्राप्त होती थी।

लेज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सुनरीन लीकर्क ने इन शब्दो में उनकी प्रशसा की—"प्रो साहनी बहुत ही सहनशील व्यक्ति थे। उनके तीव्र मस्तिष्क, सच्चाई और व्यक्तित्व मे मानवता की गहरी भावना से हमदर्दी उमड कर आती और दूसरो को अपना बना लेने का दम रखती थी। उनका साधारण व्यवहार और नम्रता उनकी सभ्यता की परिचायक थी।"

प्रो साहनी बडे मजबूत सिद्धान्तों के व्यक्ति थे। वे बहुत हाजिर जवाब थे और अपना मजाक स्वय उडा कर खूब प्रसन्न हुआ करते।

## आकर्षक व्यक्तित्त्व

बीरबल साहनी सदैव साफ-सुथरा खादी का पैजामा, सफेद शेरवानी और गाधी टोपी पहनते थे। उनके प्रसन्नचित्त व्यक्तित्व के कारण उनसे मिलने वाला प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित हो जाता था। सतोष, सन्तुष्टि, न्यायप्रियता शराफत और उदारता उनके व्यक्तित्व के महत्त्वपूर्ण अग थे। वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र मे सबसे प्रतिष्ठित पुरस्कार बीरबल साहनी गोल्ड मैडल देश के महान वनस्पति विशेषज्ञों को प्रदान किया जाता है। यह पुरस्कार उनके एक पुराने छात्र और मद्रास में वनस्पति विज्ञान की प्रयोगशाला के निदेशन प्रो बी एस सदासून के द्वारा जारी किया गया था। उन्होने प्रो साहनी की मृत्यु पर शोक व्यक्त करते हुए कहा था, "जब राष्ट्र में कुछ ताजगी आ रही थी तो ऐसे दौर में वनस्पति विज्ञान के एक विशेषज्ञ की मृत्यु हो गयी। मेरा विश्वास है कि भविष्य में प्रो साहनी जर्मनी की

एगलर, स्टरलीवरजर, गोयबलसाच्श और डी बेरी, फ्रास के गिलरमाण्ड और इग्लैण्ड के स्काटसिवार्ड और गोयर के साथ गिने जाएगे। क्योंकि विज्ञान के इन महान व्यक्तित्वों की भाति उनका दृष्टिकोण भी सच्चा, खरा और राष्ट्रीए बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय था।'' वास्तव में प्रो साहनी ने अपने पदचिन्ह अपने जमाने में ही नहीं छोडे बल्कि भूमि विज्ञान के क्षेत्र में वे लम्बी अवधि के लिए ऐसे चिन्ह छोडे गये।

भारत मे उन्होंने फासिल बजरहो और जीरादानों पर शोध की पहल की। यह विषय जेरियात कहलाता है। फासिल बजरहो में उनकी दिलचस्पी अधिकरत उनके शोध की बदौलत भारत में इसके वर्गीकरण की समस्या को हल करने की ओर उन्मुख रही और इससे मृदुल फासिल की पैदावार से भारत के अवास्तविक गैर फासिल पहाडियों के भौगोलिक सम्बन्धो के विश्लेषण में सहायता मिली। उन्होंने अपने शोध से यह सिद्ध किया कि असम तीसरे युग के मृदु वनस्पतियो से भरपूर था। उनकी बडी इच्छा थी कि नये भारत मे फासिल बजरहों और जीरादानो का एक अग्रणी भण्डार तैयार किया जाए जिसका प्रयोग फासिल पर शोध करने में तुलनात्मक अध्ययन के लिए हो सकेगा। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह सलाह दी कि भारत में कोयले के भण्डार मे रिश्ता स्थापित करने के लिए कोयले में मिलने वाले बजरहो और जीरादानों का बाकायदा एक तत्र स्थापित किया जाये।

जीरादानों और बजरहों की जो अहमियत उनके मस्तिष्क में थी, वह लखनऊ के रूकाजी वनस्पति की सस्था और देहरादून के तेल और प्राकृतिक गैस बनाने वाली सस्था के खुल जाने से स्पष्ट हो जाती है।

जुराविक राजमहल की वनस्पतियों के गोंडवाना पौधो पर शोध करने का सबसे अधिक शौक प्रो साहनी ने ही चुराया। ओल्डहीम मार्स और फेस्ट मीटल जैसे भू-विशेषज्ञो ने पहले की राजमहल पहाडियों के ऊपरी गोंडवानी की क्यारियों पर शोध का कार्य किया था। लेकिन अब साहनी के शोध के साथ एक नए दौर का आरम्भ हुआ। उन्होंने अधिकाशत अजीबोगरीब और दिलचस्प फासिल पौधों पर काम किया। उन्हें कुछ नई जातिया और दो नये वश खोज के माध्यम से प्राप्त हुए। उनके नाम है— एन्थोडिन्डरान और राजमहलिया। राजमहल जाति की सामग्री में छाप वाले और टूटे-फूटे—ये दोनों नमूने हाथ लगे। हा अधिकतर इस इलाके से मिली वनस्पतियों में टूटी-फूटी सामग्री का जोर रहा।

## अन्वेषण के लिए प्रसिद्ध

प्रो साहनी के भारत वापस लौटने पर वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में शोध सम्बन्धी कार्यों को बहुत बढावा मिला। वनस्पति विज्ञान और भूमि-विज्ञान दोनों के विशेषज्ञ होने की हैसियत से वे इस ढग के कार्यो को नये सिरे से प्रारम्भ करने के लिए पूर्णत योग्य व्यक्ति थे। अपने वैज्ञानिक जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में उन्होंने वनस्पतियों पर शोध-कार्य करने में भूमि सम्बन्धी विशेषताओं को अपने मस्तिष्क में अच्छी तरह बैठा लिया था और अन्त में वे भूमि-विशेषज्ञों को यह विश्वास दिलाने में सफल हुए कि वनस्पति-विज्ञान पर शोध से ऐसे द्विफलीय परिणाम प्राप्त हो सकते है।

प्रो साहनी ने वनस्पति वैज्ञानिको को भारत की पौधों वाली चट्टानों से सम्बन्धित नयी-नयी जानकारिया दीं और उन पर शोध कार्यों मे पहल भी की जिसकी ओर अबतक अन्य लोग ध्यान नहीं दे पा रहे थे। प्रयोगशालाओं के अतिरिक्त वे 'फील्ड' मे काम करना पसन्द करते थे। इस तरह उनका काम सिर्फ प्रयोगशाला तक ही सीमित न रहा। वे वनस्पतियो के लिए स्वय घूमते थे। खेवडा की नमक-शृखलाओं, बिहार की राजमहल पहाडियो और दक्षिण की इन्टर ट्राफिन प्लेटों मे उन्होने बहुत सैर की। वनस्पतियो के स्थानो पर वे अपने नोटबुक और कैमरे से लैस हो कर जाते। उनका मस्तिष्क बहुत रोशन था। 10 अप्रैल 1949 ई को आधी रात बीत चुकी थी जब बीरबल साहनी की मृत्यु हो गई। उस समय बीरबल साहनी अपने वैज्ञानिक कार्यो की बदौलत एक बुलद मुकाम प्राप्त कर चुके थे और उनके नाम की शोहरत प्राचीन वनस्पतियो के वैज्ञानिकों में विश्वभर मे फैल चुकी थी।

सितम्बर 1948 ई मे प्रो बीरबल साहनी अमेरिका के दौरे से भाषण देने के उपरान्त भारत वापस आए। यह अवसर था लखनऊ के निकट वनस्पति विज्ञान की एक सस्था की आधारशिला रखने का। उनका सुनहरा स्वप्न तो वास्तविकता मे बदल रहा था किंतु वे स्वय कुछ थकान का अनुभव कर रहे थे। इसीलिए उन्हे पूरी तरह आराम की सलाह दी गई इसके अतिरिक्त उन्हे यह भी परामर्श दिया गया कि वे निर्धारित काम को आगे बढाने की बजाय अपने स्वास्थ्य-सुधार के लिए अल्मोडा चले जाए। उधर प्रो साहनी इस बात पर अडे हुए थे कि वे लखनऊ मे ही रह कर अपना काम पूरा करेगे। कुछ यू लग रहा था कि शायद उन्हें अपने अन्तिम समय का आभास हो गया था। और यही हुआ कि काम की अधिकता और चिन्ता मे घिरे रहने के कारण उन्हे दिल का दौरा पड गया जो उनके लिए जानलेवा सिद्ध हुआ। यह मनहूस दिन भूतपूर्व प्रधानमन्त्री और उनके अभिन्न मित्र प जवाहर लाल नेहरू के हाथो प्राचीन वनस्पतियो की सस्था की इमारत की आधारशिला रखने के ठीक एक सप्ताह के बाद का है। प्रतिष्ठित लोगो की विशाल सख्या मे उपस्थिति मे तीन अप्रैल 1949 ई को इस सस्था की आधारशिला 53, यूनीवर्सिटी रोड, लखनऊ पर रखी गई। यह आधारशिला तीन फीट लम्बे, दो फीट चौडे त्रिकोण की शक्ल मे पच्चीकारी का एक नमूना था जिस पर विश्व भर से प्राचीन खुदाइयो से प्राप्त किए गये जानवरों की हड्डियो के विचित्र ढाचे नगों की भाति जड दिये गये थे। इसे बीरबल साहनी के निवास स्थान मे उनके नेतृत्व मे स्थापित किया गया। यह अजीब इत्तेफाक है कि प नेहरू ने भी कैम्ब्रिज में वनस्पति और भूमि-विज्ञान की शिक्षा प्राप्त की। वे प्रो बीरबल साहनी के लगभग समकालीन भी रहे। इत्तेफाक से दोनों महान हस्तियो का जन्मदिन 14 नवम्बर ही है।

यह प्रकृति की विडम्बना है जिस स्थान पर एक सप्ताह पूर्व खडे हो कर प्रो साहनी ने प्रारम्भिक भाषण दिया था, वही स्थान बाद में उनके जीवन की अन्तिम पड़ाव सिद्ध हुआ। उनके रिश्तेदारों, मित्रों शिष्यों और साथियों ने डबडबाई हुई आखों से उनके पार्थिव शरीर को आग लगते देखा। इस प्रकार एक बेचैन इसान जिसने 30 वर्षों से भी अधिक की अवधि में बडी मेहनत से विज्ञान की दुनिया को प्राचीन वनस्पतियो की एक परिकल्पना दी, आखिरकार सदैव की नींद सो गया।